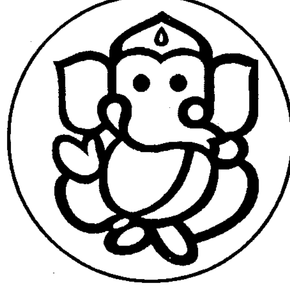
॥ श्री ॥

# श्रीसकलसंतवाणी

**॥ श्रीगणाधिपतये नमः ॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥**

श्रीगणपतीला नमस्कार असो, श्रीसरस्वतीला नमस्कार असो, श्रीगुरूंना नमस्कार असो,



## श्रीज्ञानेश्वरांची गाथा

### श्रीहरीच्या सगुणनिर्गुण रूपाचें वर्णन.

१. रूप पाहतां लोचनीं। सुख जालें वो साजणी॥ १ ॥ तो हा विठ्ठल बरवा। तो हा माधव बरवा॥ ध्रु० ॥ बहुता सकृतांची जोडी। म्हणुनि विठ्ठलीं आवडी॥ २॥ सर्व सुखाचें आगरु। बापरखुमादेविवरु॥ ३॥

२. चिदानंद रूप चेतवितें एक। एकपणें गुणागुणीं दावी अनेक॥ १॥ आदि अंतीं गुण सर्वत्र निर्गुण। गुणासी अगुण भासतीना॥ ध्रु० ॥ कैसें जालें अरुपीं गुणीं गुणवृत्ती। सगुण पाहतां अंतरलें गती॥ २॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु नंदनंदनु। आदिअंतु एकु पूर्ण सनातनु गे माये॥ ३॥

३. मन मुरडोनि डोळां लेइलें। काळेपणें मिरवलें रूप त्याचें॥ १॥ बरवें रूप काळें अमोलिक। म्हणोनियां सांगतसे शुद्ध भावें॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु अगाध काळें। म्हणोनि सर्वत्र अर्पियलें॥ २॥

४. हरपली सत्ता मुराली वासना। सांवळाचि नयना दिसतसे॥ १॥ काय करूं माय सांवळा श्रीकृष्ण। सांगितला प्रश्न निवृत्तीनें॥ ध्रु० ॥ बापरखुमादेविवरु सांवळीये तेज। सेजबाज निज कृष्ण सुखें॥ २॥

५. नवल देखिलें कृष्णरूपीं बिंब। सांवळी स्वयंभ मूर्ति हरिची॥ १॥ मन निवालें बिंबलें समाधान जालें। कृष्णरूपें बोधलें मन माझें॥ ध्रु० ॥ बापरखुमादेविवरु सांवळा सर्व घटीं। चित्तें चैतन्या मिठी घालिताखेवों॥ २॥

६. सुंदर सुरेख वोतिलें। परब्रह्म तेज फांकलें। तें व्योमीं व्योम सामावलें। नयनीं वो माय॥ १॥ कमळनयन सुमन फांकलें। त्या परिमळा आथिलें। मकरंदीं वो माय॥ ध्रु० ॥ संकोचला संसार। पारुषला व्यवहार। ब्रह्मानंद अपार। जहाला वो माय॥ २॥ मधुर वेदवाणी। न पवे ज्याच्या गुणीं। तें ठकावलें निर्वाणीं। नेति मुखें वो माय॥ ३॥ यापरतें बोलणें। न बोलणें होणें। तें म्यां आपुल्या अंगवणें। केलें वो माय॥ ४॥ ऐसियाते वोटी। लागलें तयाचे पाठी। रखुमादेविवरा भेटी। विठ्ठलीं वो माय॥ ५॥

७. मूळ ना डाळ शाखा ना पल्लव। तो हा कैसा देव आला घरीं॥ १॥ निर्गुणपणें उभा सगुणपणें शोभा। जिवाशिवा प्रभा दाविताहे॥ ध्रु० ॥ नकळे याची गती नकळे याची लीळा। आपिआप सोहळा भोगीतसे॥ २॥ ज्ञानदेव म्हणे न कळे याची थोरी। आपण चराचरीं नांदतसे॥ ३॥

८. निळिये मंडळीं। निळवर्ण सांवळी। तेथें वेधलिसे बाळी। ध्यानरूपा॥ १॥ वेधु वेधला निळा। पाहे घननीळा। विरहणीं केवळा। रंग

रसनें ॥ ध्रु० ॥ नीळवर्ण अंभ। नीळवर्ण स्वयंभ। वेधें वेधु न लभे। वैकुंठींचा ॥ २ ॥ ज्ञानदेव निळी। हृदयीं सांवळी। प्रेमरसें कल्लोळीं। बुडी देत ॥ ३ ॥

९. नीळवर्ण रज। नीळवर्ण बुझे। निळिमा सहजे। आकारली ॥ १ ॥ नीळ प्रभा दिसे। नीळपणें वसे। निळिये आकाश। हरपलें॥ ध्रु० ॥ निळेपण ठेलें। निळिये गोंविलें। निळपण सोंविळें। आम्हां जालें॥ २ ॥ ज्ञानदेवी निळा। परब्रह्मीं गोविला। कृष्णमूर्ति सांवळा। हृदयीं वसे ॥ ३ ॥

१०. निळिये पेरणी। निळिये वाहाणी। गुणाचीं लेणीं। कृष्णवर्ण ॥ १ ॥ नवलाव गे माय। नवलाव चोज। निळीं निळिमा काज। आकारलें॥ ध्रु० ॥ नीळवर्ण तनु। नीळवर्ण गुणू। निळिमा पूर्णू। हृदयीं नांदे॥ २ ॥ ज्ञानदेवीं लीला। मननीं निवाला। निळिये अवलीळा। हरपला ॥ ३ ॥

११. जरासंदुमल्लमर्दनु तो। गजपित्राहटणु तो गे बाई ॥ १ ॥ कुब्जकपान तो। सुदाम्या अनुसंधान तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। कंसचाणूर-मर्दन तो गे बाई॥ २ ॥

१२. ब्रह्मादिका आठकु तो। शिवध्यान ध्यानकु तो गे बाई॥ १ ॥ गौरीजाप्यसहस्त्रनामीं तो। पुण्यपावन त्रैलोक्य तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। सहजपूर्ण तो गे बाई॥ २ ॥

१३. सर्वादि सर्वसाक्षी तो। विश्वंभर खल्विद तो गे बाई॥ १ ॥ आनंदा आनंद तो। प्रबोधा प्रबोध तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। विटेवरी उभा तो गे बाई॥ २ ॥

१४. श्रुतिस्मृतिवचन तो। गुह्यागुह्य तो गे बाई॥ १ ॥ जागता निजता तो। निज चेवविता तो तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ परात्पर तो। रखुमादेविवरु तो गे बाई॥ २ ॥

१५. निजगुजा गूज तो। मोहना मोहन तो गे बाई॥ १ ॥ बोधा बोध बोधविता तो। द्वैता-द्वैत अद्वैत तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। सर्वादि सर्वेश्वरु तो गे बाई॥ २ ॥

१६. कांहीं नव्हे तो। अमूर्ता मूर्ति तो गे बाई॥ १ ॥ सहजा सहज तो। सहज सुखनिधान तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। पुंडलिकवरद तो गे बाई॥ २ ॥

१७. निज ब्रह्म ब्रह्म तो। ब्रह्मादिकां वंद्य तो गे बाई॥ १ ॥ अचिंतचिंतन तो। सारासार गुह्य तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ बाप रखुमादेविवरु विठ्ठलु तो। जनीं वनीं कृपाळु तो गे बाई॥ २ ॥

१८. सारंगधरु तो। चक्रा आधारु हरि तो गे बाई॥ १ ॥ सुलभा सुलभु तो। आटकु नटके तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। द्वैताद्वैतातीत तो गे बाई॥ २ ॥

१९. विश्व भुलवी योगमाया तो। गोकुळीं रहिवासु तो गे बाई॥१॥ वसुदेवकुमरु तो। देवकीनंदनु तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। शुकादिकां चिंतन तो गे बाई॥ २ ॥

२०. पैल गोल्हाटमंडळ तो। त्रिकुटा वेगळा तो गे बाई॥ १ ॥ सहजबोधीं अनुभव तो। परम तत्त्वीं अनुराग तो गे बाई॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु तो। ब्रह्म विटेवरी तो गे बाई॥ २ ॥

२१. विज्ञानाचें ज्ञान अज्ञानीं घनवट। ज्ञानें अज्ञान नीट लाविलें दिसें॥ १ ॥ मी तूं हे मात हरपले दृष्टांत। हृदयीं हृदयस्थ निजतेजें॥ ध्रु० ॥ साकार निराकार शून्याशून्य दिठा। रूपीं रूपवाटा हरि माझा॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरु हृदयस्थ घटीं। बिंबोनि उफराटी कळा दिसे॥ ३ ॥

२२. ज्ञानविज्ञान हरि। नांदे आमुच्या घरीं। बाह्यजु अभ्यंतरीं जाला देव॥ १ ॥ काय सांगूं माय। त्रिभुवन धाय। पाहातां न समाय। नाना रूपीं ॥ध्रु० ॥ चढत्या वाढत्या गोष्टी। प्रगट दिसे घटीं। नामरूपें वैकुंठीं। नेऊनि घाली रया॥ २ ॥ ज्ञानदेवा गोडी। हरिपदीं आवडी। प्रवृत्तीची थडी। उलंडिली ॥ ३ ॥

२३. सारसार दोन्ही। न दिसती नयनीं। अवचिता गगनीं। बिंबलासे॥ १ ॥ लोपले रविशशि। तेज न

माये आकाशीं। मेघःश्याम मेघाशीं। लपविलें॥ध्रु०॥ दिव्यरूप तेज। तीव्र ना तेजबीज। कुंडलि विराजे। लोपलें सूर्यो॥२॥ ज्ञानदेवा ध्यान। मनाचेंही मन। हरिचरण स्थान। दृढ केलें॥३॥

२४. स्वरूपीं पाहतां बिंबीं बिंब उमटे। तें मेघःश्याम दाटे बुंथि मनीं॥१॥ चित्त वित्त हरि जाला वो साजणी। अवचिता आंगणीं म्यां देखियला॥ध्रु०॥ सांवळा डोळसु चतुर्भुज रूपडें। दिसे चहूंकडे एक तत्त्व॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे द्वैत निरसूनि बाही। एका रूपें बाही तरशील॥३॥

२५. सांवळेचें तेज सांवळें बिंबलें। प्रेम तें घातलें हृदयघटीं॥१॥ निरालंब बाज निरालंब तेज। चित्तरस निज निजतेजें॥ध्रु०॥ आदिमध्यंअत राहिला अनंत। न दिसे द्वैताद्वैत आम्हां रया॥२॥ ज्ञानदेवीं सोय अवघाचि सामाय। सुखदुःख माय आम्हां नाहीं॥३॥

२६. एकांति बाळा। कीं सोहंसुखशयन वेळा। पाहे चरणकमळा। सुंदराचे॥ तेथें अरुण उदेला। कीं सुमन प्रगटला। कमळणी जाला। अंतरीं विकासु॥ तें चरण कमळकेवळ। भक्त आळिउळ। सेविती सकळ। योगिजन॥ तेणें तृप्त जालें। कीं हृदय वोसंडलें। म्हणोनि वाहावलें। ज्ञानडोहीं॥ तेचि ते परमानंद गे माय॥१॥ न संगवे माय। परा पारुषली। दोंदिल दृष्टी जाली देखणेंपणें॥ मनाचा अंकुर उगीच मुराला। तो कृष्णचि होऊन ठेला। अनुभविया॥ध्रु०॥ तये पदांध्रीचे रज। तेणें तृप्ति वो सहज। वरि त्रिवेणी ऊर्ध्व व्रज। मज पाहतां॥ ते तंव रेखा। वरि सखोल देखा। त्यावरी वोळले पीयूषपाणी॥ तयेचेनि मागें। उद्धरणें जगें। म्हणोनि संतसंगें। तया सोई॥ ते दोहीं भागीं। विस्तारलें जगीं। म्हणोनि तया भागीं। चरणांगुष्ठ॥ दृष्टीचा डोळा। न निवडेच बाळा। तेथें जाला एकवेळा। मुनिजनां गे माये॥२॥ तेथें बिंबलीं नखें। कीं विवळणी विशेखें। काळेपणाचेनि द्वेषें। वाहावलीं पुढां॥ उगमींच संचले। कीं वियोगें वाहावले। पुनरपि जडले। कृष्णपदीं॥ गंगा अंगुष्ठधार। कीं वांकिचा बडिवार। तेथें सप्तही स्वर। उमटताती॥ स्वरूपीं रमली। म्हणोनि अधोमुख जाली। शोभती घाघुरली। पायीं प्रभावळी गे माये॥३॥ तंव ते निजानंद भरितें। नेणती आणिकांतें। विसरली आपणातें। हास्यवदनें॥ म्हणती नेति नेति गर्जना। कीं माणिका खेवणा। घोट्या अनुमाना। बाळसूर्यो। पोटरिया निवाळा। कीं उभलिया सरळा। जानुद्वय सोज्वळा। उच्चस्तंभ॥ उंच युगळ कटीं। माज सामावे मुष्टीं। सोहं समदृष्टी। दोहीं भांगीं गे माये॥४॥ वरि वेढिला पिंवळा। कीं मिरवे सोनसळा। कीं कल्पतरु फुलेला। नाभिस्थानीं॥ तेथें वेधु गोपिबाळा। कीं अंतरीं सांवळा। पालवी मेखळा। अभिळाखिया॥ तेथें मदनु गूढपणें। रतिशये रमणे। दुजे अनुभउ अनुभवणें। न निवडे केंही॥ सखोल नभमंडळ। तै ब्रह्मस्थान केवळ। कैसे पाहाले विवळ। तेथें जगामाजी गे माये॥५॥ रोमराजवेळा। कीं वेणी एकवळा। दावि निराळा। उदरामध्यें॥ हृदय निर्मळ। तेथें ध्येय ध्यान केवळ। वरि चरणकमळ। द्विजोत्तम॥ वैजयंति माळा। शोभतसे गळां। उभलेनि वक्षस्थळा। उभारली॥ सरळ बाहुदंड। न कळे कानवड। अंगोळिया धडफुड। खुणा दावितो गे माये॥६॥ ऐसा खुणा दावितसे एका। तंव दावी अनेका। अंगोळिया देखा। दशावतावरी॥ नखाची मंडणी। तेथें तेज तारांगणी। होत असे प्रवणी॥ त्रिमिर द्वैत॥ शुक्लपक्ष। कीं अंतरीं लक्ष। सारुनियां साक्ष। दृशादिसर्वीं॥ एकाएकीं संचरे कीं माजि घरीं दुसरे। स्वयें एकसरे। नवल चोज गे माये॥७॥ तेथ सानुसानु स्वर। दोहिलें अंबर। हास्यवदन सुंदर। पावया छंदें॥ निमासुरा नेटका। न कळे ब्रह्मादिका। वेधुनि गोपिका। मोहियलें जग॥ समदृष्टी नासापुटीं। नेत्रद्वय निघाले भेटी। रविशशि कोटी। लोपले तेथें॥ मना मारुनि मेळा। कीं कुंडलें शोभे किळा। तेथें जाला एकवळा। योगिजना गे माये॥८॥ व्योमींचा मणीं। तया तळीं सहस्त्रफणी।

तो लाधला निर्वाणी। आराधितां॥ शेष वर्णिता श्रमला। ह्मणोनि शरण आला। शयन होऊनि ठेला। तया तळीं॥ ऐसी सुमन सेजा। कीं मवाळपण बरविया वोजा। तेथें रातली रमा भाजा। न निवडे केंही॥ ऐसा झाला एकवळा। शेष म्हणे दैव आलें फळा। आतां पाहेल सुनीळा। कायें सेज माजी॥९॥ ऐसयाचें ध्यान। जरि हें न करी मन। तरीच पतन। जन्ममरण॥ चिंता साठीं फेडी। कीं उभारूनियां गुढी। स्वयें सुखाचिया आवडी। कां सांडितासी॥ आतां करूं पाहे ध्यान। तरि सहजेंचि उन्मन। म्हणोनि समाधान। होय जीवा॥ तीर्थ व्रत तप दान। जरी न करी हें मन। तरि सहजचि साधन। गोपिनाथु॥१०॥ तीर्था जातां सायासी। तूं काय एक देसि। म्हणोनि स्तविलासी। बहुतांपरी॥ तंव परापश्यंती मध्यमावैखरी। या युक्तिनो बोलवेसी॥ निवृति म्हणे लीळा। विश्वव्यापक निराळा। पाहे उघडा डोळां परब्रह्म॥ ज्ञानदेवा मीपणीं। निवृत्ति ऐक्य चरणीं। सरो दुजेपणीं। हांव जीवा॥११॥

२७. मनाचा भाव माझा खुंटला हरिध्यानें। अवघेंचि येणें मनें काळापिवन केलें॥१॥ लघु म्हणो तरी सूक्ष्महीं नव्हे। सूक्ष्म ह्मणो तरि अगाधही नव्हे॥ या काळियाची जाली गे माये॥ध्रु०॥ बाप रखुमादेविवरु सुनीळ नीळकाळा। अवघ्या सहित गोपाळा बुडी दिधली गे माये॥२॥

२८. नभ नभाचेनि सळें। क्षोभु वाहिजे कालिंदी जळें। सासिंनले जगाचे डोळे। तें रूप पाहावया। भलतैसी हांव। मना न पुरे तेथींची धांव। लावण्यसिंधु सिंव सांडूनि जातो गे माये॥१॥ सुलभ परमात्मा गे माये। मन मुरोनि देखणेपणा उरी। याचि कारणें उभा भिवरेतीरीं। अनुपम्य जयाची थोरी गे माये॥ध्रु०॥ कालिंदीजळाचा भोंवरा। कीं माजी वेढूनि इंदीवरा। माळ बांधोनियां मधुकरा। रोमांमाजी॥२॥ सकल सिद्धींचा मेळा। तेंवि विभूति शोभे भाळा। मुगुटीं रत्नकिळा। लिंग अनुपम्य गे माये॥३॥ क्षीरसागरींचें। निवांत सुख। असो हें निमासुरें मुख। श्रीयेचें मनोहर देख। टवकारलें दोंभागीं॥ पहावया ऊरूंचीं शोभा। सकळ देवाची प्रभा। तेथें तारांगणें कैंचीं नभा। लेइला गे माये॥४॥ कटावरी ठेवूनि हात। जनां दावी संकेत। भवजलाब्धीचा अंत। इतुलाची॥ सम चरणींच्या खुणा। उभा पंढरीचा राणा। तो आवडे जनांमना। दुर्लभ गे माये॥५॥ कैवल्याचा गाभा। कीं ब्रह्मविद्येचा वालभा। निकटपणाचिया लोभा। कैसा उभा असे॥ देवा पायींची वीट। तेचि माये नीट। वरि येऊनि भीमातट। वोळग दावी गे माये॥६॥ नेति नेतिचेनि बिरारें। उभऊनि श्रीकरारें। श्रृंगाराचेनि पडिभरें। चराचरें वोळगती॥ हा मेखळेचा मध्यमणी। उदो केला ग्रहगणीं। मध्य नायकु तरणी किरणीं। विरजितु गे माये॥७॥ आमुची हृदयींची श्रीमूर्ति। घेऊनि विठ्ठलवेषाची बुंथी। आतां चाळविसी किती। बापा पालटु नेघे॥ बाप रखुमादेविवरा विठ्ठला। त्वां मजशीं अबोला कां धरिला। जीवीं जीव आहे उरला। तो निघों पाहे॥८॥

२९. वेद प्रमाण करावया गोकुळासि आला। कीं नाटळिचा कुवांसा जाला। ब्रह्म आणि गोवळा। ब्रह्मादिका वंद्यु ऐसा निगमु। पैं लाजविला॥ गणिका स्वीकारि राहो मांडला। कीं दशरथ पतनीं चुकविला। एका तें म्हणे जागा। एका तें म्हणेरे निजा। तैं मुचूकुंदापें काळयवनु आणिला रया॥१॥ विरोचनसुत। बळी बांधोनि जेणें। निगड निबद्ध गजा सोडविलें। एकाचीं बालकें काळापासूनियां हिरे। एका बाळाचे बाप विदारिले। शिशुपाळा जैत देऊनियां शेखिं पाहेपां आपणचि जिंकीलें रया॥ध्रु०॥ गुरुदुर्वास याचिये भक्ति आणि त्याचियेचि रथीं देविरुक्मिणीसहित खांदु चालविला। तो तेणें मानें फुंदो पाहे तंव कोलतिया भेणें त्रैलोक्य हिंडविला। पैजा सारूनि हातीं सुदर्शन वसविलें कीं भीष्मपण। साचू केला। जितुकाचि कौरवा तितुकाचि पांडवां

अचोज हा अमुलारया॥२॥ जमदग्नी जनकाचा वोल भूमीं न पडावा। हाठावो वरि पितृभक्तीची आवडी। जेणें साचपणा कारणें माता वधिली। कीं पुराणें खोचिलीं तोंडीं॥ असुरदैत्य संहारितां बापु तयांची पातकें दवडी। प्रजासि रायाची आण रायासी कवण नेमु हे तों संततपणाची प्रौढी रया॥३॥ या परि चराचरींचे दानव गिंवसूनि पुसिले परोपरी। तंव यादवांसि अंबुलेपणची आस जाली थोरी। प्रभास क्षेत्रीं अवधियातें केली एकसरी। देवकी पुतना नोळखिजे। वैर भक्तीसी एकिची वोवरी। पवनु काय हा पंथु शोधूनियां चाले समर्थु करिल तें उजरि रया॥४॥ या गोविंदाची माव। हे तों ब्रह्मदिकांसि कुवाडें। तो हा मायेचेनि साचपणें न घेपवे। प्रकृतीचे गुण ते याचिये गांवीचे। तो करील तें अनुचित बरवें॥ लाघावियाचे भ्रमु लाघवीच जाणे यांसि कांही नवल नव्हे। बाप रखुमादेविवरु जाणीतला तरि उकलेल आघवें रया॥५॥

३०. निळें हें व्योम निळें हें सप्रेम। निळेपणें सम आकारलें॥१॥ नीळवर्ण ब्रह्म नीळवर्ण कर्म। नीळवर्ण आश्रम गुरु देखे॥ध्रु०॥ निळेपणें वर्तो नीळेपणें खातों। निळपण पाहातो निळे पणें॥२॥ ज्ञानदेव आला नीळवर्ण शाळा। निळे पण गोंवळा रातलीये॥३॥

३१. सांवळियाचें तेज सांवळा श्रीहरि। शेज बाज वोवरी ब्रह्मांडाची ॥१॥ गृहदारा दिनमणि तेज देऊनि मेदिनी। मेरू प्रदक्षणि आप होय॥ध्रु०॥ ऐसा हा सांवळा सतेज साजणी। म्यां आपुल्या आंगणी देखीयला॥२॥ ज्ञानदेवा साजण सांवळिये प्रभेचें। मी माझें मोहाचें हरिरूप॥३॥

३२. पैल सुखाचेनि माये सुकाळु। नवल पाहिजे हो गोपाळु। म्हणोनि योगयाग तप साधन। व्रत दान उद्यापन। पंचाग्नि गोरांजन अनुष्ठान। परि पद निर्वाण नकळे हें॥१॥ तुझ्या नामाचेनि आनंदें। गातांवातां जोडसी विनोदें रया॥ध्रु०॥ या गोंवळेनि जग। न दिसे जगपण भाग। पाहेपां सकळीं योग। तुझा तूंचि॥२॥ अर्थुनि पाहे दृष्टि। तंव तुझ्यापायीं पडे मिठी। आवडी नोसंडी गांठी। तुझिया पायाची॥३॥ आतां जरि निरुतें। तूंचि आत्मा तूंतें। सुखी सुखाचेनि निजप्राप्ति रया॥४॥ तुझें स्वरूप अदृश्य। तो मुनिमानसींचा प्रकाश। इंदु तूं पूर्णांश। चैतन्यघन॥५॥ बाप रखुमादेविवरा विठ्ठला पाहतां उघडा डोळा। दाविलें निधान रया॥६॥

३३. सुनीळ गगना पालटु। तैसा दिसे अंगीं नटु। कृष्णीं बाणलासे नीळवर्णु गे माये॥१॥ यमुनेच्या पाबळीं। तनु घेउनि सांवळि। पावा वनमाळी वाजतु आसे॥ध्रु०॥ पांवयाचेनि नादें। कृष्णाचेनि वेधें अमृतघनु वोळला। आकाश वोळुनि वर्षाव झाला ब्रह्मरसपूर आलारे॥२॥ कान्हा अति सुंदर वदनारविंद आळी सेविती अनिवाररे आयो॥३॥ चंदनादिटिळकुलल्लाटीं जया साजे मोर विसावेटी रेआयो। सुरतरु कुसुमें कबरीं भारुरे कुंडलें झळकति कपोळीं रे आयो॥४॥ बाप रखुमादेविवरु विठ्ठलुरे। त्रिभुवनजनमोहन रे आयो॥५॥

३४. लाउनि मनगणीची दोरी विपरीत तयाची कुसरी। अकळून न कळे श्रीहरी। अवघे वोडंबर तुझें॥१॥ अष्टदळकमळाची वोवरी। विपरीत तयाची कुसरी। एकविस खणांचे उपरी। बाहीजु कां हरी दाखविली॥ध्रु०॥ तेथ रात्र दिवस नेणिजे। सोहं प्रकाश सहजे। नाचविसी पंचभूतें वोजे। कवतुक तुझें तूं पाहसी॥२॥ भानु निसियेचा कुवासा। येक राहिले याचिये आशा॥ येक ह्मणति अढळ धुरु कैसा। तयाचा भरंवसा त्यासिं नाही॥३॥ ऐसीं तयाचीं बोलणीं। अंगीं राहिलीं खेळणीं। साही पावटणी करूनि। सातावरि घातु मांडिला॥४॥ करीं घेऊनि आळवणी। करू नेणें वोवाळणी। बाप रखुमादेविवरा विठ्ठला चरणीं। चौघी जणी निमालिया॥५॥

३५.त्रिभंगी देहुडा ठाण मांडुनिया माये। कल्पद्रुमातळीं वेणु वाजवित आहे॥१॥ गोविंदु वो माये गोपाळु वो। सबाह्य अभ्यंतरीं अवघा परमनंदुवो॥ध्रु०॥ सांवळे सगुण सकळा जिवांचें जीवन। घनानंद मूर्ति पाहतां हारपलें मन॥२॥ शून्य स्थावर जंगम व्यापूनि राहिला अकळ। बाप रखुमादेविवरु विठ्ठलु सकळ॥३॥

३६. तुरे कांबळा डांगेवरी विषाण वेणु घेऊनि करीं। वैजंयति रुळे कैशी वक्षस्थळावरी॥१॥ गोविंदु वो पैल गोपाळु माये। सुरतरु तळवटीं देखे कैसा उभा राहे॥ध्रु०॥ आडत्रिपुंड्र शोभत दूमिळ भारेंसि जे जात। नागर केशरिचीं पुष्पें कैसा खोप मिरवत॥२॥ हिरिया ऐशा दंतपंक्ति अधर पोंवळ वेली। श्रवणीं कुंडलें ब्रह्म रसाचीं वोतलीं॥३॥ विश्वाचें जीवन तें म्यां सार देखियलें। योगी ध्याती ध्यानीं ब्रह्म तेंचि गोकुळासि आलें॥४॥ आजि धन्य धन्य जालें राया कृष्णासि देखिलें। निवृत्तिमुनिरायप्रसादें ध्यान तें हृदयासि आलें॥५॥

३७. बरवा वो हरि बरवा वो। गोविंद गोपाळ गुण गरुवा वो॥१॥ सावळा वो हरि सावळा वो। मदनमोहन कान्हो गोवळा वो॥ध्रु०॥ पाहतां वो हरि पाहतां वो। ध्यान लागलें या चित्ता वो॥२॥ पढिये वो हरि पढिये वो। बाप रखुमादेविवरु घडिये वो॥३॥

३८.आतसिकुसुमकोशशामघनु। तुळशी-वृंदावनामाजी मुनीमनोपद्मदळविशाळजिरे आयो॥ध्रु०॥ जलधीशयन कमलालयाजीवनु। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु घनानंदमूर्ति॥१॥

३९. चतुरपणें चतुराननु पैं भागला। शिवुपणें शिवरूपु पैं जाहला॥१॥ हरिपणें हरि अंग रिघाला। या तिहींचा मेळा न दिसे गे माये॥ध्रुव॥ रखुमादेविवरु तिहीं गुणां वेगळा। शक्ति नव्हे दादुला गे माये॥२॥

४०. तुज सगुण म्हणों कीं निर्गुणरे। सगुण निर्गुण एकु गोविंदुरे॥१॥ अनुमाने ना अनुमाने ना। श्रुति नेति नेति म्हणती गोविंदु रे॥ध्रु०॥ तुज स्थूळ म्हणों कीं सूक्ष्म रे। स्थूलसूक्ष्म एक गोविंदुरे॥२॥ तुज आकार म्हाणों की निराकररे। साकारु निरुकारु एकु गोविंदुरे॥३॥ तुज दृश्य म्हणों कीं अदृश्यरे। दृश्यअदृश्य एकु गोविंदुरे॥४॥ निवृत्तिप्रसाद ज्ञानदेव बोले। बाप रखुमादेविवरु विठ्ठलुरे॥५॥

४१. चंचळ चांदिणें सोमविणें भासलें। तेज निमालें रविबिंबेंविणें॥१॥ जगत्रजीवनु ह्मणे जगासी कारण। तें अणुप्रमाण तेथे दिसे॥२॥ बापरखुमा-देविवरु अणुप्रमाण भासला। सगुण निर्गुण जाला बाईये वो॥३॥

४२. दोन्ही बाहीं संतांची सभा। सिंहासनी उभा श्रीविठ्ठल॥१॥ गाती नारद तुंबर प्रेमें। हरीचें नाम गर्जती॥२॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु उभा। त्रैलोक्याची शोभा शोभतसे॥२॥

४३. ऐसा अवतार नरहरिस्तंभामाझारी। भक्तांपरोपरी धरी रूपें॥१॥ धरुनिया महीत्व झाला नृसिंहरूप। वेदशास्त्रांसी अमूर्त मूर्तीस आला॥२॥ बापरखुमादेविवरु नरहरी अवतारु। वर्ण सारङ्गधरु निजरूप॥३॥

४४. स्वर्ग जयाची साळोंखा। समुद्र पाळी पिंड देखा। शेषासरिखी बैसका। जो आधार तिही लोकीं॥१॥ लिंग देखिलें देखिलें। त्रिभुवनीं विस्तारलें॥२॥ मेघधारीं तपन केलें। तारापुष्पीं वरी पूजिलें। चंद्रफळ ज्या वाहिलें। वोवाळिलें रविदीपें॥३॥ आत्मनैवेद्य समर्पिलें। ब्रह्मानंद मग वंदिलें। ज्योतिर्लिंग मग ध्याईलें। ज्ञानदेवीं हृदयीं॥४॥

४५. देव आहे जैसा तैसा नेणवे सहसा। भांबावला कैसा विश्वजनु॥ तया रूप ना रेखा लय ना लक्षण। ते प्रतिमें आणून वासना रूपें॥१॥ देखा सर्वगत निराळा अद्वैत। तया मूर्तिमंत ध्याय जनु॥ तिहीं देवासि आरु जेथुनि विस्तारु। तो ध्वनि ओंकारु त्या आरु। आतां तो नाद ना बिंदु काळा ना छंदु। अक्षय परमानंदु सदोदितु॥२॥ अवतरे तैसाच नव्हे होय तें न संभवे। आहे तें आघवें

लाघव रया ॥ तो येकट एकला रचला न वेचला। आदिअंतीं संचला अनंतपणें ॥ पृथ्वी आप तेज वायु आकाश। हीं सकळही हारपती प्रळयांती ॥ तो निरशून्य निरुपम निरंजन निर्वाण। ते दशा पाषाण केंवि पावती ॥ ३ ॥ पाहातां या डोळां परि न दिसे कांहीं केल्या। व्यापुनियां ठेला बाहिजु भीतरि ॥ तो पदपिंडा अतीतु भवभावरहितु। बापरखुमादेविवर विठ्ठलु हृदयांतु रया ॥ ४ ॥

४६. मन मारुनि डोळां लेईलें। काळेपणें मिरवलें रूप त्यांचें ॥ १ ॥ बरवें हें रूप काळें अमोलिक। म्हणोनि सांग जें शुद्धभावें ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु अगाध काळें रूप। म्हणोनि सर्वत्र व्योम व्यापियेलें ॥ ३ ॥

४७. काळेपणाचा आवो अंबरीं बाणला। तो एकु दादुला देखिला डोळां ॥ १ ॥ काळें मनुष्य मानव जालें। अरूप रूपा आलें गोविंदपणें ॥ ध्रु० ॥ रखुमादेविवरु विठ्ठलु सोहंधरु। त्यानें माझा वेव्हारु बहु काळें नेलागे माये ॥ २ ॥

४८. ज्याचें गुणनाम आठवितां मनचि नाहीं होय। अनुभवाचे पाय पुढें चालती ॥ १ ॥ निर्गुणगे माय गुणवंत जाला। प्रतिबिंबीं बिंबतसे चैतन्याचें मुसे। प्रति ठसावत तें वृंदावनीं ब्रह्म असेगे माये ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरु डोळसु सावळा। द्वैत अद्वैत सोहळा भोगविगे माये ॥ ३ ॥

४९. निळिये रजनी वाहे मोतिया सारणी। निळेपणें खाणीं सांपडली ॥ १ ॥ आंगणीं चिंतामणि जळधरु सिंपणी। अमृतसाजणी जीवनकळा ॥ २ ॥ सुमनाचे शेजे विरहिणी विराजे। शयनीं सुलजे आरळ सेज ॥ ३ ॥ माजयानें हटीं मुखकमळ टेंकी। निळिये अवलोकी कृष्णमूर्ति ॥ ४ ॥ कमळणी आमोद सुस्वाद मकरंद। चंदनाची अभेद उटी अंगीं ॥ ५ ॥ कर्पूरपरिमळें दिव्य खाद्य फळें। ठेऊनि सोज्वळें वाट पाहे ॥ ६ ॥ मन तो निळिये गोविंदाचिये सोसे। विरहिणी पाहे वाटुलि ऐसी ॥ ७ ॥ ज्ञानदेवी निळिये वाटुली गोविंदीं। कृष्ण निळिये पदीं ठाव जाला ॥ ८ ॥

५०. राम बरवा कृष्ण बरवा। सुंदर बरवा बाइयांनो ॥ १ ॥ केशव बरवा माधव बरवा। गोपाळ बरवा बाइयांनों ॥ २ ॥ बाप रखुमादेविवरु त्रिभुवनीं गरुवा। विठ्ठलु बरवा बाइयांनो ॥ ३ ॥

५१. साती बारी दोन्ही आपणचि होऊनि। सुरतरु माझारी वोळगे ॥ तळीं त्रिभंगी मांडूनि ठाण घेऊनि मेघाचें मान। विजु एकी वेढुन बरवे गर्जतुगे माये ॥ १ ॥ नवलावोगे माये न्याहाळितां कैसे मनाचे नयन उमलताती ॥ तीही एक दृष्टि जिव्हा लाभती तरी। सुलभु देखतां बोलतीगे माये ॥ ध्रु० ॥ पाहो याचे पाय। शंभूचिया माथां माये। सासिन्नली चंद्रदाहें गंगेतें ॥ तेथ असुराची शिरें। येथे सकळ शरीरें। तोडराचेनि बडिवारें। बरीजतुगे माये ॥ २ ॥ तेज सांवळें। रूप लाधलें परिमळें। अनंगाचेनि सळें। कासीं कासियेला ॥ तो पालउ पांढर गळे। होतुकां जगाचे डोळे। दुरूनियां सुनिळें। रोविलेंगे माये ॥ ३ ॥ उपनिषदाचा गाभा। माजी सौंदर्याची शोभा। मांडिला दोखांबा। तैसा दिसे देखा ॥ वेगळालिया कुंभस्थळा। परि हातु सरळा। पालटु बांधला माळा। मेखळा मिसेंगे माये ॥ ४ ॥ भलतेउते वाहे न वाहे नदी। जेंवीं स्थिरावे अगाधीं। तैसी पुंजालता हे मंदी। दोही वेदांची ॥ वरिलिया वक्षस्थळा। नुपुरे स्थानीचा डोळा। मागून निघे कमळा। नव्हे रोमराजी ॥ ५ ॥ लावण्य उदधी वेळा। तेंचि पै वैजयंती माळा। वरी शोभतसे सोहळा। साहकारवेचा ॥ म्हणे प्रेम पुष्कळा। थडिये लाभे सकळा। नयनसुखाच्या सुकाळा। जग मेळवितुगे माये ॥ ६ ॥ भोंवतीं तारागणें पुंजु। मांजी अचळ सुरिजु। आला वक्षस्थळा उजु। तैसा दिसे देखा ॥ जेवणे न अंगें। उभऊनि श्रीकरायोगें। योगनादातटी रंगे। नभु दुमदुमितवो माये ॥ ७ ॥ इंद्रधनुष्य काढिलें। तया तळीं बहुडलें। तेचि कुरुळीं वेढिलें। समाधिसुख देखा ॥ आवारीचा गुणु। श्रुतीगर्भी समवर्णु। दोहीं स्वरीं

गोडी वेणु। जग निववीतुवो माये॥८॥ या वेधितां कांहींच नुरे। रूपा आले हेंचि खरें। वरी दाविता हे माजिरें। गोपवेशाचें॥ तमावरी हातियारे। रविकाज काईयेरे। तैसा रखुमादेविवरें। विरें घेतलेंगे माये॥९॥

५२. मदनमूर्तिं विश्वीं अळंकारिली। ते डोळ्यां असुमाय जाली। पाहतां मनाची वृत्ति नुपुरे तेथिची सोय। तेथें भरोनि वोसंडिली गे माये॥१॥ अभिनव रूप कैसें मना अगोचर अरूप रूपासि आलें। तें हें कल्पद्रुमातळीं ठाण मांडूनि देहुडें। तेणें आनंदघनें निवविलेंगे माये॥ध्रु०॥ चिदानंदाची मांदुस किंचिद्घन चिदाकाश। तेजः पुंज प्रकाश चरणीं शोभा॥ निडारलें दृष्टि पाहतां रूपाचा एकवळा। कैसा साकारे सोहळा भोगीतसे गे माये॥२॥ सकळ तीर्थ अर्तिलीं। तीं ऋषिवृंदें घेऊनि बैसलीं। पावन झालीं। चरणांगुष्ठीं॥ वाकी तोडरु गजरीं। गर्जतुसे नानापरी तो श्रुतिनादु अंबरीं। सांठवलागे माये॥३॥ उपनिषदाचा गाभा। परी देहुडा पाउलीं उभा। जानुजघनींच्या प्रभा। नभ धवळलें॥ सुरंग सोनसळा। वरी वेढिला पिंवळा। त्यावरी गाठियला मेखळा। रत्नखचितगे माये॥४॥ हा जगडंबरु जगदाभासु। कीं ठसावला आभासु। नाभिकमळीं प्रकाशु। चतुरानना॥ पाहता तेथींची हाव। मना न पुरे तेथींची थाव। म्हणउनि सगुण ध्यान। करी तुझेगे माये॥५॥ ब्रह्मांडाचिया कोडी। रोमरंध्रीं उतरंडी। मदन सांडुनिया प्रौढी। उदरा आला॥ सुघटित वक्षस्थळ। निरोपम केवळ। वरी पदयुगुळ। द्विजोत्तमगे माये॥६॥ चहूं पुरुषार्थांचें साधन। तोचि आयुधें मंडन। बाहीं बाहुवटे मंडन। मंडना आलें॥ वीर कंकण मनगटीं। कांडोवांडीं मुद्रा दाटी। कैसा अलोहित नखें बोटीं। वेणु वाहे वो माये॥७॥ ब्रह्म ऐसें धेनु आतला। कीं सुधारसु मुराला। तोचि नादु सुस्वर आला। पावया छंदें॥ अधरीचें अमृत। पिकलेंसे ब्रह्मरस। तेणें जाला सौरसु। गोपिजनागे माये॥८॥ नयनींचे तारे। दो पक्षीं प्रेम पुरे। द्वैताद्वैत एकसरें। ठकलें ठेलें॥ कुंडलाचिये दीप्ती। लोपला गभस्ती। सुखस्वरूपाची शांति। येणे सुखेंगे माये॥९॥ आतां पाहतां पाहतया दृष्टी नपुरे। ध्यातां मनचि नुरे। आंत बाहेरी पुरे। व्यपूनि ठेला॥ मावळलिया दृष्टि पाहातां देखणें ठसावलें। निर्गुण गुणासि आलें। सदोदित गे माये॥१०॥ आतां हा केंवि पाहावा। पाहातयेचि दृष्टि। मन मनेंचि दिधली मिठी। तेथील ते गोडी रूपासी आली॥ म्हणती निवृत्ति। ज्ञानदेवा पाहे चित्तीं। आतां जागृतीच्या अंती। सुखशातिं रया॥११॥

## पंढरीमाहात्म्य.

५३. आनंदाच्या ताटीं अमृताची वाटी। विवेकतारूं घोटी रसनाबळें॥१॥ तें हें रूपडें रूपस विठ्ठल। पुंडलिकें बहु साल प्रार्थियलें॥ध्रु०॥ तारावया जन व्हावया पावन। जड मूढ अज्ञान हरीपाठें॥२॥ कर्म धर्म करितां शिणली येतां जातां। मग पुंडलिकें अनंता प्रर्थियलें॥३॥ येउनिया श्रीहरी भीमेच्या तीरीं। सुदर्शनावरी पंढरी उभाविली॥४॥ अमरतरुवर तीर्थ सरोवर। वेणुनादीं श्रीधर खेळताती॥५॥ बागडे गाती हरि वाकुल्या कुसरी। तेथें पुंडलिक परोपरी स्तवन करी॥६॥ धन्य पंढरीनगरी फावली चराचरीं। धन्य जो भूमीवरी दृष्टीभरी हरी देखे॥७॥ ज्ञानदेवा बीज विठ्ठल केशीराज। नव्हे ते नवल चोज प्रत्यक्ष हरी॥८॥

५४. अवघाचि संसार सुखाचा करीन। आनंदें भरीन तिन्हीं लोक॥१॥ जाईन गे माय तया पंढरपुरा। भेटेन माहेरा आपुलिया॥२॥ सर्व सुकृताचें फळ मी लाहीन। क्षेम मीं देईन पांडुरंगीं॥३॥ बापुरखुमादेवीवरु विठ्ठलेंसी भेटी। आपुले संवसाटी करूनि ठेला॥४॥

५६. न चलति शब्द खुंटले पै वाद। एक तत्त्व भेद नाहीं रूपा॥१॥ तें रूप पंढरीं भरलें चराचरीं। माझा माजी घरीं बिंबलेंसे॥२॥ रखुमादेविवरु पुंडलीकवरु। निळियेचा आगरु पंढरीये॥ ३॥

५७. दुजें द्वैत सांडी एक तत्व मांडी। अद्वैत ब्रह्मांडीं पै सुकीजे॥ १॥ तें रूप पंढरी पुंडलीका द्वारीं। मुक्ति मार्ग चारी वश्य रया। अनंतीं अनंत वोतलें संचीत। वैकुंठ अद्‌भुत उभें असे॥ २॥ ज्ञानदेवीं ध्यान मन मौन चरण। आपणची मग्न तेथें जाले॥ ३॥

५८. तत्वें तत्व धरी कोहंभाव होकारी। सोहं सोहं करी कोण सये॥ १॥ सोकरी पुंडलिकु ज्ञान पुण्यश्लोकु। विठ्ठलु त्रैलोकु उद्धरिले॥ २॥ सखी जाय तेथें भाव बळिवंत। प्रपंच देहांत नाहीं तुज॥ ३॥ ज्ञानदेव पुसे निवृत्ति सौरसें। पुंडलिकें कैसें पुण्य केलें॥ ४॥

५९. एकी म्हणे भाव धरूं नेदी मौन। तेथींचे वो ज्ञान मज सांगे॥ १॥ एकीनें सांगितलें दुजीनें परिसलें। प्रपंचा पुसलें तेणें रूपें॥ २॥ तें घरटीं कडी सोकरी बागडी। सोहं कथा उघडी पंढ-रीये॥ ३॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्तीस मनें। नयनांसी पारणें देखतांची॥ ४॥

६०. पंढरीचे वाटे अनंत घडती याग। वैकुंठींचा मार्ग तेणें संगें॥ १॥ जपतप अनुष्ठान क्रिया कर्म धर्म। हें जाणताती वर्म संतजन॥ २॥ भक्तिमार्ग फुकटा आनंदाची पव्हे। लागलीसे सवे पुंडलीका॥ ३॥ दिंडी टाळ घोळ गरुडटकियाचे भार। वैष्णवांचे गजर जये नगरीं॥ ४॥ तिहीं लोकीं दुर्लभ अमर नेणती। होउनी पुढती सेविती॥ ५॥ सनकादिक मुनी ध्यानस्त पै सदा। ब्रह्मादिकां कदा न कळे महिमा॥ ६॥ ज्ञानदेव निवृत्ती पुसतसें कोडें। पुंडलिकें केवढें भाग्य केलें॥ ७॥

६१. माझे जिवींची आवडी। पंढरपुरा नेईन गुढी॥ १॥ पांडुरंगीं मन रंगलें। गोविंदाचे गुणीं वेधलें॥ २॥ जागृति स्वप्न सुषुप्ति नाठवे। पाहतां रूप आनंदीं आनंद साठवे॥ ३॥ बापरखुमादेविवर सगुण निर्गुण। रूप विटेवरी दाविली खुण॥ ४॥

६२. कल्पना वृक्षासी देखिलें। चिंतामणीस चिंतिलें। कामधेनुसी आपेक्षिलें। जीण्या जिवविलें तेंचि हरिरूप पंढरिये॥ १॥ धन्य कुळ धन्य जन्म। जयासि पंढरीचा नेम। चित्तीं अखंड विठ्ठल प्रेम। ते धन्य भक्त भूमंडळीं॥ ध्रु०॥ तोचि तीर्थरूप सदा। तया दोष न बाधिती कदां। जो रातला परमानंदा। तेथें सर्व सिद्धी वोळंगती॥ २॥ ऐशीं वेदशास्त्रीं पुराणीं। जो रातला नामस्मरणीं। धन्य तया तीर्थ पर्वणी। धन्य वाणी तयाची॥ ३॥ पंढरीसी कीर्तन करी। पुंडलिकासी नमस्कारी। विठ्ठल चरण अंतरीं धरी। धन्य जन्म तयाचा॥ ४॥ सकळ कुळाचा तारकु। तोचि जाणावा पुण्यश्लोकु। पांडुरंगीं रंगला निशंकु। धन्य जन्म तयाचा॥ ५॥ त्यासी अंतीं वैकुंठप्राप्ती। ऐसें शुकें सांगितलें परीक्षिती। जे जे हरिचरणीं भजती। ते ते पावती वैकुंठ॥ ६॥ मानें स्फुंदत नाचत रंगणीं। प्रेम विठ्ठल चरणीं। सर्व सुख खाणी। बाप रखुमादेवीवर विठ्ठल॥ ७॥

६३. वाजतसे बोंब कोण्ही नायकती कानीं। हरि हरि न म्हणती तयांसी थोर जाली हानी॥ १॥ उठा उठा जागा पाठीं भय आलें मोठें। पंढरिवांचुनी दुजा ठाव नाहीं कोठें॥ ध्रु०॥ तापत्रयाग्नीचा लागला वोणवा। कवण रिघे आड कवण करी सावाधावा॥ २॥ देखोनि ऐकोनि एक बहिर अंध जाले। विषयाचे लंपट बांधोनि यमपुरीस नेले॥ ३॥ आजा मेला पणजा मेला बाप मसणा नेला। देखत देखत नातु पणतु तोही वेडा जाला॥ ४॥ व्याघ्र लासी भूतें हीं लागताती पाठीं। हरिभजन न करितां सगळें घालूं पाहे पोटीं॥ ५॥ संतसंग धरा तुम्ही हरिभजन करा। पाठीं लागलासे काळ दांत खातो करकरां॥ ६॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला शरण। भावे न निघतां न चुके जन्ममरण॥ ७॥

६४. हें नव्हे आजिकालिचें। युगां अठ्ठाविसांचें। मज निर्धारितां साचें। हा मृत्युलोकुचि नव्हे॥ हाचि मानिरे निर्द्धारु। येर सांडिरे विचारु। जरी तूं पाहासि परात्परु। तरि तूं जारे पंढरिये॥ १॥ बाप

तीर्थ पंढरी। भूवैकुंठ महीवरी। भक्त पुंडलिकाचे द्वारीं। कर कटावरी राहिला ॥ध्रु०॥ काशी अयोध्या आवंति कांति। मथुरा माया गोमती। ऐशीं तीर्थे इत्यादि आहेति। परि सरी न पवती पांडुरंगी ॥२॥ हाचि मानिपारे विश्वासु। येर सांडिरे हव्यासु। जरि तूं पाहासि वैकुंठवासु। तरि तूं जाये पंढरिये ॥३॥ आड वाहे भीमा। तारावया देह आत्मा। पैल थडीय परमात्मा। मध्य राहिला पुंडलिकु ॥४॥ या तिहींचें दरुशन। प्राण्या नाहीं जन्ममरण। पुनरपि आगमन येथें बोलिलेंचि नाहीं ॥५॥ पंढरपुरी म्हणिजे भूवैकुंठ। ब्रह्म तंव उभेचि दिसताहे नीट। या हरिदासासी वाळुवंट। जागरणासी दीधलें। म्हणोनि करा करारे क्षीरापति। नटा नटा कीर्तनवृत्ती। ते नर मोक्षातें पावती। ऐसें बोलती सुरनर ॥६॥ हें चोविसा मूर्तीचें उद्धरण। शिवसहस्त्रनामासी गहन। हेंचि हरिहराचें चिंतन। विश्ववंद्य हे मूर्तितें। तो हा देवादि देव बरवा। पाडुरंग सदाशिवाचा निज ठेवा। बापरखुमादेवीवरु पंचविसावा। चोविसा मूर्ति वेगळा ॥७॥

६५. पातेजोनि खेंवासि आणिलें। येणें आपणिया समान मज केलें गे माये ॥१॥ पाहेपां नवल कैसें बितलें। मन उन्मनीं उन्मन ग्रासिलें ॥२॥ पाहेपां येणें रखुमादेविवरा विठ्ठले। पाहेपां राहणें पढंरपुरीं केलें ॥३॥

६६. जें येथें होतें तें तेथें नाहीं। ठाईंच्या ठाईं हरपलें ॥१॥ घरींच्या घरीं जाली चोरी। आपणावरी आळु आला ॥२॥ पंढरपुरीं प्रसिद्ध जाणा। पुरविल्या खुणा ज्ञानदेवा ॥३॥

६७. क्षीर सागरीचें निजरूपडें। पाहतां पारखिया त्रिभुवनीं न संपडे। तें उभें आहे वाडें कोडें। पुंडलिकाचे आवडी ॥१॥ मेघश्याम घेउनियां बुंथी। जयातें श्रुती पैं वानिती। कीं तें पुराणांसी वाडे। तें पंढरिये उभें असें कानडे गे माये ॥२॥ आवडीच्या वालभें गोजवलें गोजिरें। पाहातां साजिरें त्रिभुवनाएक गे माये ॥३॥ तें सकळ मंगळदायकाचें प्रेम आथिलें। कीं ब्रह्मरसाचें वोतिलें घोसुलें। ब्रह्मविद्येचें सार मथिलें। देखा सकळ आगमींचें संचलें। की बापरखुमादेविवर विठ्ठल नामें मढिलें। श्रीगुरु निवृत्तीनें दिधलें। प्रेमखुण रया ॥४॥

६८. जयातें पाहतां परतला आगमु। निर्गमा नाकळे दुर्गमु। सिद्धांसाधक निरुतें वर्मु। न पडे ठायीं सर्वथा ॥१॥ तें या पुंडलिका वोळलें। प्रेम प्रीतीनें घोळलें। भक्तिमातेनें चाळविलें। आधीन केले आपणया ॥ध्रु०॥ जे माये अविद्ये वेगळें। गुणत्रया नातळे। काळें गोरें न सांवळें। निर्धारितां नेणवे ॥२॥ जें द्वैताहूनि परतें। तें सुखातें वाढवितें। योगी लक्षीं लक्षित ज्यातें। परि नेणवे सर्वथा ॥३॥ जें अरूपा रूपा वेगळे। सहस्त्रनामांहूनि आगळें। परम कृपेचें कोंवळे। क्रियाकर्मविरहित ॥४॥ जें ब्रह्मरसाचें गोठलें। तें पंढरिये प्रगटलें। बापुरखुमादेविवर विठ्ठलें। नामें आथिलें चोखडें रया ॥५॥

६९. नेणो विठो मार्ग चुकला। उघडा पंढरपुरा आला। भक्तें पुडलिकें देखिला। उभा केला विटेवरी ॥१॥ तो हा विठोबा निधान। ज्याचें ब्रह्मादिकां ध्यान। पाउलें समान। विटेवरी शोभती ॥२॥ रूप पाहतां तरी डोळसु। सुंदर पाहतां गोपवेषु। महिमा वर्णितां महेशु। जेणें मस्तकीं वंदिला ॥३॥ भक्तिसुखें लांचावला। जाऊं नेदी उभा केला। निवृत्तिदास म्हणे विठ्ठला। जन्मोजन्मीं न विसंबे ॥४॥

७०. त्रिपुटीं भेदूनी मनाच्या मौळी। तें आलें भूमंडळीं पंढरिये ॥१॥ नाम लाधलें नाम लाधलें पुंडलिकें केलें खेवणें देखा ॥२॥ समर्था पाथीं भोजन जालें। पंचामृत घेतलें धणीवरी ॥३॥ बाप रखुमादेविवरु विठ्ठलेसी तृप्ती। यथार्थ भावितां कळों येईल चित्तीं ॥४॥

७१. आकानिकेलेचिकनामातु। कारले धसिगे मरुळादने ॥१॥ चलुवाने चलुवने पंढरीराया चलुवाने। यह्ले दौनर्कवाने ॥२॥ पुंडलिकने भक्ती

बंदा। रखुमादेविवर विठ्ठलुने॥३॥

७२. जोडुनिया जोडी जेणें हुंडारिली दुरी। भिकेची आवडी तया नावडे पंढरी॥१॥ करंटे कपाळ ज्याचें नाम नये वाचे॥ सदैव सभाग्य तोचि हरीरंगीं नाचे॥ध्रु०॥ आपण न करीं यात्रा दुजियासि जावो नेदि। विषयाचा लंपट शिकवी कुविद्या कुबुद्धी॥२॥ ऐसें जन्मोनि नर भोगिती अघोर। न करिति तीर्थयात्रा तया नरकीं बिढारे॥३॥ पुंडिलकें भक्तेरे तारिले विश्वजना। वैकुंठीची मूर्ति आणिली पंढरपुर पाटणा॥४॥ कायावाचामनें जिवें सर्वस्वें उदार। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाचा वारिकर॥५॥

७३.शरीर हें स्थळ मळानिर्मळाचें मूळ। पाहोनि चोखाळ आदिपुरुषासी। जन्म मरणाचिया उचलुनि पेडी। मग तया बिंबडीं ज्ञान पिके॥१॥ पंढरिचें पिक नसमाये अंबरीं। तें शेत सोकरी पुंडलिक॥ध्रु०॥ ऐहिक परत्र दोन्ही शेताचीं आउतें। मुंड मुंड तेथें कुळवाडिये। उचलुनि पेंडी कासिया समुळीं। मग पुण्यकाळीं वोलवले॥२॥ गरुडटके दोन्ही शेताची बुझवणी। दस कुडपणी नामघोष। एकवीस स्वर्गाचा घालुनिया माळा। मग तया गोपाळामजीं खेळे॥३॥ जये शेतीं निवृत्ती भीतरे तये शेतीं साजे पुरे। राउळीं निदसुरे दंडीजती॥ रात्रंदिवस तुम्हीं हरिचरणीं जागा। तेणें तरालगा भवसागरू॥४॥ अठाराही बलौतें तें केलें धडौतें। खळें दान देतें सनकादिका। ज्ञानदेव म्हणे जगदानीं पिकला। पुरोनि उरला पंढरिये॥५॥

७४. आनु नेणें कांहीं। विठ्ठलु स्मरें देहभावीं॥१॥ पुंडलिका हें चिंतन। म्हणोनि विटेवरि हें ब्रह्म॥२॥ रखुमादेविवरु शहाणे। विठ्ठलु पाहुणे पुंडलीका॥३॥

७५. तळवे तळवटीं असे। विटें फावलें अनयासें॥१॥ आम्हां न संडवे पंढरी। विठ्ठलराज विटेवरी॥ध्रु०॥ जानु जघन बरवे दिसे। ते देखोनि मन उल्हासे॥२॥ पदकमळ जोडिलें। तेथें मुनिजन रंगलें॥३॥ कासे कसिला पितांबरु। चरणीं ब्रिदाचा तोडरु॥४॥ नाभीकमळीं जन्म असे। ब्रह्मादिकां अपैसे॥५॥ हस्तकडगे बाहुवटे। विठोबा शृंगार गोमटें॥६॥ अंगीं चंदनाची उटी। ते देखोनि मन संतुष्टी॥७॥ गळा वैजयंती माळा। मणीमंडित वक्षस्थळा॥८॥ कानीं कुंडलें झळाळा। श्रीमुख दिसतें वेल्हाळा॥९॥ वदन सकुमार गोजिरें। जैसे पोवळिवेल साजिरे॥१०॥ दंतपंक्ति झळाळ। जैसी माणिकाची किळ॥११॥ नाशिक मनोहर दिसे। जैसें वोतिलेंसे मुसें॥१२॥ लोचन बरवें विशाळ। श्रवणीं कुंडलें झळाळ॥१३॥ टिळक रेखिला मृगनाभीचा। बाप राजा मन्मथाचा॥१४॥ माथां मुगुट झळाळित। बाप पुंडलिका न्याहाळित॥१५॥ निवृत्तिदास शरणांगत। विठ्ठला चरणींचे आरत॥१६॥

७६. जन्मोजन्मींच्या सायासीं। विठ्ठल लाधला पुंडलिकासी॥१॥ पूर्वी पुण्य केलें वो माये। विटे लाधले या विठोबाचे पाये॥२४॥ रखुमादेविवरु आहे। तया तीर्था केधवां जाती पाय॥६॥

७७. विवेक नदीये बैसोनि। सांगड सत्वाची बांधोनी॥१॥ एक पंढरी वैकुंठ। येर वाउगे बोभाट॥२॥ चारी वेद विवादती। पुराणें साक्ष देती॥३॥ बोले निवृत्तीचा दास। संत गर्जती पापा नाश॥४॥

७८. वाराणशी यात्रे जाईन। प्रयाग तीर्थ पाहीन। त्रिवेणिये स्नान करीन। परि मी वीट नव्हेन॥१॥ विठोबा पाईची वीट। मी कईबा होईन॥ध्रु०॥ गोदावरी यात्रे जाईन। बारा वरुषाचें फळ लाहीन। अब्जकतीर्थी स्नान करीन। परि मी वीट नव्हेन॥२॥ मल्लिकार्जुन यात्रे जाईन। श्रीशैल्यशिखर पाहीन। पाताळगंगें स्नान करीन। परि मी वीट नव्हेन॥३॥ मातापुर यात्रे जाईन। सह्याद्री पर्वत पाहीन। गहनगंगें स्नान करीन। परी मी वीट नव्हेन॥४॥ कोल्हापुरीं यात्रे जाईन। महालक्ष्मी पाहीन। विशाळतीर्थी स्नान

करीन। परि मी वीट नव्हेन॥५॥ एका अंगुष्ठीं तप करीन। पृथ्वीपात्रचि लाहीन। देह कर्वतीं देईन। परि मी वीट नव्हेन॥६॥ बहुता पुण्यांच्या सायासीं। चरण जोडले विटेसी। निवृत्ति दासु म्हणे परियेसी॥ परी मी वीट नव्हेन॥७॥

## रूपकें

### बाळक्रीडा

अभंग ७९. भवाब्धिसागरीं मांडिली टिपरी परि अनुहातें वाजे गजरू वो॥ ताळक छंदें उमटती पदें वरि टिपरें टिपरीं गाजेवो॥१॥ टिपरिया घाईं गोपाळ भाई॥ घुळुघुळुपाईं नादु वाजे वो॥२॥ ताळकछंदें वेगुआल्हादें टिपरीनादें वाजती वो॥ सांडुनि अहं धरिलें सोहं तयासि टिपरी साधली वो॥३॥ औटहात भूमिका नीट तालछंदें टिपरी धरी वो॥ विरुळा जाणे एथींचे खुणे टिपरे वाजे शिरीं वो॥४॥ एकटसंगें टिपरें वेगें ध्वनि गगनीं गाजे वो॥ बाप रखुमादेविवर टिपरीवो गाजती घाई जाली टिपरियाजोगी॥५॥

८०. जटिल धुळधुसिर दोंदिल डोळसु अंगणीं बाळचंद्र खेळतां दिसे॥तें देखोनियां यशोदा माया पसरोनिया बाह्या॥ तें क्षेम सांगावया वाचा कैंची॥१॥ वालभते ब्रह्म गोकुळीं आनंदें॥ गौळियाच्या छंदें खेळतां दिसे॥ध्रु०॥ थुरथुर चालत भूमी पाय ठेवित। आंतु बाहिर दावित यशोदे माये॥ तो नित्य पूर्ण ह्मणे कडे घे कांवो आमये॥ स्तनपान दे कां सये वोसंगागे माये॥२॥ दोनी चारी कणिका वक्रारविंदी देखा। तें मुखमय कां माहेर होता॥ तें उचलेनि कपोळीं स्नेहें चुंबिती गौळणी। मांजयाची सिरयाणी ध्यानीं मुनिजनागे माये॥३॥ विश्व प्रतिबिंबाचें बिंब तो कान्हया वो साजणीं। त्यासि वोसंगा घेउनी गौळणी स्तनपान देती॥ सर्वेचि कासाविस होती ते पाही। मां साच कीं कान्हया नाहीं तेथें यशोदा ते कैची॥४॥ वेदाशास्त्रा पुराणा आणि यज्ञतप दाना। श्रुति धांडौळितां मना ठावो नुरेचि। मां मां म्हणोनि गौळणी अंगोळिया धरिती। मां विस्मयो करिती चोज अचोजगे माये॥५॥ ब्रह्मादिकां लक्षा नये कल्प गेले युगे युगे। तो गौळणीया वोसंगा निघालागे माये॥ तें बाळ भावाचे कीं संतत दैवाचे। न वर्णवे वाचे दिपोदिपिवो माये॥६॥ सांवळा सुजेडु कीं सुधेपरिस गोडु। तो या डोळ्या उजियेडु डोळसु तो॥ त्यानें एकै घेइजे एके पुजिजे। मां प्रीतिचेनि माजे नेणिजे दुजेगे माये॥७॥ हारवी कांई आपुलेपण न संडितां गांवोगांवीचा होत जात। तैसा गोकुळीं गोपिनाथु सकळ जना॥ कृष्ण परब्रह्म पुतळा कीं आनंदाची कळा। तो हा भोगविता हे लीळा मदनाची गे माये॥८॥ एक पावलों म्हणती ते कांहींच नेणती। अनुसरलिया हातांतळी पावा पावा म्हणे निवृत्तिदासु हरी। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु करिते निकेगे माये॥९॥

८१. गोकुळीं कमळ विस्तारलें साचें ध्यान श्रीधराचें करावया॥ यमुनेच्या पाबळीं मूर्ति देखिली सांवळी। चिदाकांशींची वोतली प्रेमतनुगे माये॥१॥ आवडींचें वालभ ब्रह्म पुंजाळलें। गोपवेषें गाई राखे। कांबळीची बुंथी घेऊनि कल्प द्रुमातळीं। त्रिभंगी ठाण मांडियलेंगे माये॥ध्रु०॥ योगमायेचनि विलासे उभा देहुडा पाउलीं। तेथे दीप्ति जे उदेली तेजाकारें अंगुष्ठीं अगुष्ठीं स्थापियेलें मूळपीठ। सुनीळनभाचेनि काळीवटे अंगोळियागे माये॥२॥ शेष गुढारी विसंचला किं भूमि पावो ठेविला। तोचि विन्यस्त उभारला तेज:पुंज॥ कुंकमपिंजरिचेनि सळे मापर्वती राततेपळें। तळवांचे रंग बाहळें पाउलीं श्लाघेगे माये॥३॥ चरणकमळीं कमळा कैसी विराजली बाळा। तेथें जाला एकवळा ये कमळीं कमळा॥ ध्वजवज्र अंकुशरेखा चरणीं वोळली पीयूष। नखें सरळीं देखा काळेपणाचेनिगे माये॥४॥ घोटीं सुनीळ निरावकाशें काश पाहतां भासलासे। जानुजघन प्रकाशे नभ ढवळलें॥ कासे कसिला सोनसळा खवे आला मध्यस्थळा। रत्नजडित मेखळा शोभतसेगे माये॥५॥ द्वितीय कमळीं

प्रजाप्रती कीं रोमराजी झळकती। तेथें उपनली दीप्ति काळी त्रिवळीची॥ उदरवक्षस्थळ द्विजपद निर्मळ। स्तनचंद्र पोकळी ढिसाळ काळिमा जैसीगे माये॥६॥ उदधीचेनि प्रेमसळें आपाद वैजयंती माळे। वरी शोभताती सोहळे सगुणाचे॥ दशनदीप्ति झळाळी रत्नकिळा मागों आली। दिसे हनुवटी बुजाली प्रभेचेनिगे माये॥७॥ प्रणवाचा मरिगळा पूजनासि आला भाळा। तुर्येसहित त्रिपुंड्र टिळा अर्ध ऊर्ध्व मात्रीं॥ अभिनव महाकारणीं। पवनपंचकाचीं खेवणीं। कुंडलें पेरावणी कर्णीं ढाळ देतीगे माये॥८॥ माथां मोर पिसावेठी गंडस्थळीं पडे दीप्ति। स्वयें विस्मित श्रीपती तेजःपुंजगे माये॥ तरुघोंस खोंविले शिरीं वेणु ठेऊनि अधरीं। नंदरायाचा खिल्लारी वोज काय सांगोंगे माये॥९॥ सप्तरंध्रीं सप्तस्वर चाळी अंगोळिया मनोहर। मुद्रिका शोभती साकार रत्नजडितगे माये॥ तिया वेणुचिया किळा। गोपि वेधल्या सकळा। अवघिया जाल्या पै काळ्या कृष्णरूपेंगे माये॥१०॥ ऐसा नटनाट्य वेषधारी सवे संवगडे वारिधारी। कैसा त्रिभंग कुसुरी उभा असेगे माये॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु सुखाचें निधान तें म्यां हृदयीं संपूर्ण सांठविलेंगे माये॥११॥

८२. भक्तिचिया चाडा गोकुळाशीं आला। त्याशी गौळणी म्हणती वाल्हा दुल्हागे माये॥ आवडीच्या सुरवाडे परब्रह्म सुरवाडे। त्याशी गौळणी खेळविती लाडे कोडेंगे माये॥१॥ गोजिरिया कान्हो अपछंद मत्ता पाउली रंगे रंगनाथा। दृष्टीचिया डोळां सुख निवडेना मागुतें ते वाचा वर्णावी केंवि आतां रया॥धृ०॥ अठुले लोळिया ढाळ देती कानीं मुक्तें खेवणी हरि श्रवणीं॥ अंतरिंचिया सुखा प्रगट दाविती देखा। ललाटीं झळकती रेखा रत्न जडित पत्रें माथांगे माये॥२॥ युगबंदु दिधला तैसा दोंदिलु मिरवला। नाभिकमळीं प्रकाश जाला परमेष्ठी॥ कटितटीं कडदोरा साजे त्या सुंदरा। वेगु तरु नेपुरां वेदु मानसीं वसेगे माये॥३॥ श्रुतिचेनि समागमें पाउलें गोजिरीं। घागुरली प्रेम नेपुरें कैसी वोप देती॥ अंदु वाकी वाळे पाय करी बेंबिले। मुनिजनांचे सुखसोहळे पुरवितसे गे माये॥४॥ ऐसा अपुलिये लीळे आपणासींच खेळे। गौळणी भरुनियां डोळे कैशा पाहाताती॥ अवघें कृष्णरूप भरलेंसे मानसीं। बापरखुमादेविवरेंसी मिळोनि गेल्यागे माये॥५॥

८३. योगिया मुनिजना ध्यानीं। तें सुख आसनीं शयनीं॥१॥ हरिसुख फावलें रे॥ धृ०॥ गोकुळींच्या गौळिया। गोपि गोधना सकळा॥ २॥ बापर-खुमादेविवरें विठ्ठलें। तें सुख संवगडिया दिधलें॥३॥

८४. पावया लुब्ध जाल्या पाबळा। गाई परे बळारे कान्हो॥१॥ विसरल्या चार विसरल्या पार। तल्लीन साचार कृष्णमूर्ति॥धृ०॥ पाणिया निघाल्या गाई चरती कळंबा ठाईं। हाकितसे लवलाही सवंगडा॥२॥ ज्ञानदेवी गाई हाकितु पावे सोई। हरिनाम दोही सत्राविये॥३॥

८५. गायी चालिल्या वनाप्रती। सवें पेंधा चाले सांगाती॥१॥ वळि गोवळिया कान्होबा। यमुने पाण्या नेईं तूं बा॥धृ०॥ पावया छंदें परतल्या गाई। विसरल्या चारा तल्लीन ठायीं॥२॥ ज्ञानदेव सवें सवंगडा लाठा। गाई हांकितो गोठणा तटा॥३॥

८६. माथे टेंकित बाह्या पसरित। डांगाचे आधार घेती॥धृ०॥ एक म्हणती आम्हीं उचलिला पर्वत। बहुत मिळोनि काय नव्हतीरे॥१॥ बाहे कडाडित मनगटें लचकत। म्हणोनि उठिले अवघेरे॥२॥ तयामाजिं असतां न दिसे बाप॥ समर्थ थोर तुझी मावरे॥३॥ काळु आतुडे परि वेळु नातुडे। म्हणौनि रक्षिलें सकळारे॥४॥ बाप रखुमादेविवर विठ्ठल साचा। म्हणोनि रक्षिलें आम्हारे॥५॥

८७. कल्पद्रुमातळीं ब्रह्म पुंजाळलें कैसें दिसते सुनीळ तेजगे मज। पाहातां वेणु वेदध्वनि नाद उमटताती सहजगे बाई ये॥१॥ आनंदें गोपाळ

गोधनें राखसी तळे यमुनेच्या पाबळीं। कर्मकाठी करीं घेऊनियां वळत्या देतुसे पांचचा मेळिगे बाइये॥ध्रु०॥ ऐसा जिकडे तिकडे उभारूनि बाहो। हाणतो थोरें निकोपें तयाचिया कर्मा होतिसे निवृत्ति। काय पुर्विल येवढें तपगे बाइये॥२॥ गोवळेपणाचेनि वेषें अमरीं सेविजे बोलताति सवंगडे। येरुनि येराचिया उच्छिष्ठा झोंबती नेणो तया काय जोडेगे बाइये॥३॥ मुनिजनां स्तवितां संतोष न पवे तो हुमलि घेतां हांसे। ब्रह्मादिकां बोलाचीं अक्षरें कोण जाणे प्रेम कैसेंगे बाइये॥४॥ ऐसा साहिदर्शनां वर्णितां पवाडु नाहीं आणि गोवळेपणें वेष नवल सांगों मी कायी। बापरखुमादेविवर विठ्ठलु सेविलिया। वांचूनि नेणवे केलिया कांहींगे बाइये॥५॥

८८. नागोठणीं गोपाळ वळतिया देतो कीं आनंदली गोधनें ऐकोनि वेणुध्वनी तत्त्वता। तुझी सांवळी सुंदर बुंथी विसंबे क्षणभरी तोचि सुखीं सुख पाहतां निजचित्तारया॥१॥ आनंदल्या मनें पहा तूं निधान। जवळिल्या निजध्यानें सांडूं नको॥ध्रु०॥ म्हणोनि कल्पनेचा उबारा मन संधीचा संसधु भागु अनुसराया गोठणींचया। दुर्लभ शक्ति ते गोपवेषें नटलें चैतन्य मांदूसे तें परादिकां नव्हे निजशक्तिरया॥२॥ म्हणोनि रखुमादेविवरु सदसुखाची निजबोल पाहें मीतूंपणा नातळे तो ऐसीयाचि बुद्धी सखोल। निवृत्तिरायें खुणा दाऊनि सकळ निज चैतन्य पाहे निखळरया॥३॥

८९. हरि प्रेम सरोवरीं। क्रीडति ये मदन कुहरीं। प्रेम सरोवरींये॥१॥ चांदिणें निर्मळ। चंदनें धवळतिये। पैल वृंदावनीं वासुगा गोविंदु खेळतिये॥ध्रु०॥ प्रकृति भक्ति परमातुमातुपरमहंसु। ज्ञानदेवो म्हणे निवृत्तिदासु॥२॥

९०. गोंवळेपणाची बुंथी घेउनिया भेष। रिझविशी मानस यशोदेचें॥१॥ त्या सुखें ब्रह्मांड थोडेंपा तियेशी। दुग्ध पैं मागशी बाळपणें॥ध्रु०॥ ऐसे मोहिलें पैं जगभक्तअंतरंग। भावाचे सुरंग प्रेमबोधें॥२॥ मज मानसीं सुख तुझ्या रूपीं वोलावा। सर्व इंद्रियीं दोहावा तुझ्या नामीं॥३॥ जन हे विव्हळ तुजविण अविचार। गुंफले साचार माया मोहें॥४॥ आतां ऐसें करी तुज मज सरोवरी। प्रपंच केसरी होई रया॥५॥ बाप रखुमादेविवरु सोपारा पैं निळा। निवृत्तींनी कळा सांगीतली॥६॥

९१. लक्ष लावुनि अंतरी। कृष्णा पाहती नरनारी। लावण्यसागरु हरि। परमानंदु॥१॥ छंदें छंदें वेणु वाजे। त्रिभुवनीं घनु गाजे। उतावेळ मनें माझें। भेटावया॥ध्रु०॥ ब्रह्मविद्येचा पुतळा। गाई राखतो गोंवळा। श्रुति नेणवे ते लिळा। वेदां सनकादिकां॥२॥ भूतग्रामीचा परेशु। तापत्रयाचा करी नाशु। आड धरुनि गोपवेषु। वत्सें राखे॥३॥ रासक्रीडा वृंदावनीं खेळे। इंदुवदन मेळे। उद्धरी यदुकुळें कुळदीपकें॥४॥ निवृत्ति दासाचा दातारु। बापरखुमादेवीवरु। भक्तां देतो अभयकरु। क्षणक्षणांमाजि॥५॥

९२. गुणें सकुमार सावळें दोंदील पहापा निराळें केवी वोळलेंगे माये। सुखें चैतन्याची बुंथी वोतली ब्रह्मादिकां न कळे ज्याची थोरीव। तो हा गोवळियाच्या छंदें क्रीडतु साजणी नवल विंदान न कळें माव रया॥१॥ डोळे बैसलें हृदयीं स्थिरावलें मन नुठी तेथून कांहीं केल्या॥ध्रु०॥ सच्चिदानंद पदीं पदातें निर्भेदीं निजसुखाचे आनंदीं माये क्रीडतुसे। तो हा डोळिया भीतरीं बाहिजु अभ्यंतरी जोडे हा उपावो किजो रया॥२॥ गुणाचें पैं निर्गुण गंभीर सद्सुखाचे उद्गार जें प्रकाशक थोर सकळ योगाचें। आनंदोनी पाहे पां साचें मनीं मनचि मुरोनि राहे तैसें बापरखुमादेविवरा विठ्ठले कीं मुसेमाजि अळंकार मुराले श्रीगुरुनिवृत्तीनें दाविलें सुखरया॥३॥

९३. परब्रह्म सांवळे गोपवेशें निराळें। हृदयकमळीं स्थिरावलें काय सांगो॥ कायावाचामनें पाहे जों पाहणें। तव नवलाव होये निर्गुणरया॥१॥ नामरूपीं गोडी हेचि आवडी आतां। न विसंबे

सर्वथा तुजलागी॥ध्रु०॥ जगड्वाळ प्रपंचभान हें तुज नातुडे हन। वायां भोगिसि जाण कारे याचें॥ तुझीचि बुंथी तुजचि न कळे याचें चोज। केंवीं वर्णिसी सहज गुणे रया॥२॥ म्हणोनि दृष्टि चोरूनि पडे मिठी। मन चोरूनिया पुढतापुढती तुजचिमाजि॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला। उदारा येणेंचि नाहीं त्रिशुद्धि। येणें निवृत्तिरायें खुणा दाऊनिया। सकळगुणीं गुणातीत तुटली आधी रया॥३॥

९४. मदनमूर्ति तूं डोळ्या आसुमाय जालासी। सेखीं कामिनिचेनि पक्षें तीं पुराणें पिशाच्च करिती रया॥१॥ गोजिरिया गुण निधाना। बापा गुंतल्यापणाचिया साठी॥ वेदविदेही विचारितां तेथें। आगम काढिती आटीरया॥ध्रु०॥ सायुज्यता जालीया मग सादृश्यपण तेथें लोपे। अवयव अळंकार मुरालिया तेथें दृष्टि परमार्थ थोपे रया॥२॥ तत्त्वपणाचेनि समरसें तेथें पुरोनि उरे तें शेष। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलीं गगनीं नक्षत्र पडे नुरेचि तेथें रेख रया॥३॥

९५. सांगति आमुचियारे। विद्गद पावया छंदेंरे॥ १॥ नाचे विनोदें कान्हारे॥ विद्गद पावया छंदेंरें॥ ध्रु०॥ निवृत्तिदासा प्रियोरे। विद्गद पावया छंदेंरे॥ २॥

९६. वृंदावनीं आनंदुरे। विठ्ठलदेवो आळवितिरे॥ १॥ गोपाळ रतलेरे। विठ्ठलदेवो आळवितिरे॥ २॥ निवृत्ति दासा प्रियोरे। विठ्ठल देवो आळवितिरे॥ ३॥

९७. काळिये रात्रींचा चंद्रमा कीं सांवळीं बुंथीं आम्हां। काळिये वेळीं ते सीमा नवलावो। सुनीळ काळिये भरु मेघ: शाम सांवरु। तोचि नवलाहो हा धीरुरया॥१॥ आतां काळिये दिनु मज न स्मरेवो काहीं। तुझें तुज पाही गाऱ्हाणें रया॥ध्रु०॥ म्हणोनि यमुना कांलिंदीजळ सांवळें। योगिया शून्यातीत तटीं मिळे सुखिया। सुखाचेनि कल्लोळें देखतसे॥२॥ दिठि सांबळ भरु खुंतलासे मज। नाठवे द्वैत काज रया॥३॥ येणें सुखें चैतन्य डोळ्या होकां मिळणी कीं नेत्रीं नेत्रे उन्मळणीं तटस्थपणें। हा सर्वांग अंग प्रत्यांगा होउनियां जेथ विचारती मुनिजनांचीं मनें। तो हा रखुमादेविवरु पाहतां दिठीं आतां पुनरपि नाहीं येणें रया॥४॥

९८. भोंवरी सांडुनि पाव ठेविरे गोपाळा। नाच चिदानंदा सुख होईल सकळां॥१॥ रंगु रंगलारे रंगु रंगलारे। आदि मध्य अंत त्रिगुणविरहित विश्वीं प्रकाशलारे॥ध्रु०॥ रंगु रंगला सुरंग जाला। पहिलीये रंगीं निवृत्ति भला॥२॥ सुखीं सुख मुरे प्रेमें चिदानंद उरे। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुरे॥३॥

९९. तुझिये निढळीं कोटि चंद्र प्रकाशे॥ कमल नयन हास्य वदन हांसे॥१॥ हालकारे कृष्णा डोलकारे॥ घडिये घडिये घडिये गुज बोलकारे॥ध्रु०॥ उभा राहोनिया कैसा हालवितो बाहो॥ बाप रखुमादेविवरु विठ्ठलु नाहो॥२॥

१००. कोंवळें ठुसठुसित मोतियांचे घड। शृंगारिलें गूढ जया लेणीं॥१॥ बैसोनियां रथीं सुरनर खेळती देखोनिया पशुपति वेडावले॥ध्रु०॥ युक्ति खुंटली वासना निमाली। कळां पैं बैसली पद्मासनीं॥२॥ होय कीं नव्हे ज्ञानदेव पुसती। आठवितां निवृत्ति भेटी होये॥३॥

१०१. पावया छंदें तल्लीन गोविंदें। नाचती आनंदें गोपाळ कैसे॥१॥ यमुनेच्या तीरीं गाई चारी हरी। गोपाळ गजरीं आनंदले॥ध्रु०॥ ठायीं ठायीं मातु पेंधा पैं नाचतु। वाकुल्या दावितु हरी छंदें॥२॥ ठाईं ठाती उभ्या विसरल्या माया। हाकितु लवलाह्या कृष्णहरी॥३॥ ज्ञानदेवाजिवीं कृष्णचिरंजिवी। गोपाळ रंजवी प्रेमभक्तां॥४॥

## पाळणा

१०२. आकारेंवीण पाळणा पहुडलें। निराकार म्हणोनि वोसणाईलें॥१॥ जो जो जो जो बाळा निराकार पाळणा। व्योमीं व्योमाकारीं झोंप घेई॥ध्रु०॥ चौदा निःशब्दीं जागृत केलें।

येकविसीं हालवूनि बाळ उठविलें॥२॥ बाप रखुमादेविवरु निर्जी निजविलें। कांहीं नव्हे ऐसें कांहीं ना केलें॥३॥

१०३. पाळण्याची परी सांगेन आतां। पाळण्या तान्हुलें बोंभाते देहेविणें ताता॥१॥ तेथें जनकु नव्हे जननी नव्हे। बाळक नवे होये मासे विण॥ध्रु०॥ तेथें तेल सारूनि अभ्यंग केलें। बाळक पुसिलें अंबरवर्णे॥२॥ बापरखुमादेविवरु अनुभवित जाले। ते निजरूप पावले परब्रह्मीं॥३॥

१०४. अठरा दिगांतीहुनि पाळणा आणिला। तेथें एक निर्गुण बाळ पहुडला॥१॥ बाळापें हें नाहीं बाळापें हें नाहीं। अंगुष्ठ पेउनि घेईं निरालंब॥ध्रु०॥ निरालंबीं स्वाद आळवी ब्रह्मीं। तेथें एकु बाळ बोभाये निरंजनीं॥२॥ बाप रखुमादेविवरु अनादि अंतीं। त्याहुनि परती मज गति केली॥३॥

१०५. पांच पाट्या नव खिडकिया पाळणा पहुडया निरंजनीं॥१॥ एकवीस सहस्त्र श्वास हुंकार घाली॥ माया ते मारिली ज्ञानरूपी॥ध्रु०॥ तेथें निरंजन नाहीं कांहींचि नाहीं। तेथें निःशब्द उठती पाहीं॥२॥ बापरखुमादेविवरु बाळका घेऊनि मेला। मरोनियां जाला जितपणेंगे माये॥३॥

१०६. शून्य नाहीं निरशून्य नाहीं॥ तेथें पाळणा पाही लावियेला॥१॥ जातिविण बाळ उपजलें पाही। तेथें परिये देते माय तेही नाहीं॥ध्रु०॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलीं पाळणा नाहीं॥तेथें मी बाळ पाही पहुडलों॥२॥

## घोंगडी.

१०७. आठवितां नुपुरे मोविता न मोववे। सांगतां न सांगवे गुण त्याचे॥१॥ परतलिया दृष्टि काळा देखिला जगजेठी। वेणिभागीं पृष्ठीं कैसा दिसतु असे॥ध्रु०॥ त्या गुणाच्या संगें कैसें अद्वैत जालें। मन म्हणौनि काळेंपण बहु झालें गे माये॥२॥ पुरेपुरे बुद्धि निमाली वेदवाणी। आतां केवीं वर्णूं चक्रपाणी बहु काळें गे माये॥३॥ द्वादश मंडळें वोवाळुनि आलिये। तंव तंव काळें देखिलें रूपडें त्याचें॥४॥ अनुमाना नये अनुमाना नये। परतल्या श्रुति चोजवेना॥५॥ मनें बुडी दिधली दाहीं हारपली। चोवीस मावळलीं अगाध पंथी॥६॥ प्रीतीचें पांघरूण काळें घोंगडें। रखुमादेविवरें विठ्ठलें मज केलें उघडें॥७॥

१०८. रात्री दिवस वाहातसे चिंता। केशव धडौता होईन मी॥१॥ खिरजट घोंगडें फाटकें तें कैसें। वेंचिलें तैसें भोगिजगा॥ध्रु०॥ वित्त नाहीं गाठीं जीवित्वा आटी। उघडी पाठी हींव वाजे॥२॥ घोंगडें देईल तो एक दाता। रखुमादेविवरा मागों रे आतां॥३॥

१०९. तुझें घोंगडें येकचि चोख। दुजें वोळख अमंगळ॥१॥ दे धडुत न घोंगडें मोठें। खिरपटें जळो देवा॥ध्रु०॥ रखुमादेविवरु उदार जाला। धडौता केला ज्ञानदेवो॥२॥

११०. चौऱ्यांशी लक्ष हिंडता हाट। पुंजे दाट सांपडलें॥ हित ये खेपेसी बरवें जालें। सुरंग घोंगडें हाताशीं आलें॥ध्रु०॥ येणें पाडें न माये कोठें। घोंगडें मोठें सांपडलें॥२॥ मनोरथ पुरलेरे आतां। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाशीं ध्याता॥३॥

१११. माझिया घोंगडियावरी ब्रह्माचा गोंडा। बाहिरी सांडा बैसावया॥१॥ घोंगडें संतचरणीं रुळे। श्रीरंगा रंगलें व्योमाकार॥ध्रु०॥ रखुमादेविवरें विठ्ठलें दिधलें। अमोलिक जालें मोलेंविण॥२॥

११२. घोंगडी घेऊनि हाटासि जाये। पंढरिये आहे वस्ती आम्हां॥१॥ घोंगडियाचें मोल पैं जालें। चरणीं राहिलें विठ्ठलाचे॥ध्रु०॥ घोंगडें येक बैसलें थडी। उभयां गोडी विठ्ठलाची॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे अनुभवी तो जाणे। शाहाणे ये खुणें संतोषले॥३॥

११३. काळें न सावळें धवळें न पिंवळें। घोंगडें निराळें लाधलों मी॥१॥ मागील रगटें सांडिलें आतां। पंढरीनाथा चरणाजवळीं॥ध्रु०॥ नवें नवघड हातां आलें। दृष्टि पाहे तंव मन हारपलें॥२॥ सहस्त्र फुलीवरी गोंडा थोरू। धडुतें

दानी रखुमादेविवरु ॥ ३ ॥

११४. निरालंब घोंगडें अद्वैत पेठे। तेथें एक भेटे रूपेंवीण ॥ १ ॥ हिरोनि घेतलें हिरोनि घेतलें। मज पैं दिधलें दोषेंवीण ॥ २ ॥ रखुमादेविवरें कामाण केलें। अपकारेंविण उघडें नागविलें ॥ ३ ॥

११५. अद्वैत पेठेहुनी घोंगडें आणिलें। अमोलिक घेतलें पंढरिये ॥ १ ॥ चौ हातांची भरणी आली। तिये चराचरीं ऐसें नाहीं ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु विठ्ठलीं नीट। पांघुरविलें वैकुंठ मज देखा ॥ ३ ॥

११६. माझें चवाळें रंगाचें बहुतें। श्रीगुरुनिवृत्तिनाथें दिधलेगें माये ॥ १ ॥ चवाळें शुद्ध चहूं पालवी। व्योमाकारें वेद प्रसिद्ध पांघुरवी ॥ २ ॥ आतां पराहूनि परमेचूचें। बापरखुमाईवरा विठ्ठला अंगींचे ॥ ३ ॥

११७. निरंजना गाई चारूं गेलों। तंव चवाळें तेथें एक पावलों ॥ १ ॥ मज निर्गुणें आड वारिलें। चवाळें हिरोनि जिणें बुडविलें ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरें इतुकें केलें ॥ माझें चवाळें हिरोनि नेलेंगे माये ॥ ३ ॥

११८. ब्रह्माचा गोंडा चहूं पालवा। मन पांघुरे उमप भवा ॥ १ ॥ चौ हातांहून आगळें। द्विकरांहूनि वेगळेंगे माये ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरें सुभटें। मज चवाळें दिधलें गोमटेंगे माये ॥ ३ ॥

११९. चवाळ्याची सांगेन मातु॥ चवाळें पांघुरे पंढरीनाथु॥ १॥ गोधनें चारितां हरि पांघुरला। मज चवाळ्याचा त्यागु पैं दिधला ॥ २ ॥ बाप रखुमादेविवरु श्रीगुरुराणा। चवाळें पांघुरवी निरंजनागे माये ॥ ३ ॥

१२०. निर्गुण चवाळें आणिलें। बापनिवृत्तीनें मज पांघुरविलें ॥ १ ॥ चौघे चान्ही पदर म्हणीतले। पांघुरण झालें सारासार ॥ २॥ बापरखुमादेविवरें विठ्ठलें। माझें चोरूनि जिणें उघडें केलेंगे माये ॥ ३ ॥

१२१. तूं माझा स्वामी मी तुझा रंक। पाहतां न दिसे वेगळिक ॥ १ ॥ मी तूं पण जाऊंदे दुरी। एकचि घोंगडें पांघरूं हरी ॥ २॥ रखुमादेविवरा विठ्ठलराया। लागेन मीं पाया वेळोवेळां ॥ ३॥

१२२. जायाची घोंगडी नव्हती निज। म्हणऊनि तुज विनवीतसे ॥ १ ॥ एक पाहतां दुसरें गेलें। तिसरें झालें नेणों काय ॥ २ ॥ चौथें घोंगडें तेंही नाहीं। रखुमादेविवरा विठ्ठला पायीं ॥ ३ ॥

## पाईक.

१२३. जालेनि पाईकें गोसाविपण जिंकें। परि स्वामिया सेवक साचा होय॥ एकएकेविणें स्वामीसेवकपण। मिरविती हे खुण स्वामी जाणे ॥ १ ॥ पाईक काय स्वामी स्वामिया काय पाईक। असतां एके एक दोन्ही नव्हती ॥ २ ॥ स्वामीचें काज पाईकपणें वोज। करितां होय चोज पैं गा॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलासि वोळगतां। पाईका स्वामी असतां निवृत्ति ऐसा ॥ ३ ॥

१२४. एकुचि एकला जाला पैं दुसरा। एकीमेकी सुंदरा खेळविती ॥ १ ॥ माझिये कडिये कान्हा तुझिये कडिये कान्हा। देवकी यशोदा विस्मो करिती मना ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरू आवडे मना। जगत्रजिवनु कान्हा बाईयांनो ॥ ३ ॥

१२५. पाईका मोल नाहीं देसील तें काई। पाईक न मागे कांहीं भोग्य जात ॥ १ ॥ देसील तें काई न देसील तें काई। पाईक न मागें कांहीं तुजवांचोनी ॥ २॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठलाच्या पायीं। पाईका मोल नाहीं तैसें जालें ॥ ३ ॥

१२६. आणिक पाईक मोलाचे तुझे। तैसें नव्हे माझें पाईकपण ॥ १ ॥ न मगे वही मोल जीवन भातें। तें द्यावें मातें पाईकपण ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरा गोसांविया। पाईकपणें मीयां जोडलेती ॥ ३ ॥

१२७. देह दंडुनि पाईक अनुसरसा जीवें। तव स्वामियाचें गूज हातासि आलें ॥ १ ॥ पाईकपण गेलें स्वामि होऊनि ठेले। परि नाहीं विसरलें स्वामियातें ॥ २ ॥ पाईकपणें ऐसा आठवुचि नाहीं। स्वामीवांचुनि कांहीं जाणेचिना ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु विठोजी उदारु। पाईक वो साचारु स्वामी केला ॥ ४ ॥

१२८. जागतां नीज आलें असें हातां। मग पाईक म्हणवितां लाज वाटे॥ नव्हे कोणाजोगा नाईकें हाणितलें। उणेपणें आलें पाईकपणा॥१॥ पाईक शुद्धमति स्वामिया विवेकी। वेंव्हारु लोकिकीं चाळीतु असे॥२॥ निदसुरा होता तो जागसुदा जाला। स्वामिये आणिला आपणापाशीं॥३॥ पाईकपणें गेलें सन्निधान जालें। स्वामी एका बोलें निवांत ठेला॥४॥ मागावें तितुकें खुंटलें। तेथ न मगतां आपणांते जाणीतलें। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला प्रसादें॥ पाईक परि अभेदें उरला असें॥५॥

## हमामा.

१२९. हमामा पोरा हमामा। घुमरी वाजे घुमामा॥ध्रु०॥ घुमरिचा नाद कानीं। घुमरी घालूं रानीं। रानीं सीतल छाया। मेली तुझी माया। मायेचें घर दुरी। तुज मज कैंची उरीरे पोरा॥१॥ उरी नाहीं तुज। मजसी मांडिलें जुंझ। जुंझीं अहंकार ढळे। कल्पना समूळ गळे। गळतां गळतां पाहिली। कान्होबा चरणीं राहिलीं। कान्होबा पाहे दिठी। तुज मज पडिली मिठीरे पोरा॥२॥ मिठी मिठी करी पाहासी। आतां कोठें राहासी राहाता ठावो येकु। फटितो तुझा लेंकु। लेंकु गाई राखे। बाप गोरसु चाखे। चाखतां घेतली गोडी। तोचि फांसा तोडीरे पोरा॥३॥ पोरा एक माझी गोठी। राग न धरी पोटीं। रागे काम नासे। अंहकारें बोंचा वासे॥ वासिले रावणें डोळे। भेणें द्वैत कंस पळे। पळतां पळतां लागला पाठीं। तुज मज आतां गोठीरे पोरा॥४॥ पोरा गोठी करी ऐसी। संतासि मानेल तैसी। बापरखुमादेविवरु ध्यासी। तरि वरिल्या गांवां जासीरे पोरा॥५॥

१३०. हमामा घाली बाळा। सांडी खोटा चाळा। फोडिन तुझा टाळा। वाकुल्या दाविन काळा॥१॥ हमामारे पोरा हमामारे॥२॥ हमामा घाली बारे। अंगीं भरलें वारें। चाखतीं पिकलीं चारें॥ जाऊं वरिल्या द्वारेंरे पोरा॥३॥ हमामा घालीं नेटें। सांडीं बोलणें खोटें॥ आतां जासिल कोठें। कान्होबाचे बळ मोठेंरे पोरा॥४॥ हमामा घाली सोई॥ भांभाळी सवा दोहीं॥ एक नेमें तूं राही। तेथें बहु सुख पाहीरे पोरा॥५॥ हमामियाचा नादु वाजे॥ अनुहातें कोपर गाजे॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठल राजे। रत्नजडित मुगुट साजेरे पोरा॥६॥

## अंबुला.

१३१. विचारितां देहीं अविचार अंबुला। न साहे वो साहिला काय करूं॥१॥ सखि सांगें गोष्टी चाल कृष्णभेटी। आम्ही तुम्हीं शेवटीं वैकुंठीं नांदों॥२॥ येरि सांगे भावो जावें वो प्रवृत्ती। तव वरि गति येता नये॥३॥ ज्ञानदेवो प्रवृत्ती निघालीया तत्परा। हरि आला सत्वरा तया भेटी॥४॥

१३२. न गमे हा संसारु ह्मणोनि केला भ्रतारु। लोक अनाचारु म्हणती मज॥१॥ चंचळ जालिये म्हणतील मज। कवणा सांगूं। जिवीचें गूज॥२॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलावांचुनि नेणें। सतत राहणें याचे पायीं॥३॥

१३३. अद्वैत अंबुला परणिला देखा। दुसरा विचार सांडिला ऐका॥१॥ सांडिला पै घराचारु। दुसरा विचारु नाहीं केला॥२॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलेंसी घराचार। ठकला व्यवहार बाईयांनो॥३॥

१३४. अंबुला माहेरीं भोगी धणीवरी। मग तया श्रीहरि सांगों गूज॥१॥ माझें सुख मीच भोगीन। क्षेमेंसि निगेन अंगोअंगीं॥२॥ सांडुनि कुळाचार जालिये निर्लज्ज। तुम्ही काय मज शिकवाल॥३॥ रखुमादेविवरु विठ्ठल मातापिता। मी त्याची दुहिता सर्वांगुणीं॥४॥

१३५. जियेचा अंबुला रुसूनि जाये। तयेचें जीवित्व जळोगे माये॥१॥ आम्हीं रुसों नेणों आम्ही रुसों नेणों। अंबुलीया रुसों नेदूगे बाई॥२॥ ज्याच्यानि अंगें जोडला हा ठावो। रखुमादेविवरु नाहो बुझाविला॥३॥

१३६. अष्टभावें भोगितां न पुरे धरणी। देह उगाणी केली देखा॥१॥ अंबुला निघाला अंबुल्या

गांवा। मी वो तया सवा जातु असें॥ रखुमादेविवरु लागलासे चोरु। मार्ग बुडविला घराचारु॥३॥

१३७. दुरकु अंबुला केलागे बाई। ब्रह्यदिकां तो न पडे ठाईं॥१॥ हालों नये चालों नये। सैरावैरा कांहीं बोलों नये॥२॥ अंबुला केला धावे जरि मन। बुडती बेताळीस जाती नाक कान॥३॥ मागील केलें तें अवघें वावो। बापरखुमादेविवरु विठ्ठल नाहो॥४॥

१३८. सुची अंबुला ज्ञान घराचारु। भक्ति ये साकारु आवडली॥१॥ काय सांगु माये निर्गुण अंबुला। शून्यीं मिळाला नाहीं ठाईं॥२॥ रखुमादेविवरु साकार अंबुला। मज पूर्ण बाई-यांनो॥३॥

१३९. अंबुला विकून घेतली वस्तु। घराचार समस्तु बुडविला॥१॥ उठोनि गेलिये अज्ञान म्हणाल। म्यां तंव कैवल्य जोडियेलें॥२॥ अंबुला सांडूनि परावा केला। संसार सांडिला काय सांगों॥३॥ रखुमादेविवरें मज पर्णुनि नेलें। सुखचि दिधलें काय सांगों॥४॥

१४०. सगुण अंबुला निर्गुण पैं झाला। घराचार समस्त बुडविला॥१॥ आशा हे सासु असतां बुडविली। शांति माऊली भेटों आली॥२॥ रखुमादेविवर विठ्ठलेंसि चाड। अद्वैतेंसि माळ घेऊनि ठेलें॥३॥

१४१. अंबुला होता तो लेंकरू जाला। घराचार बुडाला बाईयांनो॥१॥ झणी अकुळी म्हणाल उणें। तुम्ही जाणते जाणा परमार्थ खुणें॥२॥ रखुमादेविवरें विठ्ठलें भोगिलिये। लंपट जाहालिये सहजानंदीं॥३॥

१४२. स्वरूपाचेनि भानें बिंब हें ग्रासिलें। परि खुण न बोले काय करूं॥ रूपाचा दर्पण रूपेंविण पाहिला॥ द्रष्टाहि निमाला नवल कायी॥१॥ जिकडे जाय तिकडे दर्शन सांगाती॥ उदो ना अस्तु हे नाहीं द्वैतस्थिति॥२॥ पूर्वबिंब शून्य हे शब्दचि निमाले॥ अनाम्याचे नि भले होतें सुखें॥ त्यासी रूप नांव ठाव संकल्पें आणिला। अरुपाच्या बोला नाम ठेला॥३॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुचि एक॥ भोगी समसुख ऐक्यपणें॥ अदृश्य अंबुला जागतां निविजे॥ परि सेज स्वभावीं दुजें नाहीं रया॥४॥

१४३. सुखाचा निधि सुखसागर जोडला। म्हणौनि काळा दादुला मज पाचारिगे माये॥१॥ प्रेम नव्हाळी मज झाली दिवाळी। काळे वनमाळी आले घरागे माये॥२॥ बापरखुमादेविवर पुरोनि उरला। सबाह्यजु भरला माझे हृदयींगे माये॥३॥

१४४. वऱ्हाड न होतां होतों खेळेमेळे। लग्न लागलें कवणें दुष्ट वेळे॥ तेथुनि अंबुला चालवितो मातें। कैसेनि येथें निस्तरावें॥१॥ मौनेंचि घरवात करावियाची। चाड नाहीं मज या जिवाचीगे माये॥२॥ आया बायांनो ऐका वो न्यावो। येकांतीं सदा वसताहे नाहो॥ अंगभोग नाहीं ऐसा दुरावो। गरुवार होतसे हाचि नवलावो॥३॥ एखादे वेळे मजचि मरितोसी। लाजा मी सांगो कोण्हापासी॥ राग आलिया आवघेया ग्रासी। ऐसी अति प्रीति आम्हां दोघांसी॥४॥ म्हातारा आमुला काय माये। रूप ना वर्ण हात ना पाये॥ तरुणि आपुलें मी रूप न साहे। क्षणभरि या वेगळी न राहे॥५॥ पिसुणा देखतां बुझाविलें माये। बुझवणी माझी शब्द न साहे॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु पाहे। पाहाते पाहाणें जालेंगे माये॥६॥

१४५. द्वैताद्वैत विरहित गौळणी॥ अमृत दुडिया भारोनियां सांजवनींगे माये॥ अभिन्नव करूनि श्रृंगारु माथां गोरसाचा भारु। अजि निघाल्या विकरा करूं मथुरे हाटा॥ प्रेम उचंबळलें चित्तीं हांसें चाले हंसगति। पुढें सखिया खेळती जिवीं जिवलगा॥ दृष्टीं फिटला संदेहो लागे कांबळीचा सोवो। तंव माझरी कृष्णदेवो स्वरूपीं दिसे॥१॥ नवलावगे नवलावगे देखियेला॥२॥ दृष्टीं देखिला लोचनीं लाजिलीये विरोनि। मागति खुंटलिसे मनीं पांगुळलें॥ सरलें नेत्रांचें देखणे श्रुतिश्रवण

ऐकणें। चित्त चोरियलें कान्होनें चैतन्यींवो॥ निमिषें खुणाविलें सहजें तव घडलें सहज। बिंबीं बिंबतसे निज हें जीव हाचि जाला॥ आतां नाहीं मज जरी हा तंव बाहेरू भीतरी। अवघीं अंतरलीं दुरी गेलें मनुष्यपण॥३॥ याचिये वो भेटी पडीली संसारासी तुटी। शब्द मावळला गोष्टी तो मी काय सांगों॥ ऐसा कैसा ह्य दानी करूं नेदितां बोहणी। सुखासाठीं सांवजणी केलें रूपातीत॥ आजि करुनी विकरा रिघु नुपुरे जाव्या घरां। नुरे कल्पनेसी थारा। सरले लिंग देह॥ मी तंव वेंधलिये यासी सर्वेचि जालिये तत्वमसि गुज लपवावें मानसीं तुम्ही सखीयांनो॥४॥ याचिया लागल्या अभ्यासें गेलें मीपणाचें पिसें। केलें आपलिया ऐसें इंद्रियासहित॥ पूर्ण चैतन्य भोगीलें हें तंव दुजें निमालें। देहीं अखंडित ठेलें होतें जैसें तैसें॥ आलिंगुनिया अंतरीं रिगु नुपुरे बाहेरी। निर्विकाराच्या शेजारीं प्रेम दुणावत॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठलेसी भेटी। आजि संसारा संसटी घेऊनि गेला॥५॥

१४६. कासयाची चाड मज नाहीं वो साजणी। एकल्या निर्गुणीं वेधियेलें वो माये॥१॥ पवन वेगाचेनि अंतरलें तुम्हासी। आतां मागुती वो कैसी परतेन वो माये॥२॥ ध्यान धारणा तनु मनु करणें। ठेवियेलें ठेवणें गोपाळ चरणीं वो माये॥३॥ ऐसे भुलवणीं भुलविलें नयनीं। रखुमादेविवरें चिंतनीं वो माये॥४॥

१४७.अष्टदळ पाहे पद्म नेत्र दाहे। सोहं मंत्र कोहं ठाकी दुरी॥१॥ आडवीं आडव पारूचा बरव। सखिये तो राव रामराणा॥२॥ उपरती साधि प्रपंचीं अवघी। गुणें गुण उद्बोधी शेजे सये॥३॥ ज्ञानदेवी लपे विज्ञान हारपे। कायम मापें न बाधिती॥४॥

१४८. सम्यक करी शांति बैसे एके पातीं। क्षेमेसि निवृत्ति वाड करी॥१॥ ऐसा हा उपदेश सखी सांगे जीवास। झणी कासावीस होसी बाई॥२॥ सज्ञानी विज्ञान त्रिज्ञानीं नारायण। अन्वयीं शोधून पाहे लक्षीं॥३॥ ज्ञानदेवीं शिवा उन्मनि रिघावा। हरीचा विसावा सर्वांघटीं॥४॥

१४९. येरी म्हणे भेद सृष्टी दाविती शब्द। तत्वीं तत्व बोध कोठें गेले॥१॥ सखी म्हणे बाई आकाराची सोय। तुज मज काय इयें देहीं॥२॥ चपळता सांगों उष्णता घोटी। घोटुनियां होणें समब्रह्मीं॥३॥ ज्ञानदेवीं तट भाग्य जैं उत्कट। तैं हें वाक्पट पडती दृष्टी॥४॥

१५०. सखी सांगे सार शांति क्षमा दया। प्रपंच विलया बरळ पोशी॥१॥ सखी म्हणे एका दुजी म्हणे अन का। अनेक सिंम्यका गुरुगम्य॥२॥ सावध निबंध आध्याचा उकला। रसनेचा पालव रसना तोयें॥३॥ ज्ञानदेव सांगे रखुमादेवी जप। अगम्य संकल्प एक दिसे॥४॥

१५१. सखी म्हणे बाई समपण तें कैसें। येरी म्हणे देश हिंडूं नको॥१॥ आंधीं शोधी आप मग पाही दीप। कोहं सोहं दीप दवडी दुरी॥२॥ त्रिपुटीं झोंबों नको मायावी सकळ। अवघा सरळ हरी आहे॥३॥ ज्ञानदेव बुझवी बुझे ज्ञानधारणा॥ तुज मज सौजन्य येणें न्यायें॥४॥

१५२. ऐक धावे सुनाट एकीनें धरिलें बेट। एकीनें शेवट साधीयेला॥१॥ कोणे तत्वीं हरि कैसी याची परी। नांदे कोणे घरीं सांगीजेसु॥२॥ सखी सांगे बाई भावो घरी देहीं। एकारूपा सोयी येईल घरा॥३॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठल अवचितां। निवृत्ति जे समता सांगितलें॥४॥

१५३. सांवळीये निळी भुलली एकी नारी॥ परेचा वो घरीं शुद्धि पुसे॥१॥ सांगेगे बाईये कोणे घरीं नांदे॥ कैसें या गोविंदें हिंडविलें॥२॥ चहूं मार्गी गेलें न संपडेची वाट॥ मग चैतन्याचा घाट वेंधलीये॥२॥ ज्ञानदेवी समाधि स्थान पैं विठ्ठल। अवघा चित्तीं सळ हारपला॥३॥

१५४. मीपण माझें हरपलें। शेखी ठकचि विशेखीं पपडिलें बाईये॥१॥ काय सांगो तुम्हां कैचा हा गोंवळु। न म्हणे दिन वेळु आम्हा घरीं॥२॥

नवल पैं केलें बुडविलें सगुण। आपणचि निर्गुण होउनि ठेले॥ ३॥ बापरमखुमादेवीवरु जीवन आमुचें। नाहीं पैं साचें कुळकर्म॥३॥

१५५. आजिवरि होते मी मोकाट। तंव डोळे फुकट मोडा तुम्ही॥१॥ समर्थाचे अंगीं पडले अवचिति। तुम्हां ऐसि किती चाळविली॥२॥ बापरखुमादेवीवरा विठ्ठलाचि घरवात जाले। जन्मवरी एकांत करुनि ठेले॥३॥

१५६. त्वचेचिया रानां धाडूं नको मना॥ तेयें नंदाचा कान्हा डोळा घाली गो आइयो॥१॥ गाईचा गोंवळा यमुनेचा पावळा। धरी माझा अचुळा मग मी पळालिये गो॥२॥ ताकपिरी गोंवळी केली मजसी रांडोळी। भावे नारली मग मी पळालिये गो॥२॥ गळा गुंजमाळा गांठी। डांगा मोरविसा वेठी। सोकरु लागे पाठी। नंदरायाचा गो आई ये॥३॥ एक्या करें धरी। विजा करें वेटारी। चुंबन दे हरी। मग मी पळालिये गो॥४॥ ऐसी पळत पळत गेलिये। कान्होनें मोहिलिये। माझी मीचि जालिये। मग मी समोखिलिये गो॥५॥ तुना चार। लागतेगोर। तुना बोर लागतो गोर। तुना बाही माझी चार। माझी आईयो गो गो॥६॥ पूर्वपुण्य फळलें। देह मुक्त जाले। बापरखुमादेविवर विठ्ठलें। ऐसें केलें गो आईयो॥७॥

१५७. ठाकुनी आलिये तुजपाशीं। थिते मुकलिये मनुष्यपणासी॥१॥ भलें केलें विठ्ठला पिकें भरला साउला। घरीचीं कोपतीं सोडी जाऊं दे वहिला॥ध्रु०॥ संसार साउला माझा पालटुनि देसी। तरी मी होईन तुझी कामारी दासी॥२॥ संसार साउला माझा पालटुनि देसी। बापरखुमा-देवीवरा विठ्ठला गुणरासी॥३॥

१५८. में दुरर्थि कर जोडु। तान्हे सेवा न जाणु॥ १॥ मन्हारे कान्हा मन्हारे कान्हा। देखी कां नेणारे मन्हा कान्हारे॥ २॥ तान्हा मराठा देश। मन्ही बागलाणी भाष॥ ३॥ घटि पटि विजार। खंडे भाले तरवार॥ ४॥ बापरखुमादेविवरु जाण। ऐसे मन्हा कान्हा॥५॥

१५९. मज तुरंबा कां वो जिये तिये। जेणें वेधें हरि सोयरा होये। मज लावा कां वो चंदन ऐसिये परीचे। जे लाविलियाचि अनादि पुसोनि जाये वो॥१॥ मज करा कां वो कांहीं एक। जेणें करणें ठाके अशेख। सरा कांवो मज आडुनि मज पाहों द्या। आपुलें मुखगे माये॥२॥ मज श्रृंगारा कां वो तया जोगी। पुढती अंग न समाय अंगी। या मना पासोनी पढिये तो गोंवळु। तोचि तो जिव्हारीं भोगीनगे माये॥३॥ देह पालटा वो तयासाठीं। वरच या देईन अवघी सृष्टी। बापरखुमादेवीवरा विठ्ठलास योगी। तोचि तो त्यागुन भोगीये माये॥३॥

१६०.तुजविण येकली रे कृष्णा न गमे राती। तव तुवां नवल केलें वेणू घेऊनि हातीं। आलिये तेंचि सोय तुझी वोळखिलें गती॥१॥ नवल हें वालभरे कैसें जोडलें जिवा। दुसरें दुरी ठेलें प्रीति केला रिघावा॥२॥ पारुरे पारुरे कान्हा झणे करिसी अव्हेरु। तूं तंव हृदयींचा होसी चैतन्य चोरु। बापरखुमादेवीवरा विठो करि कां अंगिकारु॥३॥

१६१. जळधराच्या धारीं सिंधुजळ जयापरी। पुरोनिया उरे महावरीरे गोवळा॥ तेजें शोकलें काईं आणावया गेलें। तैसी नवल तुझी कुसरीरे गोवळा॥१॥ चाळा लाउनि गोवितोसी दाऊनियां लपसी। लपोनि केऊता जासी तैसी माव न करी आम्हासिरे गोंवळा॥२॥ वायु काय वोखट चांग विचारूनी वाजे। तयाविण कवण ठावो असे॥ तो आपुलि चाडा करि कोडिवरी येरझारा। सेखीं गगनीं सामावला दिसेरे गोंवळा॥३॥ आकाश तेंचि अवकाश तुजमाजि हें विश्व कीं तूं विश्वीं अससी। बापरखुमादेवीवरा विठ्ठला न बोले। तुझें वर्म बोलतां निकरा झणे जासीरे गोंवळा॥४॥

१६२. लेकुरें नसतील काय घरोघरीं काय न वीये ते माया। परि हे दशा वेगळी न बाईहो। हा

न ये त्या आधीं जीव निघों पाहे। आला तरी उरो नेदि कांहीं। जाय तरी जाय। डोळे तळमळिता ठाये। लांचावला जिऊ। राहेगे बाईये॥१॥ तमाळनिळें चांदिणें वो वारि वोवराल आपुलीयेस बये। हें मूळदृष्टी पुढें रिघोनिया झाडा घेत आहे। येणें कान्हयें कासाविस केलेंगे माये॥२॥ नेणो कैसे बाळसें। डौरलें डोळां लासे। माजि महुरजता हे हांसे। भोळिवेचे। देखिलियाचि पुरे। घालुनि दृष्टीचें भुरें। मग तें हृदयीं वावरे। इच्छावसेंगे माये॥३॥ थुरथुर करितु। शक्ति भोळी वाचालतुं। मुग्द्लें गुणें बोलतुगे माये॥ असाबतु सावळिया प्रभा डोळसु नभाचा गाभा। कटीं कर ठेऊनियां उभा। हेंचि जाणगे माये॥४॥ पाहों याची नवलपरी। बरवेपणाची हाउली वरी। दृष्टी करवी झोंबवी। यासि कवण वारी॥ आम्हीच साहातों अळी। परी हे चुबडी भली। रिघोनिया आड घाली। अगंकांतीगे माये॥५॥ पहा वो याचा खेळु आमचे नासे। कोपो तरी खदखदां हांसे। जी जी बाळा म्हणों तरी रुसे वो॥ राहो नेदी सुखें। न राहे निमिष एके। वारा कां गोडी सेविखें। कान्हो दिठीचें माये॥६॥ आतां येईल म्हणोनि सांपडऊं द्वारें। आडऊं तंव झळाळित दिसताहे उजियेडें। भितरींच्या भितरी लांबा धुमाळु चाचरु। मांडी कामापाडीं आवारुगे माय॥७॥ गाऱ्हाण्याचें निमिसें। गौळणी उचंबळता हे ब्रह्मरसें। वान वसे चोपसें। कृष्णाचेनि॥ मालाथुन एक मोहरें। देवपण धाडिलें अनुरे। भावो किं देवों बैसवाल धुरें। पुसे निवृत्तिदासु॥८॥

१६३. आधाराचक्रीं निवणें मांडिलें कैसां डेरिया उपचार केला। तिन्ही संयोग गोमटें घुसळण रविबजो मेरु वो। तेणें आणलें समयातें तेथें वरुवचन लाधलें निरुतें वो॥१॥ विद्यापात्रें गौळणी मंथन करूं ब्रह्मज्ञानी वो। चाल निज निज पंथें कैसें नवनीत आणिलेंसे हाता वो॥ध्रु०॥ गुरुउपदेशें रवि धरी अधऊर्ध्व मांजरी पांचै प्राण मंथन केलें निरुतेंवो। ईडा पिंगळा कुंडलणीया ब्रह्मसूत्र दोरु तो आणिया वो। उभी राहोनि गगनीं अनुहातें अंबर गर्जे वो॥२॥ मन एकतत्वीं करी वो। चित्त दृढ धरी वो। तयामाजि न विसंबे कांहा। ऐसा गोरसु चोखटु। मोलेंविण येतसे फुकटु। यासि न वचे कांहीं। चित्त बैसे समरसें ठाईवो॥३॥ गौळणी गोमटी हातिं कसवटी क्षीरा नीरा निवाडा करी वो। मेघडंबर न विसंबे तेथें घुसळितां थेंबु जो नुसळे वो। जन पाडलेसे धंदा गोरसा गोडी नेणती अंधे वो॥४॥ काया हे नगरी गौळणी गोरसु पुकारी नवहि दारवंटे सांडुनि वो। दशवेद्वारीं पातली कैसी विनटली गोविंदींवो। दंभ विकरा जाला अधर्म धर्म लोपला वो। अवघी काया झांकुळली बापरखुमादेविवरा विठ्ठलीं वो॥५॥

१६४. ज्ञान हेंचि गाय दुध दुहिलें भरणा दोही तया जना हातु नाहीं। ठेविलें अग्निवरी अग्नि नाहीं भीतरी। तापलें पडिभरी साय आली॥१॥ गौळणी चतुरे झडकरी। जाय मथुरे विकरा करी॥२॥ दहियामहियाविण घातलें विरजण। मांडिलें घुसळण रवियेवीण। करिती मंथन वरी आलें जीवन। एकलें आणून काढूं पाहे॥३॥ आलें गिऱ्हाईक। न विकी तूप ताक। नेणती विवेक। गोरसाचा॥ दहियामहियाच्या करुनी घागरी। लटकी उंबरा उबरी। काय करूं॥४॥ ज्ञान हे घागरी। वाईयेली शिरीं। गोरसभीतरीं दाखवितो। एके हातें सावरी। झाकी तया वरी। चोखटिव करी। गोरसाची॥५॥ तंव मार्गी जातां। एकी पुसे गौळणी। पारि बैसले दानीं किं। नाहीं वो। त्यासी नेदीं मी दान। जाईन मी आपण। प्रत्यक्षा प्रमाण। काय करूं॥६॥ ऐसी पाराजवळी गेली। तंव शब्दें वोळखिली। जावों दे गा वहिली। उसिरु जाला॥ या निर्वाणींच्या बोला। सुखिया संतोषला। निरोप दिधला। गौळणीसी॥७॥ ऐसी पावली मथुरा। क्षण न लगे विकरा करा। सर्वेंचि एकसरा। उफखा झाला॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु ग्राहिक मानसीं गोरसु ज्ञानेंसि। मिळोनि गेला॥८॥

१६५. चालतां लवडसवडी। बाहुली मुरडली। माथां गोरसाची दुरडी। जाय मथुरे हाटा॥ सवेंची विचारी जिवीं। महियाते सादावीं। तंव तो अवचिती पालवी। नंदनंदनु॥ पाहेपां सुखाचेनि मिसें। झणी करी अनारिसे। तेव्हां उरलें तें कैसें। माझें मनुष्यपण॥ विनवी सखीयातें आदरें। तुह्मीं गुह्याचीं भंडारे। अघटित घडिलीं या शरीरें। प्रगटीत न करा साजणी वो॥१॥ काय करणें वो काय करणें वो। देखोनी सांवळा तनु। लुब्धला माझा मनु। लागलेंसें ध्यानु। द्वैत निवडे ना। डोळा भरूनिया बाळा देखे श्रीरंगु सांवळा। वेध वेधल्वा सकळां। गोपी गोविंदा सवे॥ ठेला प्रपंचु माघारा। भावो भिनला दुसरा। पडिला मागिल विसरा। कैचें आपुलेंपण॥ सहज करितां गोष्टी। पाहातां पडिली मिठी। जाली जन्में साठी। सखियेसाजणी वो॥२॥ ऐसें सोसितां सोसणी। सखी झाली विरहिणी। आतां मथुरा भुवनीं। मज गमेल कैसें॥ सरलें सांजणें विकणें। निवांत राहिलें बोलणें। पूर्ण गोरसा भरणें। माथा त्यजूनिया॥ जाली अकुळाचें कुळ। तनु जाते बरळ फिटलें भ्रांतीपडळ। दोन्ही एक जालीं॥ बापरखुमादेविवरीं। अवस्था लाऊनि पुरी। भावें भोगूनी श्रीहरी। मन मुक्त साजणी वो॥३॥

१६६. दुडिवरी दुडि साते निघाली। गौळणी गोरसु म्हणों विसरली॥१॥ गोविंद घ्यावो दामोदर घ्यावो। तव तव बोलती मथुरेच्या वो॥२॥ गोविंद गोरसु एकचि नांवा। गोरसु विकूं आलें तुमच्या गांवा॥३॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठलेंसी भेटी। आपुले संवसाटी करूनि ठेला॥४॥

१६७. रांगतु रंगणीं चोरितु लोणी धांवोनि धरिती गौळणी। बांधतिचरणीं देति गाऱ्हाणीं यशोदे साजणी। दधि घृत भक्षून तमाळनीळें नवल केलें साजणी॥१॥ कृष्ण आळिवा आळिवा। परतोनि मातें दावा॥ध्रु०॥ कृष्णा कान्हा मधूसूदना कामिनी मनमोहना। योगि ध्याना हरस्मरणा। गोपी ध्याना। मानिती कान्हा। बोलती यमुना॥२॥ नेणवसी नेणवसी। आकळु तूं नाकळसी॥ध्रु०॥ इंद्रनिळा श्रुति जनकिरळा। सुरी जघन सांवळा। कंठीं माळा कौस्तुभ गळा। प्रीति तुळसी दळा। कांसे शेला सोनसळा उभा बळिभद्राजवळा॥३॥ कृष्ण सांवळा डोळसु। सहजे परमहंसु॥ध्रु०॥ सदानंदा श्रीमुकुंदा। श्रीहरि परमानंदा। आनंदकंदा। अभय प्रल्हादा। पावकनादा धेनुलुब्धा। गोविंदा गोपाळा॥४॥ कृष्ण आमुचा आमुचा। खेळिया गौळियाचा॥ ध्रु०॥ कर्पुरगौरा मन स्थिरा। पुराण गुणगंभिरा। विरादिवीरा महाविरापांडवदळ साहाकारा। मथुरा नगरा कंसासुरा। शिक्षा लाविसी चाणुरा। अति सुंदरा तूं पेंडारा॥ बापरखुमादेविवरारे॥५॥ जाणितलें जाणितलें माझें मज दिधलें॥ध्रु०॥

१६८. कान्हया गोवळु वारिलें न करी। दसवंती सांगे नंदा अवधारी॥ चौघी माया श्रृंगार करिती। तेथें विघ्नेश्वरु जाले मुरारी॥१॥ आनंदें दोंदिलु नाचे गदारोळें। पायीं घागूरलि नेंवाळें॥ चर्मचक्षू पडले वेगळे। काढूनियां ज्ञानचक्षु दिधलें डोळेगे बाईये॥२॥ गौळणी दाहा बारा मिळोनि सोळांची टोळी। एकी म्हणती यातें उभाचि कवळु मा काय करिल ते गौळणीगे बाईये॥३॥ आणिकी एकी साचा बोले त्याउपरी असे त्या नागिणी। काय सांगों तिचेविण बहुसाल ते राहिलीसे भानुते धरूनी॥४॥ तव मुक्ता दोन्ही आलिसे धांवोनि म्हणती कृष्णा तूं निघ येथुनि। तीन नानावि तुझा पाठींच लागतील औठावे राहे धरूनि॥५॥ गौळणी म्हणती बाळा कान्हारे। वेल्हाळा सांडीरे। या मना आळारे। ऐसें ऐकोन बापरखुमादेविवरें विठ्ठलें पवनु गिळितया वेळारेरे॥६॥

## विरहिणी.

१६९. माझी शंका फिटले। लाजा सांडिले। आवघे घातलें। मज निरसुनियां॥१॥ अठरा भार वनस्पती। सुरवर वोळंगती। देवोदेवि आदिपती।

कृष्ण काळागे माये॥२॥ ऐसा कृपानिधि सांवळा। कीं बापरखुमादेविवरु गोंवळा। त्याचा मज चाळा। बहु काळागे माये॥३॥

१७०. पांचा दामांचा घोंगडा नेसेन। उरली मोट ते मी जेविनगे बाईये॥१॥ कामारि कामारि कामारि होऊन। या गोपाळाचें घरीं रिघेन गे बाईये॥२॥ त्याचा उंबरा उसिसा करीन। वरि वेरझार मी सारीनगे बाईये॥३॥ निवृत्ति ज्ञानदेवा पुसतिल वर्म। त्यासि कामीन पुरेनगे बाईये॥४॥

१७१. जागृती पुसे साजणी। कवण बोलिलें अंगणीं। निरखितां वो नयनीं। वृंदावनीं देखियला॥१॥ मनीं वेधु वो तयाचा। पंढ- रीरायाचा॥२॥ स्वप्न सांगे सुषुप्ती। असे ममता हे चित्तीं। विठ्ठल होईल प्रतीती। मग गर्जती तुर्ये॥३॥ मग बोलों नये ऐसें केलें। मन उन्मनीं बोधलें। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलें। थितें नेलें मीं माझें॥४॥

१७२. सांवळिये बुंथी सांवळिया रूपें। सांवळिया स्वरूपें वेधियेलें॥१॥ काय करूंगे माये सांवळें न सोडी। इंद्रियां इंद्रियां जोडी एकतत्त्वें॥२॥ कैसें याचें तेज सांवळें अरुवार। कृष्णीं कृष्ण नीर सतेजपणें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्तीचे खुणे। सांवळेची होणें यासी ध्यातां॥४॥

१७३. श्यामाचिया घरा वासना पैं नेती। मनें मन गुंती तये रूपीं॥ बिंबाचें रूपस छाया पै घनदाट। दिननिशीं अविट श्यामतेज॥१॥ तें रूप देखिलें कोण्या भाग्ययोगें। निवृत्तिप्रसंगें आम्हां घरीं॥२॥ दिठिवेचेनि वोपें सानुलें स्वरूप। नुराली वालिप कल्पनेची॥ सांठवले आकार इंद्रियांच्या वृत्ति। श्यामतेजें दिप्तीं धवळलें॥३॥ निराशा संचली आशा पै सार। अनादी अमर तनु जाली। बापरखुमादेविवर विठ्ठलीं गळालें। ब्रह्मसुख सोहळे आम्हां घरीं॥४॥

१७४. मनें करुनि कुटिल उकलुनि श्रृंगारें। ते लावण्याच्या अपारें पडिलें वो माये॥१॥ माझें कुटिळपण गेलें कुटिळपण गेलें। गोविंदें वोजाविलें निजरूप वो माये॥२॥ बापरखुमादेविवरु माझें कुटिळ फेडूं आला। विटेवरी मालाथिला निजरूपें वो माये॥३॥

१७५. येणेंरूपें पाहावासी तरि असुमाय होसी। माझ्या मना नाकळसी सांवळ्या॥१॥ सगुणपणाची तुझी पडिलिसे मिठी। केली जीवा साटी सांवळ्या। वेधला जिऊ माझा सिकवाल काई। सगुणें ठाईं वेधियेलें॥२॥ ये अंगणीं अवचिता देखिला बोलता। कोण ऐसा निरुता न कळेगे माये॥ सगुण म्हणौनि धरूं गेलें पालवीं। तंव नवलपणाची ठेवी प्रगट केली॥३॥ आंतु बाहेरी कांहीं नकळे वो मज। आपआपणया चोज वाटोनि ठेलें॥ बापरखुमादेविवरें माझें मीपण चोरुनि नेलें। आपणा ऐसें केलें बाईयांवो॥४॥

१७६. कृष्णें वेधली विरहिणी बोले। चंद्रमा करितो उबारागे माये। न लवा चंदनु न घाला विंजणवारा। हरिविणें शून्य शेजारुगे माये॥१॥ माझे जिवींचें तुम्हीं कां वो नेणा। माझा बळिया तो पंढरीराणा वो माये॥२॥ नंदनंदनु घडी घडी आणा। तयाविण न वचति प्राण वो माये॥ रखुमादेविवरु विठ्ठलु गोविंदु। अमृतपानगे माये॥३॥

१७७. सांवळे परब्रह्म आवडे या जिवा। मनें मन राणिवा घर केलें॥१॥ काय करूं सये सांवळें गोंवित। आपेआप लपत मन तेथें॥२॥ बापरखुमादेविवरु सांवळी प्रतिमा। मनें मनीं क्षमा एक जालें॥३॥

१७८. पैल विळाचियें वेळीं। आंगणीं उभी ठेलिये। येतिया जातिया पुसे। विठ्ठल केउतागे माये॥१॥ पायरऊ जाला संचारु नवल। वेधें विंदान लाविलें म्हणे विठ्ठल विठ्ठल॥२॥ नेणें तहान भूक। नाहीं लाज अभिमान। वेधिलें जनार्दनी। देवकीनंदना लागोनीगे माये॥३॥ बापरखुमादेविवरु जिवींचा जिवनु। माझे मनिंचे मनोरथ पुरवीं कमळ नयनुगे माये॥४॥

१७९. निळिये निकरें कामधेनु मोहरे। निळेंपणेसरे निळे नभीं॥१॥ घुमत घुमत निळेमाजि मातु। निळेपणीं देतु क्षेम कृष्णीं॥२॥ निळिये सागरीं निळे निळेपणें सुंदरी। रातलीसे हरि विरहिणी॥३॥ ज्ञानदेव सांगे निळियेचे बागे। निळसंगे वोळलेगे निळीमाजी॥४॥

१८०. मग मुरडूनि घातले मनानें। थोर मारु तेथें होत असे॥१॥ पुरे पुरे वो आतां जिणें तें केउतें। येणें वो पंढरिनाथें वेधियेलें॥२॥ नचले नचले कांहीं करणें कामान। याचें पाहाणेंचि विंदान कामानिया॥३॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलासी भेटी। संसाराची तुटी जालीगे माये॥४॥

१८१. निळियेच्या निशीं विरहिणी पिशी। शेजबाजे कैशी आरळ शेजे॥१॥ कृष्णासंगे वाली विव्हळ जाली निळी। चंदन अंगीं पोळी विरहज्वरें॥२॥ ज्ञानदेव प्रेम निळारूप रूपसें सोहळा॥ कृष्णवेधें वेधली वो लाभली वसे॥३॥

१८२. गुणाचेनि आटोपें आकारलें ब्रह्म। भक्तभाग्य सम आलेंसे॥१॥ चैतन्य परिपाठीं ठासा घडलासे साकार। कृष्णचि आकार गोकुळीं रया॥ त्या रूपें विधिलें काय करूंगे माये। नाम रूप सोय नाहीं आम्हां॥२॥ सबाह्य सभोवतें चतुर्भुज सांवळें। सर्वभूतीं विवळे कृष्णरूपें॥ हारपले आकार कृष्णचि क्षरला। वेदांसि अबोला श्रुतीसहित॥३॥ ऐसें परब्रह्म सांवळें दैवत आमुचे। आतां आह्मां कैचें क्रिया कर्म॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु दैवत। मनें घर तेथें चरणीं केलें॥४॥

१८३. सांवळी प्रतिमा घेऊनि सकुमार। खेळत सुंदर गोकुळीं रया॥१॥ त्या रूपें वेधिलें काय करूं माये। अवघें निर्गुणचि होय पाचारीतां॥२॥ मीपणा ठाव नुरेची पैं सर्वथा। प्रपंचाची कथा ब्रह्म जाली॥३॥ बापनिवृत्तिराजे दावितातीं खुण। नाम नारायणा पाठ कीजे॥४॥

१८४. आजि शुभ लवे लोचनु हरिखे सांगतांहे शकुनु स्वप्न देखिलें सुंदरी। अळंकार लेववा चंदन चर्चावा जाति जुती पार्यातिके शेंवती करा आइती सेजारीं॥ शेला काढा कां मेचुचा हा दिन दैवाचा। सोहळा तो आमुचा मंदिरींगे माये॥१॥ गुढिया उभवा मखरें श्रृंगारा भेटी होईल आळंगी। स्फुरण आलें बाहीं क्षेमालागीं पाहीं काचोळी न समाये अंगींगे माये॥२॥ जिवीं जीव सुंदर त्याचेनि सचार तो मज भेटवा सुखाचा विसावा। सुमनें उकलिलीं नित्य दे माळी उचित करि तथा भावा। आजि वेळु कांवो लाविला नेणों पंथीं सीणला बुझाऊं जाऊं त्याच्या गांवागे माये॥३॥ हृदयीं निर्भर प्रेम वारंवार माझें चित्तीं राहो ऐक्य मज। दुजिये वस्तुलागीं रुत जाय माधवी मन्मथ करिताहे वोज। ऐसी तेथवरी जाईन सुखाची होईन नाचेन आनंदाचे भोजेंगे माये॥४॥ ऐसा विपरीत लाघवी लपे सवेंचि दावी वसिपे चौके। अभ्यासें अंतर पडलें येणें तरि मी त्यजीन जिणें म्हणोनि विनवितसें चतुर सुरेखें। रात्रीचा ठायीं देख मेघशाम बोलला अंबरीगे माये॥५॥ ऐसिये निवांत मूर्ति ऐकोनि ठेली श्रुती। आकर्षोनि चित्तचैतन्य भरोनि ठेले लोचन॥ ध्यानीं विसर्जिलें मन परमात्मया रामा तूं एक लाघवी सावेव पावलें ज्ञान। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला सुमन संयोगीं आजी सत्य जालें माझें स्वप्नगे माये॥६॥

१८५. त्रिभुवनिंचें सुख पाहावया नयनीं। दिनरात्रीं धणी न पुरे माझी॥१॥ विटेवरी सांवळा पाहतां पैं डोळां। मन वेळोवेळां आठवितु॥२॥ सागरीं भरीतें दाटे तैसें मन नटे। वाट पाहों कोठें तुझी रया॥३॥ बापरखुमादेविवरु पूर्ण प्रकाशला। कुमुदिनी विकासला तैसें जालें॥४॥

१८६. मायबापें आमचीं विठोबा रखुमाई निजाची। त्याचीये गांवींची कोण्ही येतु न्यावया॥१॥ माझा विसावा माहेर पंढरपूर वो। ऐशी वाट पाहातसे जरु॥२॥ ये सासुरा आमुची बहु बाहरु। काम क्रोध मद मत्सरू। मज आटिती दीरु॥३॥ अहंकार खेदिताहे भावा। दंभ प्रपंच

या जावा। येरुनु येरा घालिती हेवा। आपुल्या सवा ओढीतसे॥४॥ आवो चिंतेवोही निके वोढाळे। तुज मज ठायींचें वेगळें। वोढूनि नेसी आपुल्या बळें। तुझ्या सळें नांदतसे॥५॥ आशा लागलीसे सर्पिणी। ग्रासूं पाहातसे पापिणी। रामनामाचिया ध्वनी। आइकों नेदीये श्रवणीं॥६॥ माझें सत्वबळारथीं। धीरु धर्म हा सांगाती। संतीं सांगितलें निवृत्ती। तरी मी जीवें वांचलिये॥७॥ ऐसी दगदगल्यें सासुरवासा। विठोबारखुमाई माझा कुवासा। निवृत्ति दासु तयाचा। जन्मोजन्मीं वोळगणा॥८॥

१८७. पंढरपुरींचा निळा लावण्याचा पुतळा। विठो देखियेला डोळां बाईयेवो॥१॥ वेधलें वो मन तयाचियां गुणीं। क्षणभर विठ्ठलरुक्मिणी न विसंबे॥२॥ पौर्णिमेचें चांदिणें क्षणक्षणा होय उणें। तैसें माझें जिणें एक विठ्ठलेंविण॥३॥ बापुरखुमादेविवरु विठ्ठलुचि पुरे। चित्त चैतन्य मुरे बाईये वो॥४॥

१८८. पैल तो गे काऊ कोकताहे। शकूनगे माये सांगतसे॥१॥ उडरे उडरे काऊ तुझे सोन्यानें मढीन पाऊ। पाहुणे पंढरीराऊ घरा कैं येती॥२॥ दहिंभाताचीं उंडी लाविन तुझ्या तोंडी॥ जीवा पढिये त्याची गोडी सांग वेगीं॥३॥ दुधें भरूनी वाटी लावीन तुझे वोंठीं। सत्य सांगे गोठी विठो येईल कायी॥४॥ आंबयां डाहाळीं फळें चुंबी रसाळीं। आजिचेरे काळीं शकून सांगे॥५॥ ज्ञानदेव म्हणे जाणिजे ये खुणें। भेटती पंढरीराणे शकुन सांगे॥६॥

१८९. सुखाचिये गोठी सुख आलें भेटी। तया लाभाचिये साठीं जीव वेचिलागे माये॥ तंव अवचितें सगुणरूप भरलेंसें नयनीं। बोलतां अंगणीं म्यां वो देखियेलें॥१॥ जिवाचा जीऊ माझा भेटवा यादवराजा। उचलल्या चारी भुजा देईल क्षेम॥२॥ न करा उपचार न रंगे हें मन। दृष्टिपुढें ध्यान ठसावलें। आवडी गिळूनि येणें सुख विहरोनी ठेले। चित्त माझे गोविलें गोवळेनी॥३॥ आतां भरोवरी उरवितां नुरे उरी। आनंदें अंतरीं कान्हो संचरला॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठल निर्गुण। तो सुखाची सांठवण गिळूनि ठेला॥४॥

१९०. घनु वाजे घुणुघुणा। वारा वाजे रुणुझुणा। भवतारकु हा कान्हा। वेगीं भेटवा कां॥१॥ चांदवो चांदणें। चापेवो चंदनु। देवकी नंदनु। विण नावडे वो॥२॥ चंदनाची चोळी। माझें सर्व अंग पोळी। कान्हो वनमाळी। वेगीं भेटवा कां॥३॥ सुमनाची सेज। सीतळ वो निकी। पोळे आगिसारिखी। वेगीं विझवा कां॥४॥ तुम्हीं गातसां सुस्वरें। ऐकोनि द्यावीं उत्तरें। कोकिळें वर्जावें तुम्हीं बाइयांनो॥५॥ दर्पणीं पाहातां। रूप न दिसे वो आपुलें। बापरखुमादेविवर विठ्ठलें। मज ऐसें केलें॥६॥

१९१. जीवाचिया जीवा प्रेमभावाचिया भावा। तुज वांचूनि केशवा अनु नावडे॥१॥ जीवें अनुसरलिये अझून कां नये। वेगीं आणा तो सये प्राण माझा॥२॥ सौभाग्यसुंदरु लावण्यसागरु। बापरखुमादेवीवरु श्रीविठ्ठलु॥३॥

१९२. मी माझें म्हणतां ठकचि ठेलिये। आपुले जाति कूळ विसरूनि गेलिये॥१॥ गुणाचा दुकाळ पडिला देशीं। निर्गुणासी कैसी रातलिये॥२॥ बापररखुमादेविवरु विठ्ठलु सये। सेजारासी नये काय करूं॥३॥

१९३. अवचिता परिमळु झुळकला अळुमाळु। मी म्हणे गोपाळु आलागे माये। चांचरती चांचरती बाहेरी निघालें। ठकचि मी ठेलें काय करूं॥१॥ मज करा कां उपचारु अधिक ताप भारु। सखिये सारंगधरु भेटवा कां॥ध्रु०॥ तो सांवळा सुंदरु कासे पीतांबरु। लावण्य मनोहरु देखियेला॥ भरलिया दृष्टि जंव डोळां न्याहाळी। तव कोठें वनमाळी गेला गे माये॥२॥ बोधोनि ठेलें मन तंव जालें अने [illegible]। सोकोनि घेतले प्राण माझेगे माये। बापरखुमादोविवरु विठ्ठल सुखाचा। तेणें

कायामनेंवाचा वेधियेलें॥३॥

१९४. पेंडारा दाऊनियां थोकसी। देखिलें पण केविं जाये अंग लपविसी। तरी वेधा काय करिसी। मा शहाणपण तुझें नव्हेरे गोंवळा॥१॥ आम्ही येकविध जीवें तुवा केलें अधातुरें वर्षावो वोसरलिया बोल्हासु जाय तैसी न होत प्रेमळ उखरे गोंवळा॥२॥ देखी गुंफलिया फुलें डाळलिया आहाच तंव कांहीं न दिसेरें। परि घ्राणा इंद्रियांच्या अंगसुखा समर्थ कोण असेरे गोंवळा॥३॥ या बोला मानवोंनि बापरखुमादेविवरे विठ्ठलें दिधलें आप आपणियातें। तैंपासुनि तें लपणेंचि पारुषले उभा पंढरिये येणें वेषेंरे गोंवळा॥४॥

१९५. जातिकुळ माझें गेलें हारपोनि श्रीरंगावांचुनी आनु नेणें॥१॥ किती वो शिकवाल मज वेळोवेळां। मी तया गोवळा रातलिये॥२॥ अष्टभोग भोगणें माते नाहीं चाड। भक्तिप्रेम गोड लेईलेंगे माये॥३॥ बापरखुमादेवीवरु जीवींचा जिव्हाळा। कांहीं केलिया वेगळा नव्हेगे माये॥४॥

१९६. ज्याचिये आवडी संसार त्यजिला। तेणें कां अबोला धरिलागे माये॥ पायां दिधली मिठी घातली जीवें गांठी। साऊमा नये जगजेठी उभा ठेलागे माये॥१॥ भेटवा वो त्यासी चरण झाडीन केशी। सगुणरूपासि मी वो भाळलिये॥२॥ क्षेमालागीं जीउ उतावेळ माझा। उचलोनि चारी भुजा देईन क्षेम॥ कोण्या गुणें कावो रुसला गोवळु। सुखाचा चाबळू मजसी न करीगे माये॥३॥ ऐसें अवस्थेचें पिसें लाविलेसें कैसें। चित्त नेलें आपणिया सारिसेंगे माये॥ बापरखुमादेविवरें लावियेलें पिसें। करूनि ठेविलें आपणिया ऐसेंगे माये॥४॥

१९७. देऊनियां भेटी मजसी न करी गोठी। लांचावला जीउ पाठी न राहेवो। निष्ठुर म्हणो तरी अपंगीतो मातें। व्यापूनि जीवातें उरी उरवितो॥१॥ तो दाखवावो माये धरिन त्याचे पाये। तयालागीं जीऊ आहे उतावेळु॥२॥ भेटीचेनि सुखें मनचि होय मुकें। तें रूप देखें परि बोलावेना॥ सगुण गुणाचा म्हणोनि घातली मिठी। तंव तो आपणया समसाठीं करूनि ठेलें॥३॥ काय नेणों कामाण कैसें वो जालें। चित्त चोरुनि नेलें गोवळेनें॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठले अंग लपवूनि। चैतन्य चोरुनि नेणों माये॥४॥

१९८. सुख सेजारीं असतां कळि जाली वो पाहतां। देठु फेडूनि सेवतां अरळ केलें॥१॥ अंगणीं कमळणी जळधरू वोले करी। वाफा सिंपल्यावरी वाळून जाये॥२॥ मोतियाचें पाणी वाहे निळिये सारणी। गुणाची लावणी लाऊनि गेला॥३॥ अंगणीं वोळला मोतें वरुषला। धन्य दिवसु जाला सोनियाचा॥४॥ चोरट्या मधुकरा कमळीं घेतलासे थारा। मोतियांचा चारा राजहंसा॥५॥ अंगणीं बापया तूं परसरे चांपयां असुवीं माचया भीनलया॥६॥ वाट पाहे मीं येकली मज मदन जाकली। अवस्था धाकुली म्हणोनिया॥७॥ आतां येईल ह्मण गेला वेळु कां लाविला। सेला जो भिनला मुक्ताफळीं॥८॥ बावन चंदनु मर्दिला अंगीं वो चर्चिला। कोणें सदैवें वरपडा जाला वो माये॥९॥ बापरखुमादेविवरु माझे मानसींचा होये। तयालागी सये मी जागी सुती॥१०॥

१९९. प्रभा कळिकादीप शून्याकार हें स्वरूप। मुनिजनमानसींचें सुख येकलेपणें॥ बिंब अर्धबिंब अर्धमार्तृका तुर्या नातळे ज्यासी। आनु तो दिठी केविं धरावा। गुणातीत निर्गुणीं जे सहजीं सहजची सगुणीं विखुरेरया॥१॥ आपआपणिया पडे माय विसरु। मज आवडे तो नंदाचा कुमारुगे माये॥२॥ म्हणौनि डोळियाचे अंजन आणि मेघःशाम बुंथीचें दर्शन। निडारलें वृत्ति नयन पाहों जावो। तेथें तो अनुमतें नलगे मतांतरें भावें देखणे होय देवोरया॥३॥ डोळ्याचा डोळसु विचरे हा परेशु तोचि परमात्मा सर्वी असे। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु उघडा पुरविला सौरसुगे माये। आम्हां जितांचि मरणें किं मेलिया कल्पकोटी जिणें। निवृत्तीनें

दाविला परेशु रया ॥ ४ ॥

२००. भेटिसी गेलीये तंव तीच जालिये। भुलली ठेलिये मज न कळे कांहीं। परतलिया दृष्टी जंव मागुता न्याहाळी। तंव काळी ना सावळी मूर्ति चोजवेना ॥ १ ॥ काय सांगो माये न कळे तयाची सोये। येणें मनाचे मोडुनि पाये वेधियेलें ॥ २ ॥ आंतु बाहेरी कैसी भरलेनि रंगें। क्षेम देऊं गेलें अंगें तंव तो जडूनि ठेला ॥ वारितां नावरे काय सांगो माय गोटी करूनि ठेला साठीं जीवित्वेसी ॥ ३ ॥ आशेचिये हावे तंव तो परतीचा धावे। निराशेसी पावे वेळु न लागतां। बापरखुमोदीववरु विठ्ठलीं उपावो। ज्ञानदेवा भावो निवृत्तिपायीं ॥ ४ ॥

## गाईच्या रूपकानें हरीचें वर्णन

२०१. आधी चरे पाठी प्रसवे। कैसी प्रतिदिनी गाभास जायेरे। विउनियां वांझ जालीरे। ती उन्हाळा मासां वोळलीरे कान्हो ॥ १ ॥ दुहतां पान्हा न संवरेरे। पैल पर्वता सुटले झरेरे कान्हो ॥ २ ॥ मोहें वाटायाच्या चाडेरे। दोहीं तयावरि पडेरे। वत्स देखोनि उफराटी उडेरे। तया केलीया तिन्ही बाडेरे कान्हो ॥ ३ ॥ तिहीं त्रिपुटी हे चरतां दिसेरे। तिहीं वाडियां वेगळी बैसेरे। ज्ञानदेव म्हणे गुरुतें पुसारे। ते वोळतां लयलक्ष कैसेरे कान्हो ॥ ४ ॥

२०२. गावी तिचें निरंजनीं वाडेरे। तीसवें पाडेरे। तिनें दैत्य मारिले कुवाडेरे गाईचें सांगतां बहुत कुवाडेरे कान्हो ॥ १ ॥ ते सांग पा धेनु कवण रे। तिसी नाहीं तिन्हीं गुणरे कान्हो ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुरे। ते उभी पुंडलिकाचे द्वारींरे कान्हो ॥ ३ ॥

२०३. तिही त्रिपुटीचे वाडेरे। सवालक्ष चरावया जायरे। ते दैत्यापाठी हुंबरत लागेरे। भक्ता घरीं दुभे सानुरागेरे कान्हो ॥ १ ॥ तिचें नाम शांभवी आहेरे। तिची रूपरेखा कायरे कान्हो ॥ २ ॥ येकी चौमुखी गाय पाहेरे। तिचा विस्तार बहू आहेरे। तिच्या नाभिकमळीं जन्म वासु सांगेरे। तिसी आदि पुरुषु बापमायेरे कान्हो ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु पाहींरे। ते भक्ता ओळली आहेरे। ते दोहतां भरणा पाहेरे। चारी धारा वर्षत आहेरे कान्हो ॥ ४ ॥

२०४. काळी कोसी कपिला धेनुरे। तिचें दुभतें काय वानुरे। तिसी बापमाय दोन्ही नाहींरे। ते असक्रिया वेगळी पाहेरे कान्हो ॥ १ ॥ ते अखरीं चरेरे। सर्वसाक्षी वरती जायरे कान्हो ॥ २ ॥ पैल येकी सहस्त्रमुखीरे। तिहीहूनि येकी आहेरे। तिचीं नावें अनंत पाहेरे। तिसी बापमाय कोणरे कान्हो ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरी विठ्ठली पाहेरे। ते पुंडलिकाचे द्वारीं जायेरे। तिचें दुभतें अपरंपाररे। तें दुभतें सहस्त्रधारीरे कान्हो ॥ ४ ॥

२०५. आगरींचे क्षीर सागरीं पैल डोंगरी दुभते गायरे। दोहों जाणे त्याचे दुभतें जेवित्याची मेलि मायरे ॥ १ ॥ कान्हो पाहालेरे कान्हो पाहालेरे नवल विपरित कैसें। जाणत्या नेणत्या झांसा पै चतुरा लागलें पिसें ॥ २ ॥ पाणियानें विस्तव पेटविला। वारियानें लाविली वाती। आपें आप दीप प्रकाशला। तेथें न दिसे दिवस रातीरे ॥ ३ ॥ खोकरीं आधन ठेविलें। तेथें न दिसे माझी भाक। इंधनाविण पेटविले। तेथें चुलि नाहीं राख ॥ ४ ॥ जाणत्या नेणत्या झांसा। पैल चतुरा बोलिजे ह्याळीं। निवृत्तिप्रसादें ज्ञानदेव बोले ढिवर पडिले जाळीं ॥ ५ ॥

२०६. साई खडियातें घेवोनिया माते। तैसा संसारातें येत रया ॥ १ ॥ सोय ध्यान उन्मनि पांचांची मिळणी। सत्रावीचे कानीं गोष्टी सांगे ॥ २ ॥ दुभोनिया खडाणि नैश्वर्य ध्याय गगन। चेतलिया मन क्षीर देत ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवीं समभाव त्रिगुणी नाहीं ठाव। आपेआप राणिव साई खडिया ॥ ४ ॥

## एकविध

२०७. काय करिसी सकळ देवांचें वैभव विलास। माझिया स्वामीविण ते अवघे उदास रया ॥ १ ॥ तपन त्या कमळा कमळीं विकाशु। सुकवि मयंकुरा करिसी अरे बा सुधांशु ॥ २ ॥

सातही वारांचे दिवसु एकियाचि सुरिजे। तैसें सर्वा सर्वपण माजीयेन श्रीराजे॥३॥ सर्वज्ञ सुंदर देव होतुकां भलतैसे। परि जडातें चेष्टविते आणिकां पै नसे॥४॥ जया नांव नाहीं रूप चिन्ह काहीं। नामरूप चिन्ह स्वयेंचि पाहीं॥४॥ बापरखुमादेविवरु आहे तैसाचि पुरे। काय करिसी आणिकां देवांचीं गोवारें रया॥५॥

२०८. पूर्वदिशे भानु उगवला नळनी कमळणी विकासु केला। उष्णकरु अस्तु जाला सीतकरु प्रवर्तला कमळणी संकोचु केलाग बाईये॥१॥ पढियंते मानसीं बहुवसे। असे दुरी तें जवळीच वसे रया॥२॥ दोलक्षीं सोम अंबरीं। त्याचे गुण उमटती सागरीं। अंवसे कळाहीनु येरु दिसे अंधारीं। तैसा समंधु ये शरीरीं रया॥३॥ गगनीं वोळली घनुचरें तेणें क्षितिवरी नाचती मयूरें। सोम शीतळपणें कळा मिरवी अमृत घेवों जाणती ते चकोर रया॥४॥ वोळलीं स्वातीचीं अंबुटें तें तत्व झेलिती शुक्तिका संपुष्टें। येरें नक्षत्रें वरुषती निकटें काय जळ तयाचें वोखटें रया॥५॥ चातकु चंद्रातें चिंतितु। तो तयाचे मनोरथ पुरवितु। बापरखुमा-देविवरुविठ्ठलु तो मी सदां असे हृदयीं ध्यातु रया॥६॥

२०९. पतीचा जिव्हाळा म्हणोनि सासुऱ्याचे साहिजे। येऱ्हवीं वाहिजे चामाची मोट॥१॥ न पाहे वास न धरी मनीं आस। वायां निकण भुस काय उपणिसी॥२॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुचि पुरे॥ चाड नाहीं आम्हां दुजेविण॥३॥

## ज्ञानेश्वरमहाराजांचा बुद्धिरूपी सखीशीं संवाद

२१०. ममता पुसे सये जिवशिवा ठाव। पूर्णता पाऱ्हाये कोणे घरीं॥१॥ ऐके सखिये पुससी बाईये। परब्रह्म सामाये पुंडलिका॥२॥ नाहीं यासी ठावो संसार पै वावो। एकतत्वीं रावो घरीं वसे॥३॥ बापरखुमादेविवरु उदार वोळला। विश्वजनपाळा ब्रीद साजे॥४॥

२११. चित्तींचें चैतन्य रूपीचे अनुकार। रूप असे साचार नयनांमाजी। तेजाचें तेज दीपीं कळिका सामावे। दीपक माल्होवे तेज तेजीं॥१॥ काय सांगो सखिये तेज पै अढळ। इंद्रियें बरळ देखतांची॥२॥ घनदाट रूपीं एकरूप तत्व। दीपीं दीपसमत्व आप दिसे। निराकार वस्तु आकार पै अपार। विश्वीं चराचर बिंबलीसे॥३॥ प्राण प्रिया गेली पुसे आत्मनाथा। कैसेनि उलथा गुरुखुणे॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठलीं उपरति। रूपीं दीपदीप्ति एक जाली॥४॥

२१२.प्राणासवें सखि आत्मा हा बिंबला। सवेगुणी निमाला याच्या वृत्ति॥ ध्यान गेलें ठायां मन गेलें सुखा। नयनीं नयनसुखा अवलोकीं॥१॥ तेंचि सखि रूप वोळखे स्वरूप। विश्वीं विश्वरूप एका तेजें॥२॥ द्वैत पै नाहीं दिसे अद्वैत सुरवाडु। एक दीपें उजेडु सर्वा घटीं। विराल्या कामना अमूर्त परिपाठीं॥ चैतन्याची दृष्टी उघडली रया॥३॥ सखी ह्मणे सुख प्राणासि भुललें। आत्मपणें मुकलें काय करूं। बापरखुमादेवीवर विठ्ठलें रूप। दाऊनि स्वरूप एक केलें॥४॥

२१३. प्राणाची पै सखी पुसे आत्मयासी। ईश्वरीं ध्यानाची वृत्ति गेली॥ पांगुळल्या वृत्ति हरपली भावना। निमाली कल्पना ब्रह्मीं रया॥१॥ हें सुख साचार सांगे कां विचार। आत्मयाचें घर गुरुखुणें॥२॥ चेतवितें कोठें गुंफलें सगुण। निर्गुणीं पै गुण समरस॥ तें सुख अपार निळीये वेधलें। कृष्णरूप देखिले सर्वांरूपीं॥३॥ या ध्यानीं गुंफलें मनामाजि वेख। द्वैतभानसुख नाठवे मज॥ अद्वैत घरकुलें गुणाचें पै रूप। मनामाजि स्वरूप बिंबलें रया॥४॥ विस्मृति गुणाची स्मृति पै भजन। दृष्टादृष्ट जन ब्रह्मरूप॥ याचेनि सुलभे नाठवे संसारु। ब्रह्मींचा आकारु दिसत असे॥५॥ वेगी सांग ठसा कोण हें रूपडें। कृष्णचि चहूंकडे बिंबलासे। बापरखुमादेवीवरु विठ्ठल सखी। कृष्णरूपीं सुखी तनु जाली॥६॥

२१४. तत्वता पै तत्व धरितां नये हातां। मग ममतेची चिंता तयासि पुसे॥१॥ बाई कोणे घरीं सांगे वो जिवित्व। परेचें परतत्व कोणे घरीं॥२॥ सखी सांगे गोष्ठी बाईये रूप वो धरीं। आपणचि घरीं सांपडेल॥३॥ निवृत्तीनें खुणें सांगितलें ज्ञान। रखुमादेविवर ध्यान विठ्ठल वरदा॥४॥

२१५. येऊनि वऱ्हाडिणी बैसल्या टेकी। कोण तो नोवरा नाहीं वोळखी॥१॥ मी कवणाची मज सांगा कोण्ही। वऱ्हाड आलिया वऱ्हाडिणी॥२॥ कवण ते वरमाय कवण तो वरबाप। कवण तो नोवरा कवण तो मंडप॥३॥ वऱ्हाड नव्हे स्वप्नगे माये। बापरखमादेविवराचे वेगी धरावे पाये॥४॥

## संतपर

२१६. अखंड हरि वाचेसी। जरी सुकृताची राशी। तरीच हरि ये मुखासी। धन्य जन्मासी तो आला॥१॥ देखता ज्याचे चरण। यम जातसे शरण। ऐसें सुकृताचें वर्णन। कवणें करावें तयाचें॥२॥ तोचि एक साधु देखा। नित्य पुसावें त्या विवेका। तो कांहीं न धरी शंका। हरिनाम म्हणतसे॥३॥ ज्ञानदेवी निजसूत्र। तोचि धन्य शुद्ध पवित्र। हरिवांचूनि त्याचें वक्र। नेणें आणिक दुसरें॥४॥

२१७. आनंदलें वैष्णव गर्जती नामें। चौदाही भुवनें भरलीं परब्रम्हें॥१॥ नरोहरि हरि हरि नारायणा। सनकसनंदनमुनिजनवंदन॥२॥ गातां गातां नाचतां। प्रेमें उल्हासें। चराचरींचे दोष नाशियलें अनायासें॥३॥ हरि मनीं हरि चित्तीं हरि अंकु शरीरी। तयातें देखोनि हरि चाऱ्ही बाह्या पसरी॥४॥ अंघ्रिरेणु ज्याचा उद्धरितो पतिता। प्राकृत वाणी केविं वानूं हरिभक्ता॥५॥ तीर्थे पावन जिहीं धर्म लेला घडौती। कैवल्यकल्पद्रुम ते त्रिजगतीं॥६॥ मत्स्यकूर्मादिक ज्याचे महिमेसी आले। धन्य वैष्णव तेज रविशशिसीं पाहालें॥७॥ बापरखुमादेविवरा पढियंती जीया तनु। तया संताचरणीं स्थिर हो कां मनु॥८॥

२१८. श्रवणें कीर्तनें जाले ते पावन। सनकादिक जाण परम भक्त॥१॥ जाली ते विश्रांति याचकां सकळां। जीवीं जीवनकळा श्रीमूर्तिरया॥२॥ पादसेवनें आक्रूर जाला ब्रह्मरूप। प्रत्यक्ष स्वरूप गोविंदाचें॥३॥ सख्यपणें अर्जुन नरनारायणीं। सृष्टि जनार्दनीं एकरूप॥४॥ दास्यत्व निकट हनुमंतें केलें। म्हणोनि देखिले रामचरण॥५॥ बळि आणि भीष्म प्रल्हाद नारद। बिभीषणावरद चंद्रार्क॥६॥ व्यास आणि वसिष्ठ वाल्मिकादिक। आणिक पुंडलिकादि शिरोमणी॥७॥ शुकादिक योगी रंगले श्रीरंगी। परिक्षितीचा अंगीं ठसावलें॥८॥ उद्धव यादव आणि ते गोपाळ। गोपिकांचा मेळ ब्रह्मरूप॥९॥ अनंत भक्त राशी तरले ते वानर। ज्ञानदेवा घर चिदानंदीं॥१०॥

२१९. संत भेटती आजि मज। तेणें जाला चतुर्भुज। दोन्ही भुजा स्थुळीं सहज। दोन्ही सूक्ष्मीं वाढल्या॥१॥ आलिंगनीं सुख वाटे। प्रेम चिदानंदीं घोटे। हर्षे ब्रह्मांड उतटे। समुळ उठे मीपण॥२॥ या संतासी भेंटतां । हरे संसाराची व्यथा। पुढता पुढती माथां। अखंडित ठेवीन॥३॥ या संतांचे देणें। कल्पतरुहूनि दुणें। परिसा परीस अगाध देणें। चिंतामणि ठेंगणा॥४॥ या संतापरीस उदार। त्रिभुवनीं नाहीं थोर। मायबाप सहोदर। इष्टमित्र सोईरे॥५॥ कृपाकटाक्षें न्याहाळिलें। आपुल्यापदीं बैसविलें। बापरखमादेविवरे विठ्ठलें। भक्तां दिधलें वरदान॥६॥

२२०. भाग्याचा उदयो किं दैवाचि गति। मज जोडली संगती संताची॥१॥ माझें मीच भांडवल घेउनिया निगुती। लाभाची गति श्री विठ्ठलु॥२॥ देशदेशाउरा न लगेची जाणें। ठाईच जोडणें एक्या भावें॥३॥ खेपखेपांतर अनेक सोशिलें। मुदल उरलें लेखा चारी॥४॥ मुदल देउनि वाणेरा फेडिला। उत्तीर्ण जाला दोही पक्षी॥५॥ चौघे साक्ष देवउनि अंतरीं। वेव्हार ज्ञानेश्वरी खंडियला॥६॥

२२१. आकार उकार मकार करिती हा विचार। परिविठ्ठलु अपरंपर न कळे रया॥१॥ संताचे संगति प्रेमाच्या कल्लोळा। आनंदें गोपाळामाजिं खेळे॥२॥ बाळे भोळे भक्त गाताती साबडें। त्यांचें प्रेम आवडे विठोबासी॥३॥ बापरखुमादेविवरू परब्रह्मपुतळा। तेथिल हे कळा निवृत्ति जाणे॥४॥

२२२. शर्करेची गोडी निवडावया भले। साधु निवडिले सत्संगती॥१॥ सत्संगें प्रमाण जाणावया हरी। येर ते निर्धारी प्रपंचजात॥२॥ भानुबिंब पाहा निर्मळ निराळा। अलिप्त सकळ तैसे साधु॥३॥ ज्ञानदेव हरि जपोनि निर्मळ। सदा असे सोज्वळ निवृत्तिसंगें॥४॥

२२३. सोळा कळि चंद्र पूर्णिमे पूर्ण बोधु। संतजना उद्बोधु सागरन्यायें॥१॥ नित्यता पूर्णिमा हृदयीं चंद्रमा। आलिंगन मेघश्यामा देतु आहे॥२॥ ज्ञानदेवा मोहो नि:शेष निर्वाहो। रूपीं रूप सोहं एका तेजें॥३॥

२२४. खळें दान देसी भोक्तया सांपडे। ऐसें तुवां चौखडें रूप केलें॥१॥ ज्ञान तेंचि धन ज्ञान तेंचि धान्य। जालेरें कारण ज्ञानदेवा॥२॥ तळवटीं पाहे तंव रचिलें दान अपार। वेदवक्ते साचार बुझावले॥३॥ सा चार आठरे भासासी। उपरति भूसि निवडली॥४॥ मोक्ष मुक्ति फुका लाविली तुवां दिठि। तुझा तूं शेवटीं निवडलासी॥५॥ निवृत्ति केलें तुवां ज्ञाना। ब्रह्मीब्रह्म अगम्या रातलासी॥६॥

२२५. आवेगे ज्ञानजननी ज्ञाना आईगे। ज्ञाननाथेगे ज्ञानें कामधेनु तूं माझीयेगे॥१॥ ज्ञानई तूं माय माझीगे। ज्ञानाई तूं बाप माझागे॥२॥ ज्ञानाई गुरुदेव ज्ञान ध्यान। साधन परत्रपावन॥३॥ इह तुजवांचून आन मज कोणगे। बाई नुपेक्षीगे ज्ञानबहिणी॥४॥ राउळीचे कऱ्हे हारपले हाटीं। माणुसप्रति झाडा घेताती वोठी॥५॥ नवल विपरीत देखिलें सृष्टीं। माणुसप्रति झाडा येतातिवोटी॥६॥

२२६. उंच पताका झळकती। टाळ मृदंग वाजती। आनंदें प्रेमें गर्जती। भद्रजाती विठ्ठलाचें॥१॥ आले हरीचे विनट। वीर विठ्ठलाचे सुभट। भेणें जाहले दिप्पट। पळति थाट दोषांचे॥२॥ तुळसीमाळा कंठीं। गोपीचंदनाच्या उटी। सहस्त्र विघ्नें लक्ष कोटी। बारा वाटा पळताती॥३॥ सतत कृष्णमूर्ति सांवळी। खेळे हृदयकमळीं। शांति क्षमा तया जवळी। जीवेंभावें अनुसरल्या॥४॥ सहस्त्र नामाचे हातियेर। शंख चक्राचे श्रृंगार। अतिबळ वैराग्याचे थोर। केला मार षड्वर्गा॥५॥ ऐसें एकांग वीर। विठ्ठल रायाचें डिंगर। बाप रखुमादेवीवर। तींही निर्धारी जोडिला॥६॥

२२७. कुंचे पताकाचे भार। आले वैष्णव डिंगर। भेणें पळती यमकिंकर। नामें अंबर गर्जतसे॥१॥ आले हरिदासांचे थाट। कळिकाळा नाहीं वाट। विठ्ठलनामें करिती बोभाट। भक्तां वाट सांपडली॥२॥ टाळ घोळ चिपळिया नाद। दिंडि पताका मकरंद। नाना बागडियाचे छंद। कवच अभेद नामाचें॥३॥ वैष्णव चालिले गर्जत। महावीर ते अद्भुत। पुढें यमदूत पळत। पुरला अंत महादोषा॥४॥ निवृत्ति संत हा सोपान। महा वैष्णव कठीण। मुक्ताबाई तेथें आपण। नारायण जपतसे॥५॥ ज्ञानदेव वैष्णव मोठा। विठ्ठल नामें मुक्तपेठा। स्नान दान घडे श्रेष्ठा। वैकुंठ वाटा संत गेले॥६॥

२२८. पूर्वजन्मीं सुकृतें थोर केलीं। तें मज आजि फळासि आलीं॥१॥ परमानंदु आजि मानसीं। भेटी जाली या संतासी॥२॥ मायबाप बंधु सखे सोयरें। यांते भेटावया मन न धरे॥३॥ एक एका तीर्थाहूनि आगळे। तयामाजि परब्रह्म सांवळे॥४॥ निर्धनासि धनलाभु जाला। जैसा अचेतनीं प्राण प्रगटला॥५॥ वत्स विघडलिया धेनु भेटली। जैसी कुरंगिणी पाडसा मीनली॥६॥ हें पियुष्या परतें गोड वाटत। पंढरिरायाचे भक्त भेटत॥७॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठलें। संत भेटतां भवदु:ख फीटलें॥८॥

२२९. आजी सोनियाचा दिनु। वर्षे अमृताचा घनु॥१॥ हरी पाहिलारे हरी पाहिलारे सबाह्यभ्यंतरीं अवघा व्यापक मुरारी॥२॥ दृढ विटे मन मुळीं। विराजीत वनमाळी॥३॥ बरवा संत समागमु प्रगटला आत्मरामु॥४॥ कृपासिंधु करुणा कर। बापरखुमादेवीवर॥५॥

## सद्‌गुरु निवृत्तीनाथाचे प्रसादानें प्राप्त झालेल्या स्थितीचा विचार

२३०. कापुराचे कळीवर अनळाचा मरगळा। भेदोन द्वैताचा सोहळा केविं निवडों पाहे॥१॥ बोलु अखरीच वळला भीतरी नाहीं आला। तो केविं विठ्ठला पावेजी तुम्हां॥२॥ मन बुद्धीसी जें आद्य तयासी जें वेद्य। कळिकाळा कवळेना संधि जडोनि जाये॥३॥ वाचाळपणें परा येवो न ल्हाये दातारा। अनुभवो भीतरा बाहेजु वेडावला॥४॥ निरयदृष्टी ती खोली येऊनी राहे बुबुळीं। लवण ठाव घेऊनी जळीं केवि निवडों पाहे॥५॥ निवृत्तिदासु तेथें निवृत्ति करुनी पातें। श्रीगुरुनिवृत्तिनाथें पुढें केलें॥६॥

२३१. व्यक्ताव्यक्त दिठी घालूनि कल्पांता कल्पना नुरोचि तेथें आतां॥१॥ पाहाणियाचा प्रपंचु पाहता। निमाला कवणा बोलु ठेऊं आतां॥२॥ दुजें ह्मणो जाय तंव मी माजी हारपे। नवर्णवे तुझी सत्ता रया॥ गोडियेचें गोडपण गोडि केविं मिरवे। तुजमाजी असतां ते वेगळीक रया॥३॥ निशीं जागरणीं निमाला कीं तंतुचि तंतीं आटला। रसीं रसु दुणावला तुझ्या ठाई॥४॥ तेथें कल्पनेसि मूळ विरोनियां पाल्हाळ। तैसें उभय संदीं तूं विदेहीरया॥५॥ या लागीं बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु उदारु दिठीचे दिठीं माजी अंजन। सुखीं सुख दुणावलें चौघा पडिलें मौन्य। येणें निवृत्तिरायें खुणा दाऊनियां सकळ। डोळ्यांविण दिठी प्रबळ रया॥६॥

२३२. अनुभव खुण मी बोले साजणी। निरंजन अंजन लेईलें अंजनी॥१॥ गुरुमुखें साधन जालें पै निवृत्ति। तत्वसार आपणचि जाली निवृत्ति॥२॥ बापरखुमादेंविवरा विठ्ठल कृपाचित्तें। पुंडलिका साधलें प्रेम तत्त्वार्थे॥३॥

२३३. पदोपदीं निजपद गेलें वो। कर्म संचित सकर्म जालें वो॥१॥ तेथें आपुलें नाठवे कांहीं वो। आपआपणा न संपडे डाईवो॥२॥ श्रीगुरुप्रसादें ज्ञान बोधु झाला वो। नव्हे तें ठाउकें पडिलें माय वो॥३॥

२३४. इवलेंसें रोप लाविलें द्वारीं। त्याचा वेल गेला गगनावरी॥१॥ मोगरा फुलला मोगरा फुलला॥ फुलें वेंचिता अतिभारुकळियांसि आला॥२॥ मनाचिये गुंती गुंफियेला शेला॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठलीं अर्पिला॥३॥

२३५. प्रकृतीचें पूजन प्राप्तीविण जाण। प्राप्ति सिंचन दोन्हीं वायां गेलीं॥१॥ पूजन कवणा करूं सिंचन कवणा करूं। नाहीं नव्हे तें धरूं गुरुमुखें॥२॥ रखुमादेविवर गुरुमुखा भ्याला॥ होता तो लपाला नाहीं ते ठाई॥३॥

२३६. जन्मा आवर्ती येरझारी फिटली। ब्रह्मसमदृष्टी जाली गुरुमुखें॥१॥ भागल्याचा सिणु भागल्यानें नेला। भाग्योदय जाला भाग्येविण॥२॥ रखुमादेविवरु भाग्यें जोडला। जोडोनी मोडला कांहीं नव्हतेपणें॥३॥

२३७. दृश्यादृश्य नातळे स्थूळ प्रपंचभान। तेथें मायेचें कारण हेत नाहीं॥ म्हणोनि ज्ञानविज्ञान कल्पना लक्षण। तेथें सुखासि सुख जाण भोगिताहे॥१॥ नामावांचुनि संवादें निवृत्ति अभेदपदें। निज भजनीं स्वानंदें नवल पाहे॥२॥ तेथें दिवस ना रात्री सर्वहेतुविवर्जितु। स्वयंभासक तूं नवल त्यांचें॥ चिन्मय ना चिन्मात्र वेद्य सर्वगत। स्वसंवेद्य साक्षभूत। आपणवासीं॥४॥ स्वसंवेद्य सन्मुखता भेदु नाहीं आतां। भक्ति आणि परमार्था हेंचि रूप॥५॥ निवृत्तिप्रसादें संपर्केसि बोध। नीत नवा आनंद ज्ञानदेवा॥६॥

२३८. अंतरींच्या सुखा नाहीं पै मर्यादा।

यापरि अगाधा होऊनि खोल॥१॥ तेथें गोविंदु आवघाचि जाला। विश्व व्यापुनिया उरला असे॥२॥ बाह्यअभ्यंतरीं नाहीं आपपार। सर्व निरंतर नारायण॥३॥ मी पण माझें न देखे दुजे। ज्ञानदेवो म्हणे ऐसें केलें निवृत्तिराजे॥४॥

२३९. लेउनि अंजन दाविलें निधान। देखतांचि मन मावळलें॥१॥ ऐसिया सुखाचे करूनियां आळें। बीज तें निर्मळ पेरी आतां॥२॥ ज्ञानाचा हा वाफा भरूनियां कमळीं। सतरावी निराळी तिंबतसे॥३॥ निवृत्ति प्रसादें पावलों या सुखा। उजळलीया रेखा ज्ञानाचिया॥४॥

२४०. मी माझें द्वैत अद्वैत होउनि ठेलें। सद्‌गुरु एका बोलें ठेविलें ठायीं॥१॥ द्वैत गिळी अद्वैत मेळीं। चित्ताची काजळी तोडी वेगीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्ति उदार। दीपीं दीप स्थिर केला सोयी॥३॥

२४१. अनंत अनंता परी देखतां अंतरीं। हृदयाभींतरीं मज निववितो माये॥१॥ चाळवी चक्रचाळ अलमट गोपाळ। यानें केला सुकाळ सहज सुखाचा वो माये॥२॥ सांगवी ते सांगणी उमगूनि चक्रपाणी। त्या निर्गुणाचे रहणी मी रिघालें वो माये॥३॥ भ्रांतिभुली फेडूनियां निवृत्ति। रखुमादेविवरु विठ्ठलीं गती जाली वो माये॥४॥

२४२. पंचविसा वेगळें महत्तत्व बोलिजे। तें मज अंगविजे ऐसें निवृत्तीं केलें वो माये॥१॥ सहज बोधें बोधलें न विचारीं आपुलें। म्हणोनियां मुकलें अवघ्यांसी वो माय॥२॥ पांचाहूनी परती मी जाहालिये निवृत्ति। चिदानंदीं सरती स्वरूपीं वो माये॥३॥ ऐसें जाहलें चांग अचिर देवांग। रखुमादेवीवरें पांग फेडिला वो माये॥४॥

२४३. साध्यसाधनकाज निवृत्तिचें गुज। केशव सहज सर्वभूतीं॥१॥ रामकृष्ण मंत्रें प्रोक्षियेलीं गात्रें। हरिरूप सर्वत्र क्षर दिसे॥२॥ गुरुगम्य चित्त जालें माझें हित। दिननिशीं प्राप्त हरि आम्हां॥३॥ पूर्णिमाप्रकाशचंद्र निराभास। हरि हा दिवस उगवला॥४॥ चकोरें सेवीति आळीउळें पाहाती। घटघटा घेती अमृतपान॥५॥ ऐसें हें पठण ज्ञानदेवा जालें। निवृत्तीनें केलें आपणा ऐसें॥६॥

२४४. अवेवीं सावेव सम साम्य बुद्धी। शांति दया सिद्धी प्रगटल्या॥१॥ वोळली हे कृपा निवृत्ति दयाळा। सर्व रोम पाल्हाळा प्रेमांकुर॥२॥ दिवसाचें चांदिणें रात्रीचें उष्ण। सांगितला प्रश्न निवृत्तिराजें॥३॥ सोहंसिद्धमंत्रें प्रोक्षिलासंसार॥ मरणाचि येरझार कुंठीयेली॥४॥ चित्तवित्तगोत आपण पैं जाला। देहीं देहभाव गेला माझा॥५॥ ज्ञानदेवा रसिं स्नान दान गंगे। प्रपंचेसी भंगे विषयजात॥६॥

२४५. अरे अरे ज्ञाना झालासि पावन। तुझें तुज ध्यान कळों आलें॥१॥ तुझा तूंचि देव तुझा तूंचि भाव। फिटला संदेह अन्यतत्वीं॥२॥ मुरडूनियां मन उपजलासि चित्तें। कोठें तुज रितें न दिसे रया॥३॥ दीपकीं दीपक मावळल्या ज्योती। घरभरी वाती शून्य झाल्या॥४॥ वृत्तीची निवृत्ति आपणासकट। अवघेंची वैकुंठ चतुर्भुज॥५॥ निवृत्ति परमअनुभव नेमा। शांति पूर्ण क्षमा ज्ञानदेवो॥६॥

२४६. परेसी जंव पाहे तंव दिसे हें अरुतें। तळीं तळाखालतें विश्वरूप॥१॥ दिव्य चक्षूदृष्टि निवृत्तीनें दिधली। अवघीच बुझाली विष्णुमाया॥२॥ शम दम कळा दांत उदांत। शंतित्तत्व मावळत उपरमेसी॥३॥ रयनि दिनमणी गगनासकट। अवघेची वैकुंठ तया घरीं॥४॥ उद्धट कारण केलें हो ऐसें। तुष्टोनि सौरसें केलें तुम्हीं॥५॥ ज्ञानदेव शरण निवृत्तीच्या चरणा। कांसवीचा पान्हा पाजीयेला॥६॥

२४७. ऐसें हें अंडज सांगितलें देवें। सांगोनिया भावें गिळीयेलें॥१॥ गिळिला प्रपंच समाप्ति इंद्रियां वैष्णवी हे माया बिंबाकार॥२॥ निरशून्य शून्य साधूनि उपरम। वैकुंठीचें धाम हृदय केलें॥३॥

जिव शिव शेजे पंक्तीस बैसली। पंचतत्वांची बोली नाहीं तेथें॥४॥ तत्त्वीं तत्व गेलें बोलणें वैखरी वेदवक्ते चारी मान्य झाले॥५॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्ति तुष्टला। सर्वांगें दीधला समबोध॥६॥

२४८. सत्व रज तम प्रकृती अपारा। याहि भिन्न प्रकारा हरी रया॥१॥ दिसोनि न दिसे लोकीं व्यापारी। घटमठ चाऱ्ही हरी व्याप्त॥२॥ स्वानुभवें धरी अनुभवें वाट। तंव अवचित बोभाट पुढें मागें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे न कळे याची लीला। ते निवृत्तीनें डोळां दाविली मज॥४॥

२४९. देखिले तुमचे चरण। निवांत राहिलें मन। कासया त्यजीन प्राण आपुलागे माये॥१॥ असेन धणी वरी आपुले माहेरी। मग तो श्रीहरी गीती गाईनगे माये॥२॥ सकळही गोत माझें पंढरिसी जाण। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाची आण॥३॥

२५०. तृप्ति भुकेली काय करूं माये। जीवनीं जीवन कैसें तान्हेजत आहे॥१॥ मन धालें परि न धाये। पुढत पुढती राजा विठ्ठलु पाहे॥२॥ निरंजनीं अंजन लेइजत आहे। आपुलें निधान कैसें आपणची पाहे॥३॥ निवृत्ति गार्हस्थ्य मांडलें आहे। निष्काम आपत्य प्रसवत जाये॥४॥ त्रिभुवनीं आनंदु न मायेगे माये। आपेआपु परमानंदु वोसंडतु आहे॥५॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुगे माये। देहभाव सांडूनि भोगिजत आहे॥६॥

२५१. सांवळा सकुमार लावण्य त्रिभुवनीं। अवचितां आंगणीं देखिला रया॥१॥ आळवितां नयेचि सचेतनीं अचेत। भावेंचि तृप्त माझा हरी॥२॥ अज्ञानीं न दिसे ज्ञानी येऊनि उभा। विज्ञानेसी शोभा दावी रया॥३॥ ज्ञानदेवा सार सांवळीये मूर्ति। निवृत्तीनें गुंति उगविली॥४॥

२५२. श्रीगुरुसारिखा असतां पाठीराखा। इतरांचा लेखा कोण करी॥१॥ राजयाची कांता काय भीक मागे। मनाचिया जोगे सिद्धि पावे॥२॥ कल्पतरुतळवटीं जो कोणी बैसला। काय वाणी त्याला सांगिजोजी॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे तरलों तरलों। आतां उद्धरलों गुरुकृपें॥४॥

२५३. ब्रह्मीं ब्रह्म होणें हें तो कठीण सांगता। आब्रह्मीता जयाचिया सत्ता विस्तारले॥१॥ सांगतां नये सांगावें तें काय। तेथील हे सोय गुरुखुणा॥२॥ मन हें अमोलिक जरि गुंपे अमूपा। तरिच हा सोपा मार्ग रया॥३॥ बापरखुमादेविवरु ब्रह्मविद्येचा पुतळा। तेथील हे कळा निवृतिप्रसादें॥४॥

२५४. परे पडे मिठी तेथे बोलणेचि नुठी। आवडी गिळुनियां आतां जिवे नाहीं तुटी॥१॥ सांगिजे बोलिजे तैसे नव्हेगे माये। सुमर मारिलें येणें श्रीगुरुराये॥२॥ निवृत्ति दासास निधान दुरी। आवडी गिळुनि आतां जिवे नाहीं उरि॥३॥

२५५. समसुख शेजे निमोनियां काय। साधिलेंसे बीज निवृत्तिरायें॥१॥ पृथ्वीतळ शय्या आकाश प्रावरण। भूतदया जीवन जीव भूत॥२॥ निजीं निज आली हरपल्या कळा। ब्रह्मानंद सोहळा गुरुशिष्यीं॥३॥ ज्ञानदेवी काज निरालंबी रूप। तळिवरी दीप सतेजला॥४॥

२५६. रवितेजकिरण फांकलिया तेज। उडेरे सहज तिमिर रया॥१॥ तैसा तूं गभस्ति निवृत्ति उदारा। उगवोनि चराचरा तेज केलें॥२॥ तेजीं तेज दिसे अव्यक्ताचा ठसा। उमजोनि प्रकाशा न मोडे तुझा॥३॥ चंद्रोदयीं कमळें प्रकासिलितें। तैसें तुझें भरतें करी आह्मां॥४॥ वृत्तीची निवृत्ति देखिली म्यां तुझी। हरपली माझी चित्तवृत्ति॥५॥ ज्ञान ऐसें नांव ज्ञानदेवा देसी। शेखी तुवां रूपासी मेळविलें॥६॥

२५७. अरे स्वरूपाकारणें विश्वरूप घेतलें। सगुणें झाकिलें निर्गुण रया॥१॥ तत्वीं तत्व कवळी उगवे रवीमंडळी। अवघीच झांकोळी अपल्या तेजें॥२॥ द्रष्टाचिये दीप्तीं दृश्यचि न दिसे। समरसीं भासे तेज त्याचें॥३॥ चित्स्वरूपीं नांदे चित्स्वरूपीं भासे। ॐकारासरिसें तदाकार॥४॥ प्रेमकळीं ओतले सप्रमळीत तेज। तेथें तूं विराजे ज्ञानदेवा॥ ५॥

२५८. स्वामीचे कृपेनें चिद्घन ओळलें। रसा तळ पाल्हेलें ब्रह्मतेजें॥१॥ कृपाळु श्रीगुरु ओळला सर्वत्र। आपेआप चरित्र दृष्टी दावी॥२॥ ॐ काराचें बीज समूळ मातृकीं। दिसे लोकां लोकीं एकतत्वीं॥३॥ विकारीं साकार अरूपीं रूपस। दावी आपला भास आपणासहित॥४॥ सर्वांग सम तेज ऐसा हा चोखडा। पाहतां चहूंकडा दिव्य तेज॥५॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्तिशीं पुशिलें। सत्रावी दोहिल पूर्ण अंशीं॥६॥

२५९. अरे अरे ज्ञाना ज्ञान उघडे बोलसी। तुझा तूंचि होशी हरि ऐसा॥१॥ आपुलें तें झाकी पर तें दावी। पंश्यत्तिये भावीं मध्यमे राहे॥२॥ तत्व तेंचि धरी रजो गुण चारी। पंचमा आचारी सांपडती॥३॥ षड्रसीं भोक्ता हरिरूप करी। सप्तमा जिव्हारीं कळा धरी॥४॥ अष्टमा अष्टसिद्धि अष्टांग नेमेशीं। तें जीवेंभावेंसी तूंचि होसी॥५॥ नवमा नवमी दशमावृत्ती। एकादशीं तृप्ती करी ज्ञाना॥६॥ ऐसा तूं एकादश होई तूंरे ज्ञाना। द्वादशीच्या चिन्हा सांगों तुज॥७॥ निवृत्ति द्वादशगुरुवचनीं भाष्य एकविध कास घाली ज्ञाना॥८॥

२६०. अरे अरे ज्ञाना ज्ञान हे निवृत्ति। देहीं देहा उपरती तुज प्राप्त॥१॥ अर्थावबोध अर्थुनि दाविला। ज्ञानियां तूं भला ज्ञानदेवा॥२॥ सोहं तत्वसाधनें प्रमाण सर्वत्रीं। उभयतां गात्रीं प्रेम तनू॥३॥ बिंबीं बिंबरसीं उपरम देखिला। प्रपंच शोखिला तुवां एकें॥४॥ विष्णुनाम मंत्र सोहं तेज दिवटा। उजळून चोहटा शुद्ध केला॥५॥ निवृत्तीचा शिष्य ज्ञानदेवीं भावी। शांति समरस बोध उतरे॥६॥

२६१. सूक्ष्म साध्य काज सांगितलें स्वामी। धृति धारणा क्षमीं हारपल्या॥१॥ सूक्ष्म सख्य नेलें विश्वरूप देहीं आलें। प्रपंचेंसि मावळलें तिमिर रया॥२॥ विशेषेंसि मिठी दिधलि शरिरें। इंद्रियें बाहिरें नाईकती॥३॥ ऐसें हें साधन साधकां कळलें। चेतवितां बुझालें मन माजें॥४॥ उतावेळ पिंड ब्रह्मांडा सहित। नेत्रीं विकाशत ब्रह्मतेज॥५॥ ज्ञानदेव विनवी निवृत्तीस काज। हरपली लाज संदेहेसीं॥६॥

२६२. पहातें पाहाता निरुतें। पाहिलिया तेथें तेंचि होय॥१॥ तोचि तो आपण श्रीमुखे आण। आणिक साधन नलगे कांहीं॥२॥ भानुबिंबेवीण निरसलें तम। ज्ञानदेवी वर्म सांगितलें॥३॥

२६३. अनुपम्य तेजें धवळलें ब्रह्मांड। विश्वरूपीं अखंड तदाकार॥१॥ रसी रस मुरे प्रेमाचें स्फुंदन। एकरूपी घन हरि माझा॥२॥ नाद आणि ज्योति परिपूर्ण आत्मा। परेसि परमात्मा उजेडला॥३॥ जाला अरुणोदयो उजळलें सूर्यतेज। त्याहुनि सतेज तेज आलें॥४॥ हरपल्या रश्मि देहभाव हरी। रिद्धि सिद्धि कामारी जाल्या कैंशा॥५॥ निवृत्ती उपदेश ज्ञानियां लाधला। तत्वीं तत्व बोधला ज्ञानदेव॥६॥

२६४. भ्रमर रस द्वंद्व विसरला भूक। त्याहुनी एथें सुख अधिक दिसे॥१॥ जंववरि भुली तंववरी बोली। समुद्रींचि खोली विरळा जाणे॥२॥ आशापाश परि निवृत्ति तटाक। पडियेले ठक चिद्रूप रूपीं॥३॥ प्रकाश हरीचा प्रकाशला देहीं। नेणतीच कांहीं मूढजन॥४॥ ऐलतीरीं ठाके पैलतिरीं ठाके। तेथें कैसेनि सामर्थ्यें पाहों आतां॥५॥ जाणिव शाहाणिव तूंचि निवृत्ति देवा। हरि उभय भावा ज्ञान देसी॥६॥ ज्ञानदेवा शांति उन्मनि रहस्य। हरिरूप भाष्य करविलें॥७॥ बापरखुमादेविवरविठ्ठल ह्रदयीं। आलिंगितां बाही भ्रमर जाला॥८॥

२६५. साकारु निराकारु वस्तु सद्गुरु आमुचा। तेणें या देहाचा केला उगऊ॥१॥ उगविलें मायेतें निरशिलें। एकतत्त्व दाविलें त्रिभुवन रया॥२॥ सत्रावी दोहोनी इंद्रिया सौरसु। गुरुमुखें उल्हासु भक्ति महिमें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे मी नेणतां प्रपंच। तोडली मोहाची पदवी आम्हीं॥४॥

२६६. अमित्य भुवनीं भरलें शेखीं जें उरलें। तें

रूप आपुले मज दावियलें वो माय॥१॥ आतां मी नये आपुलिया आस। तुटले सायास भ्रांतीचे वो माय॥२॥ मंजुळ मंजुळ वायो गती झळकती। तापत्रयें निवृत्ति निर्वाळिलें वो माय॥३॥ वेडावलें एकाएकीं निजधाम रूपीं। रखुमादेविवरु दीपीं दिव्य तेज वो माय॥४॥

२६७. शुद्धमतीगती मज वोळला निवृत्ती। त्यानें पदीं पदीं प्रीति स्वरूपीं वो माय॥१॥ आतां मी जाईन आपुलिया गांवा। होईल विसावा सुखसागरीं वो माय॥२॥ पाहातां न देखे आपुलें कोणी नाहीं। निजरूप पाहीं अनंता नयनीं वो माय॥३॥ हा रखुमादेविवरु गुरुगम्य सागरु। न करीच अव्हेरु माझा वो माय॥४॥

२६८.आपुलें कांही न विचारितां धन। निगुणासी ऋण देऊं गेलें॥१॥ थिवें होतें तें निध सांठविलें। विश्वासें घेतलें लक्ष वित्त॥२॥ ऐसा हा निवृत्तिप्रसादु फळासि आला। निर्फळ केला मज निर्गुणाकारें॥३॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु साच म्हणोनि निघालों। तेणें नेऊनि घातलों निरंजनीं॥४॥

२६९. चौदा भुवनीं चौघां भुलविलें। वेव्हार नासिले स्मृति व्यालीगे माये॥१॥ अवघे धन देऊनी मज निधन केलें। ऋण मागावया धाडिलें नये ते ठायीं॥२॥ ऐसें श्रीनिवृत्ति शब्दें। अगाध जालें। माझें मीपण गेलें धन देखा॥३॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु साक्षी। तो मज पारखी घेऊनी गेला॥४॥

२७०. अवघड तें एक घडलें माझ्या अंगी। तीही ऋण चौघी मज देवविलें॥१॥ ज्यासि दिधलें त्यासी नांव पैं नाहीं । जया रूप नाहीं त्यासी ऋण देवविलें॥२॥ निवृत्ति गुरूनें अधिक केलें। निमिष्यमात्रीं दाविलें धन माझें॥३॥ येणें रखुमादेविवरु विठ्ठलें होतें तें आटिलें। सेखी निहाटिलें निरळारंभी॥४॥

२७१. मायाविवर्जित जालें वो। माझें गोत पंढरिये राहिलें वो॥१॥ पतिव्रता मी परद्वारिणी। परपुरुषेंसी व्यभिचारिणी॥२॥ सा चारि चौदा जाली वो। सेखीं अठरा घोकुनी राहिलें वो। निवृत्ति प्रसादें मी गोवळी वो॥३॥ माझा भावो तो विठ्ठलु न्याहाळीवो॥४॥

२७२. प्राण जाये प्रेत न बोले चित्रीचे लेप न हाले। तैसें दृश्य द्रष्टा दर्शन त्रिपुटी वो करी हे शब्दची वाउगे ठेले रया॥१॥ आतां आपणया आपणचि विचारी। शेखीं प्रकृति ना पुरुष निर्धारी॥२॥ आतां प्रेताचे अळंकार सोहळुले। कां शब्दज्ञानें जे डौरले दीपने देखती कांहीं केलें। ऐसे जाणोनिया सिण मनी तीं प्रतिष्ठा भोगिती भले रया॥३॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठल देखतांचि जे बोधले। ते तेणें सुखें होऊनी सर्वात्मक जे असतांचि देहीं विस्तारलें। येणें निवृत्तिरायें खुणा दाउनी सकळ। बोलतां सिण झणे होईल रया॥४॥

२७३. पृथ्वी आडणी आकाश हें ताट। अमृत घनवट आप तेज॥ नित्य हें जेवितां तेज प्रकाशत। सर्वलि गोमटी ब्रह्मद्वारें॥१॥ जेवणार भला जेउनिया धाला। योगि जो निवाला परमहंस॥२॥ चांदिणा वोगरु दिसे परिकरु। नवनित घातलें व्योमी बरवें॥ निळिये परवडि शाक जालें निकें। अंबट घाला तिखें प्रेम तेथें॥३॥ गंगा यमुना तिसरिये सागरीं। म्हणौनि प्रकारी क्षीर जाली॥ सोज्वळ ब्रह्मतेजें साकर सोजोरी। जेवितो हे गोडी तोचि जाणे॥४॥ इडा क्षीर घारी पिंगळा गुळवरी। त्या माजि तिसरी तेल वरी॥ सुषुम्नेचे रुची तुर्या अतुडली। अहिर्निशि जाली जेवावया॥५॥ सितळ भिनला चंद्र अंबवडा। सूर्य जो कुरवडा खुसखुसित॥ तया दोहीं संगें भाव हेचि मांडे। मग जेवा उदंडें एक चित्तें॥६॥ पवित्र पापडु मस्तकिं गुरुहस्त। म्हणउनि अंकित तयातळी॥ सोरसाचि गोडी जयासी लाधलीसे। उपदेशितां जालीं अमृतफळें॥७॥ कपट वासनेचि करुनिया सांडई। शेवा कुरवडई गोमटी किजे॥ गुरुचरणीं लाडू करुनियां गोडु। मग जेवी परवडी

योगिराजु॥८॥ गुरुपरमार्थे ग्रासुनिया भूतें। क्षेम अवकाशातें आच्छादुनि॥ जेवणें जेवितां ध्वनि उठे अंबरीं। तें सुख अंतरीं प्रेम वाढे॥९॥ षड्रसाचि उपमा देऊं म्हणो जर। ब्रह्म रसापरते गोड नाहीं॥ येणें दहिभातें जेवणें हें जाले। तिखटही आलें प्रेम तेथें॥१०॥ अमृत जेविला अमृतें आंचवला। सेजे विसावला निरालंबीं॥ मन हें तांबूल रंगलें सुरंग। नव जाये अभंग कव्हणीकडे॥११॥ कापुर कस्तुरी शुद्ध परिमळु। गोडियेसि गुळु मिळोनि गेला। सुमनाचि मूर्ति सुमनीं पूजिली। सुमनीं अर्चिलि कनकपुष्पीं॥१२॥ ऐसें नानापरिचें जेवण जालें। बापनिवृत्तियोगियानें वाढिलें॥ ज्ञानदेव म्हणे धणिवरि जेविलें। बापरखुमादेविवरें विठ्ठलें सुखिया केलें॥१३॥

२७४. अनुभव अनुभवु बोधा बोध आथिला। निशब्दीं निशब्द नादावला॥१॥ माझा श्रीगुरु ब्रह्म बोलणी बोलवील। तेथील संकेतु कोण्ही नेणें॥२॥ निवृत्ति प्रसादें म्यां ब्रह्मचि जेविलें। ब्रह्म ढेंकरी पाल्हाईलें नेणोनियां॥३॥

२७५. रूप सामावलें दर्शन ठाकलें। अंग हारपलें तेचि भावीं॥ पाहों जाय तंव पाहाणया वेगळें। ते सुखसोहळें कोण बोले॥१॥जेथें जाय तेथें मौनाचि पडिलें। बोलवेना पुढें काय करूं॥२॥ सरिता ना संगम ओघ ना भ्रम नाहीं क्रिया कर्म तैसें झालें॥ जाणों जाय तंव जाणण्या सारिखें। नवल विस्मय कवणा सांगों॥३॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठलुचि अंगीं। निवृत्तिरायें वेगीं दाखविला॥ तोचि सबरा भरितु। रूपनामरहितु निच नवा॥४॥

२७६. मीतूंपणा विकल्प मावळला मूळीं। दोहीं माजी बळी कवणा पाहो। पाहतां पाहणें द्रष्टत्व ग्रासिलें। स्वरूपचि उरलें कवणा पाहों॥१॥ बोलों नये ऐसें केलें वो माय येणें। बोलतांचि गुणें आठऊ नाहीं॥२॥ आठवितां विसरु संसार नाठवे। हे खुण स्वभावें बोलत्याचा॥ बोलतां बोलणें ठकचि पडलें मुळीं। स्थूळींचा स्थूळीं प्रकाश झालागे माये॥३॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु उघडा। निजबोधीं निवाडा ऐसा झाला॥ निवृत्तिराये खुण लेऊनि अंजन। दाऊनि निधान प्रकट केलें॥४॥

२७७. मजमाजी पांहतां मीपण हारपलें। ठकलेंचि ठेलें सये मन माझें॥१॥ आंत विठ्ठलु बाहेर विठ्ठलु । मीचि विठ्ठलु मज भासतसे॥२॥ मीपण माझें नुरेचि कांहीं दुजें। ऐसें नाहीं केलें निवृत्तिराजें म्हणे ज्ञानदेवो॥३॥

२७८. देखोनि पुजावया गेलें द्वैतभावें। तेथें एक उपदेशी श्रीगुरुरावो॥१॥ द्वैतभावो नाशिला माझा द्वैतभावो नाशिला। पूजा उद्ध्वंस केला तें ब्रह्ममय॥२॥ रखुमादेविवरु देखण्या वेगळा देखिला। सगुण निर्गुण जाला बाईये वो॥३॥

२७९. दीपप्रकाश दीपीं सामावला कळिके सामावली ज्योति। ज्योति सामावोनि बिंब हारपलें तैसी जाली सहज स्थिति। संचित प्रारब्ध दग्ध पटन्यायें हे दृश्यभ्रांति देहो जावो अथवा राहो फिटला संदेहो मृतिकेचि कायासि खंति॥१॥ रूप पाहोनिया दर्पण ठेलें शेखीं अभास दृष्टि राहिला। न पाहतां मुख जाणें तो आपण तैसा अनुभव जाला रया॥२॥ या प्रपंचाचें कवच सांडुनि बाहेरि। अविद्या दृश्य संहारी। पदीं पद ग्रासुनि ठेलें जें बुडोनि राहिलें अंतरी। चैतन्याचें मुसें हेलावत दिसे जेवि तरंगुसागरीं। कूर्माचिये परि आंगचि आवरि तो स्थिर जाला चंद्र करि रया॥३॥ तेथें जाणणें निमालें बोलणें खुंटलें जेवि जीवनीं जीवन मिळाले। दश दिशा भरुनि दाटलें किं सुख सुखासि भेटो आले। ज्ञानदेव म्हणे आम्हा जितांचि मरणें । कीं कोटी विकल्प जिणें ऐसें निवृत्तीनें केलें रया॥४॥

२८०. निरंजन वना गेलिया साजणी। तेथें निर्गुणें माझा मनीं वेधियेलें॥१॥ सुखाची अति प्रीति जाहालीगे ब्रम्हीं। श्रीगुरु निवृत्ति मुनीं जाहालेंगे माये॥२॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठलुसह

जावला। निर्गुणा दाविला विसुरागे माये॥३॥

२८१. चातकाची तृषा मेघें पुरविली। ब्रह्मस्तनीं पान्हईली बाईये वो॥१॥ निवृत्तिप्रसादे माझ्या मुखीं सूदला। प्रेमरसें धारा फुटल्या दोहीं पक्षीं॥२॥ बाप श्रीगुरु तेणें मज आफाविले। अवघें ब्रह्म दाविलें ज्ञानदेवा॥३॥

२८२. ऋणाचेनि मिसें निर्गुण आलें आपैसें। तेणें मज सर्वस्वें ठकियेलें॥१॥ घेऊनि गेला माझें धन। केलें पै निर्वाण मना देखा॥२॥ त्यासि वोळखिना अनोळखी। दृश्य ना अदृश्य ऋण म्यां सादृश्य दिधलें देखा॥३॥ निवृत्ति प्रसादें इतुकें पै जालें। रखुमादेविवरु विठ्ठलें मज गोवियेलेगे माये॥४॥

## ज्ञानेश्वर महाराज व निवृत्तीनाथ यांचा संवाद.

२८३. स्वरूप पाहे तंव सभोंवतें रूपडें। पाहे चहूंकडे तोचि दिसे॥१॥ काय करूं सये कैसा हा देव। माझा मज भाव एकतत्वीं॥२॥ सम तेज पाहे तंव एकचि वो तेज। ओंकार सहज निमाला तेथें॥३॥ मूळीचि मुळ खुण न संपडे सर्वथा। व्यापिलें चित्ता तेजें येणें॥४॥ स्वानुभव ते दिवटी उजळूनि जव पाहे। तव एक बिंब दाहे दिशा दिसे॥५॥ ज्ञानदेव निवृत्ति हे खूण पुसत। सांगावें त्वरित गुरुराजें॥६॥

२८४. परब्रम्हीं वस्ति कोण्या रूपें करूं। सकळ हें भरूं आत्मतत्वें॥ देहाचा दीप कीं समत्वें पै ज्योती। एकरूपें वाती सर्वारूपीं॥१॥ तें रूप सांगा निवृत्ति उदारा। संसार एकसरा तया माजी॥२॥ समान निघोटे मोक्षत्वें पैं अवीट। श्रीगुरूनें वाट सांगितली॥३॥ ज्ञानदेवीं घरवस्तीसी बिढार। तळींवरी साचार एक तत्व॥४॥

२८५. सोंग संपादणी एका रूपें करी। आत्मा घरोघरीं वर्ततसे॥१॥ माय सांग आम्हां कोण सुख ब्रह्म। तुम्हा आम्हा समा कोण्या रूपें॥२॥ चेतनें चेतवी बुद्धिते पाचारी। कल्पना मापारीया निवृत्ति ठायीं॥३॥ ज्ञानदेव दिवटा विठ्ठलीं रमला। संसार अबोला एक तत्वें॥४॥

२८६. विश्रांतीचें स्थान कोण रूप आम्हां। ऐसा हा महिमा सांगा स्वामी॥१॥ चित्त नेई चिंता चेतनी नेई तत्वता। कर्म परतत्वा हारवी रया॥२॥ हें तत्व ज्ञानदेवा निवृत्ति। संसार पुढती नाहीं बापा॥३॥

२८७. निजाचें तेज कीं तेजाचें निज। तेथील तें गुज सांग मज॥१॥ ब्रह्म तें कायी ब्रह्म तें कायी। ब्रह्म तें कायी सांगा गोसावी॥२॥ ब्रह्म सदोदित असे सर्वभूतीं॥ म्हणौनि सांगे जनाप्रती॥३॥ ब्रह्म ऐसें नामयानें जाणितलें। हृदयीं धरिलें प्राणलिंग॥४॥ बापरखुमादेविवरु हृदयीं प्रगटला। निवांत राहिला ज्ञानदेवो॥५॥

२८८. आकारीं नाहीं तें निराकारीं पाहीं। निराकारीं राही शून्याशून्य॥१॥ जेथें शून्यचि मावळलें तेथें काय उरलें॥ हेचि सांगे एके बोलें मजपासीं॥२॥ शून्य कासय पासाव जालें शून्य तें कवणें केलें। हें सांगिजोजि एक्या बोलें गुरुराया॥३॥ आपण शून्याकार कीं आपण निराकार। आकार निराकार मूर्तिमंत दाऊं॥ आकार निराकार ये दोन्हीं नाहीं। तेंचि तूं पाही आपणापें॥४॥ जेथें अनुभवचि नाहीं तेंचि तूं पाही। स्वानुभवीं राही तुझा तूंचि॥५॥ जेथें चंद्र सूर्य एक होती तेथें कैचि दिनराती। ऐसें जे जाणती ते योगेश्वर॥६॥ कर्माकर्म पारुषलें देवधर्म लोपले। गुरुशिष्या निमाले जाले क्षीरसिंधु॥७॥ तेथें गोडीवीण चाखणे। जिव्हेवीण बोलणे नेत्रेंविण पाहणें तेंचि ब्रह्म॥८॥ हातीं घेऊनियां दिवटी लागिजे अंधारापाठीं। अंधार न देखे दृष्टी उजियेडु तो॥९॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु देखणा। दृष्टयद्रष्टेपणा माल्हावले॥१०॥

२८९. देहभाव ठेवावे योगभाव सेवावे। हें बोलणें जाणणें सोय नव्हेगेमाये॥१॥ जिजे मरिजे ऐसें नाहीं आमुतें। सांगों कोणातें तुज वांचुनि॥२॥ देठीहुनि सुटलें जीवनासी आलें। बापरखुमादेविवरें

ऐसें केलेंगे माये॥ ३॥

## उपासनापर.

२९०. देहाचेनि दीपकें पाहे जों सभोंवतें। तंव अवचितेंची ध्यान केलें॥१॥ निराकारींची वस्तु आकारा आणिली। कृष्णीं कृष्ण केली सकळ सृष्टी॥२॥ लय गेलें ध्यानीं ध्यान गेलें उन्मनी। नित्य हरिपर्वणी सर्वारूपें॥३॥ आनंद सोहळा हरिरूपीं आवडी। कृष्ण अर्धघडी न सोडी आम्हां॥४॥ बापरखुमादेविवरविठ्ठल अभय। भयांचें पैं भय हरपे कृष्णीं॥५॥

२९१. सकळ तीर्थे निवृत्तीच्या पायीं। तेथें बुडी देई माझ्या मना॥१॥ आतां मी न करी चित्ताचें भ्रमण। वृत्तीसी मार्जन केलें असे॥२॥ एकार्णव जाला तरंगु बुडाला। तैसा देह जाला एकरूप॥३॥ बापरखुमादेवीवरें विठ्ठलें नवल पै केलें। तारूं हरविलें मृगजळीं॥४॥

२९२. स्वप्नींचे सुख मी पहावया गेलें। तंव स्वप्नीं स्वप्न ठेलें येरा विस्मोगे माये॥१॥ काय सांगो निदसुरी कळवळलें संसारीं। करितां येरझारी येणेंचि छंदें॥२॥ सुषुप्तीचें सुख जागृती जाणती। तरी परतोनि मागुती कासयातें॥३॥ बापरखुमा-देविवरुविठ्ठलु राणे रावो। ऐसा जाणोनि तयाचा भावो ठाकियला॥४॥

२९३. वेल्हावलें मन परतोनि पाही तंव प्रपंच दिसे अया गेले। पिटुनि बाह्य वैराग्याची गुढी उभऊनि म्हणे म्या जिंकिलें॥ आपपर न दिसे सेखी चरणीं स्थिरावलें। जळतरंग लहरी सरितां संगम जीवनीं जीवन ऐक्य ठेलें रया॥१॥ तेंचि ब्रह्मज्ञान बोधी पाहतां। जाण सगुण निर्गुण आतां भेदु नाहीं॥ वाउगाचि सिणसी विचारी मानसीं। वायां कल्पना करूनि हाही दिशीं रया॥२॥ म्हणौनि पटीं तंतु वोतप्रोत होतु। तैसें विश्वजात ब्रह्मीं असे॥ सतीं कल्पिसि भेद सगुण निर्गुण द्वंद्व। तेणें कल्पनेने प्रत्यया नये॥ सर्वस्वें उदासीन होई तूंचि निश्चय जाण एक सगुणींचि काय न लभे रया॥३॥ आम्हा सगुण निर्गुण समान। नेणो जन्म जातक भान। दृश्य द्रष्टा दर्शन त्रिपुटी नलगे। महावाक्यादि शब्द तत्त्वमस्यादि बोल हेही आम्हा सकळ वाउगें रया। बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु चिंतितां। सुख सगुणींच जोडे अंगें रया॥४॥

२९४. आजि संसार सुफळ जालागे माये। देखियले पाय विठोबाचें॥१॥ तो मज व्हावा गोविंद व्हावा। वेळोवेळा व्हावा पांडुरंग॥२॥ बापरखुमादेविवरु न विसंबे सर्वथा। निवृत्तीनें तत्वतां सांगितलें॥३॥

२९५. अवघाची संसार सुखाचा करीन। आनंदें भरीन तिन्ही लोक॥१॥ जाईनगे माये तया पंढरपुरा। भेटेन माहेरा अपुलिया॥२॥ सर्व सुकृताचे फळ मी लाहीन। क्षेम मी देईन परब्रह्मीं॥३॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाची भेटी। आपुलिये संवसाटी घेऊनि राहे॥३॥

२९६. विठ्ठलयात्रे जाति वो माये। त्याचे धरीन मी पायें॥१॥ विठोबा माझें माहेर। भेटेन बुद्धि परिकर॥२॥ रखुमादेविवर विठ्ठलें। मन ठेउनि राहि निर्धारिं॥३॥

२९७. या अमरामाजी येखादा वोळगो म्हणे तरी तो ठावो ठाकितां अतिदुस्तरू। भूमंडळीचे राज्य वोळगों म्हणे तव तेथें न लभे अवसरु। निःसंग होऊनि यतिधर्म चाळूं म्हणे तरी भिक्षेसी पडे विचारु। निःप्रपंच हातीं टाळ दिंडी घेऊनियां वोळगे तो हरिहरुरेरे॥१॥ हरीचे विद्यावंत जालोरे आम्ही जाऊनि पंढरपुरीं राहिलों। कळिकाळाच्या माथां पाय देऊनिया वैकुंठ भुवनासि गेलोरेरे॥धृ०॥ अष्टांगयोगें शरीर दंडूं पाहे तंव येवढें कैचें कष्टसाधन। लय लक्ष लावूनि गुरुमंत्र जपों म्हणो तरी स्थिर नव्हे अंतःकरण। तल्लीन होऊन हरिकथा आयिको म्हणो तरी ठायींचेच बधिर श्रवण। उदंड वाचे हरिहरि म्हणतां फुकासाठीं चुके पतनरेरे॥२॥ चहूं वेदांचे गव्हर धांडोळितां वेडावलीं साही दर्शनें। शून्य स्थावर जंगम सर्वत्र

व्यापून असणें। जळीं स्थळीं काष्ठीं पाषाणीं सरिसें या दृष्टी पाहाणें। ऐसियातें सेवितां अविद्या लोपे मा विश्वास मानिला मनें॥३॥ जयाचिये वोळगे जातां आडकाठीच नाहीं भीतरी गेलिया भान पाविजे। अरोधे विरोधें समतुल्य देणें न मगतां अभरि देइजे। तो क्षणमाजीं दे तें नसरे कल्पकोटि ऐसिये धुरे कां दुऱ्हाविजे। ऐसियाचे गांवींची सुखवस्तीची पुरे मा बहुत काय अनुवादिजेरेरे॥४॥ ऐसा वैकुंठपुरपति पुंडलिकाचिये भक्ती अमूर्त मूर्तीस आला। भक्तां अमरपद देतुसें अवळीला नामें यमलोक विभांडिला। जिहीं जैसा भाविला त्या तैसा पालटु दाविला परि अणु एक नाहीं वेंचला। बापरखुमादेविवराविठ्ठलु आम्हां गीतीं गातां जोडलारेरे॥५॥

## पांडुरंग प्रसादानें प्राप्त झालेल्या स्थितीचा विचार

२९८. बावनाचे संगती द्रुम भावें रातलें। सेखीं आपुलिया मुकलें जातीकुळा॥१॥ लोहाचे सायास परिसेंसी फिटलें। तैसें मज केलें गोवळ्यानें॥२॥ मेघजळ वोळे मिळें सिंधूचिया जळा। तैसा नव्हे तो वेगळा एक होऊनि ठेला॥३॥ बापरखुमादेवीवरविठ्ठल नुरेचि कांहीं। उत्तम मध्यम ठाई व्यापुनि असे॥४॥

२९९. जे ब्रम्हीं पाहतां मन न सिरे कोठें। ऐसियाचे पेठें मज उभे केलें॥१॥ नावाडा श्रीरंगु जाहाला हाळुवारु। तेणें पावविला पारु ब्रह्मविद्येचा॥२॥ श्रीगुरुविण सर्व शून्य हेंचि मी जाणें। तेथिचिये खुणें निवृत्तिराजु॥३॥ बापरखुमादेविवरी विठ्ठलीं अनुसंधान। रात्रिदिन लीन ब्रह्मस्थिति॥४॥

३००. नवांची खाणी दहाव्यानें शोकिली। अकराव्यानें जाली देशधडी॥१॥ तें ब्रह्मपंथीं माखलें। मरोनि जागृत ते जालें मन गे माये॥२॥ अवघे अंबर माझें तिंबलें। ब्रह्मरसें पिळिलें वो रंग नव्हे॥३॥ सार वियोगें माझें कर्म बुडालें। निष्कर्म जाले म्हणौनि नातळे॥४॥ जागृति स्वप्न सुषुप्ति बुडाली। रखुमादेविवरें सहित गिळीली॥५॥

३०१. ब्रह्माची पुतळी मीचि पै जालों। ब्रह्माचि लेईलो अंजनगे माय॥१॥ ब्रह्मचि सुख ब्रह्मपदीं पावलों। ब्रह्मसुखीं निवालों निजींनिज देखा॥२॥ बापरखुमादेविवरु ब्रह्मपदीं सामावला। मजसहित घेऊनि गेला निजपुटीं॥३॥

३०२. सिद्ध सांडूनि निजबोधा गेलें। निजबोधु भुललें ब्रह्मभुली॥१॥ आठवेना माझें पूर्वजन्मग्राम। अवघाचि श्रम माझा हिरोनि नेला॥२॥ बापरखुमादेविवरविठ्ठलें वेडावलें। आपणासहित मज ब्रह्मीं बुडविलें॥३॥

३०३. मन हें राम जालें मन हें राम जालें। प्रवृत्ति ग्रासुनि कैसें निवृत्तीसी आलें॥१॥ श्रवण कीर्तन पादसेवन कैसें विष्णुस्मरण केलें। अर्चन वंदन दास्य सख्य आत्मनिवेदन केलें॥२॥ यम नियम प्राणायाम प्रत्याहार संपादिले। ध्यान धारणा आसन मुद्रा कैसे समाधीसी आले॥३॥ बोधीं बोधलें बोधितां नये ऐसें जालें। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलें माझें मीपण हारपलें॥४॥

३०४. देखावया लागी जव अनौतें पाहिलें। तव तनु मनु त्रिभुवनीं व्यापिलेंगे माये॥१॥ नवलावो जालें जग हरिच होऊनि ठेलें। आठऊं विसरलें काय करूं॥२॥ बापरखुमादेविवरविठ्ठलें साच केलें। लोह परिसेंसि झगटलें तैसें जालेंगे माये॥३॥

३०५. नेणते ठायीं मन पाहों गेलें। तंव मरणचि पावले जागृतीगे माये॥१॥ जागृती अंतीं स्वप्न देखिलें। जागृतीं स्वप्न दोन्ही हारपले॥२॥ रखुमादेविवरु मरणधरणा भ्याला। तेणें मज दाविला तेजोमय॥३॥

३०६. मन मारुनियां मुक्त पैं केलें॥ मीपण माझें नेलें हिरोनियां॥१॥ मज लाविले चाळा लाविले चाळा। विठ्ठलुचि डोळां बैसलासे॥२॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु लाघवी भला। आपरुपीं

मज केला सौरसु॥३॥

३०७. अगाधपण माझें अंगीं बाणलें वरपडें देखिलें मृत्तिका लिंग॥१॥ त्यासि चैतन्य नाहीं गुण नाहीं। चळण नाहीं गुण रूप नाहीं॥२॥ माझ्या शरीरीं ज्योतिर्लिंग उगवलें। अगाध कळविलें हस्तेंविण॥३॥ बापरखुमादेविवरु ज्योतिर्लिंग विश्वनाथ। तेणें माझा मनोरथ पुरविलागे माये॥४॥

३०८. अकरावरी सातवें होतें। सातवें कोठें मावळलेंगे माये॥१॥ सहस्राची भरोवरी जालीगे माये। लय लक्षीं पाहे तंव चोजवेना॥२॥ रखुमादेविवरु दोन्ही घेतलीं। विरूनि टाकिलीं ब्रह्मडोहीं॥३॥

३०९. नेत्र लाउनि मनासीं जंव पुसों जाय। तंव देवें नवल केलेंगे बाईये॥१॥ देवें नवल केलें देवें नवल केलें। शेखी सांगतां लाजिरवाणें॥२॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठलें। माझें बाह्यअभ्यंतर व्यापिलें॥३॥

३१०. चैतन्य चोरूनि नेलें चित्त माझें सर्वे गेलें। पाहे तंव तंव तन्मय जालें गे माय॥१॥ देवें नवल केलें मन माझें मोहिलें। विसरु तो आठऊ जालागे माये॥२॥ यासी जाणावयालागी अनुउते पाहे। तंव त्रिभुवन तन्मय जालेंगे माये॥३॥ बापरखुमादेविवरें विठ्ठलरायें। माझें सबाह्यभ्यंतर व्यापिलेंगे माय॥४॥

३११.हस्ती घोडे हरण सिंहाडे। तैसे हें गुजराति लुगडें गे माये॥१॥ पालव मिरवित जाईन। शेला पदरीं धरूनि राहीन॥२॥ बापरखुमा-देविवरु विठ्ठलु सांवळा। तेणें मन माजिठा दिल्हा साउला॥३॥

३१२. एकतत्व साधि तंव हारपलों तेथें। मज पाहतां येथें मी नाहीं॥१॥ काय करूं सांगा कैसा हा आकळे। एकतत्त्वीं मिळे हृदयींगे बाईये॥२॥ संपादनी नट नटोनियां हरि। एकरूपें करि आपण्या ऐसें॥३॥ ज्ञानदेवींच तत्त्वसार हरी। चित्तानु लहरी झेपावली॥४॥

३१३. आपुलेनि भारें श्रीरंग डोलत गेलें। तंव अवचितें पाचारिलें पाठिमोरें॥१॥ माझें चैतन्य चोरिलें चैतन्य चोरिलें। अवघे पारुषलें दीन देहे॥२॥ बापरखुमादेविवरु दिनानाथ भेटला। विठ्ठल विठ्ठल झाला देह माझा॥३॥

३१४. उन्मनि अवस्था लागली निशाणी। तन्मयता ध्यानीं मुनीजनां॥१॥ मन तेथें नाहीं पहासी तें काई। सर्व हरि डोहीं बुडी दे कां॥२॥ मनाची कल्पना देहाची भावना। शून्य ते वासना हरिमाजी॥३॥ निवृत्ति म्हणे सर्व हरिपीक फळलें। ज्ञानासी लाधलें हरि कृपा॥४॥

३१५. तुजमाजी विरावें तुज गिळूनि राहावें। तुझें रूप पाहावें रूपेंविण॥१॥ तूंतें अवघें गुज म्यां सांगावें। वाचेविण बोलावें निःशब्दाकारें॥२॥ रखुमादेविवरु वाचे विनविला। प्रसन्न जाला ब्रह्म दाऊनी॥३॥

३१६.कमळावरी कमळ ठेवुनी उल्हाटे। कमळीं कमळ उफराटेंगे माय॥१॥ वासना निरसलिये। ब्रह्मकमळीं उगवलीयेगे बाईये॥२॥ कारण कामातें करुनि आपैते। महाकारण तें गगना परौतें गे बाईये॥३॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठल तेजसु। ब्रह्मकमळीं दाविता प्रकाशुगे बाईये॥४॥

३१७. निरखित निरखित गेलिये। पाहे तंव तन्मय जालिये॥१॥ उन्मनीं मन निवालें। सावळें परब्रह्म भासलें॥२॥ रूप येवोनियां डोळां बैसलें। पाहें तंव परब्रह्म आतलें॥३॥ बापरखुमादेविवरें विठ्ठलें। मुस ओतुनि मेण सांडिलें॥४॥

३१८. सदैवपण आलें गोपाळातें देखिलें। लक्षा एका जोडलें अमित्य गुणीं वो माय॥१॥ दैन्याचे सांकडीपासूनि वेगळालें। पैं जवळी बैसविलें आनंदपदीं वो माय॥२॥ जागृतिशेवटीं निद्राभुली नुठी। म्यां प्रपंचासी मिठी दिधली वो माय॥३॥ मागुती नको परतणी या शरीरीं उरवणी। प्रपंचाची काहाणी निमाली वो माय॥४॥ सदोदीत भरलें त्या तिहीं गुणां वेगळें। तें अगणित वर्षलें प्रेमधारीं

वो माय॥५॥ सबराभरित भरला या देहाभावा वेगळा। रखुमादेविवरु जवळी जोडला वो माय॥६॥

३१९. निरालंब स्तंब घातला निजयोगु। साहि वेगळेसि वो माय॥१॥ आणिकां न कळे तें त्रिगुणां वेगळें। तें मज गोवळें दावियलें वो माय॥२॥ दुर्घट घडतां न वर्णवे योग्यता। मज पुढारी वो माय॥३॥ खुणा जरी बोलों तरी मौन्य पडलें। तें परब्रह्मीं उघडलें दिव्यचक्षु वो माय॥४॥ तो चिदानंदु पुतळा रखुमाई जवळा। सोईरा सकळांसहित वो माय॥५॥

३२०. दिप दिगांतरीं दिपीं पाहातां। परेहूनि परता तो देखिला वो माय॥१॥ पाहीन मी आतां निरंजन स्वरूपता। त्यानें मज तत्त्वतां चोजविलें वो माय॥२॥ देहाचा दिवा उजळुनि ज्ञानज्योति। परपुरुषीं निवृत्ति झाली वो माय॥३॥ कवळुनि भेटी प्राणेंसि देईन मिठी। मी निःशब्देंसी गोष्टी सांगेन वो माय॥४॥ निजभावें निरोपिला सच्चिदानंदपदीं। मग मज परमानंदीं गोष्टी जोडली वो माय॥५॥ ऐसें मीं अनुसरलें यानें आपंगिलें। रखुमादेविवरु विठ्ठलें वो माय॥६॥

३२१. दीनपण दवडूनि दिनानाथें मेळविलें। ते येणें गोपाळें केलें रूप नवल वो माये॥१॥ पाहातां पारणीं फिटली चक्षूंची। सर्व आवडीची कोथळी लाधली वो माये॥२॥ आतां असो हे भरोवरी सांगणें या शरीरीं। उगवले अंतरीं दृष्टीचिया वो माय॥३॥ गुण गिऱ्हाईक जोडला अमोल मोलें घेतला। रखुमादेविवर विठ्ठला वो माय॥४॥

३२२. देहधर्मी काज गुरुराज चित्तीं। तरीच या संपत्ती फळद होती॥१॥ तैसें तुझें ध्यान करितां उद्भट। सांपडली वाट वैकुंठीची॥२॥ ज्ञेय ज्ञाता ज्ञान ध्येय ध्याता हरी। समरसें श्रीहरि तत्त्व जाले॥३॥ पृथ्वी आप तेज गगनाकृति वायो। फिटला संदेहो ये जन्मींचा॥४॥ उपदेश द्रष्टा जरि असे श्रेष्ठ। तरीच भाग्य विनट विष्णुरूपी॥५॥ ज्ञानदेवीं सिद्धि साउली श्रीहरी। गुरुकृपा करीं कुरवाळिलें॥६॥

३२३. जन्माचें व्याज आपणचि गिळिलें। मुदलाचा ठावो नाहीं ऐसें केलें॥१॥ रिणाईत नव्हे हा निर्गुणासि समंधु। येणें परमबोधु बोधविला॥२॥ ऐसी आपुली साक्षी कवणें पै द्यावी। निवृत्ति म्हणे कांहीं ठायीं न ठेवीची॥३॥ बापरखुमादेविवरें केला घातासि घातु। आपुला लक्षाचा लाभु वरी दिधला॥४॥

३२४. दुरुनि येक ऋण मागावया आलें॥ माझें मीं पाहिलें तंव कांही नाहीं॥१॥ भीतरील माझीं पंचरत्नें नेलीं। स्वस्वरूप वाहवलीं मध्य गिळियेलें॥२॥ निवृत्ति बोधें मी बोधलें॥ सांगतें वाहवलें सर्वस्वेंसी॥३॥ ऐसा रखुमादेविवरुविठ्ठलु आपण पुढारला। माझा निर्वाळा केला संसारींचा॥४॥

३२५. सत्राविये कोठडि माजी निक्षेपिलें। एकीं केलें धन ते बाविसें नेलें पातेजोनि॥१॥ आपण नेणतां ऋण घ्यावयासी गेलों। तंव तंव सर्वस्वेसी बुडालों परोपरी देखा॥२॥ मंत्र सांगितला माझ्या कानीं। जाणोनि ज्ञानविज्ञानीं वेडावलों॥३॥ ऐसें रखुमादेविवरा विठ्ठलाच्या बोला। पातेजलों सर्वस्वासी ठेलों प्राङ्मुख॥४॥

३२६. चौ तेरा आम्ही चौसष्टीचे भागे सांचिले। तें एका ऋणाईतें घेतलें वोळखीविण॥१॥ आपुलें अकरावें एक सोईरें जाणा। तेंहीं पैं तयासि मिळोनि ठेलें॥२॥ आतां मी चौघांपाशीं जाईन तिहींचि नागविलें पाहीं। तेथें कांहीं नाहीं ऐसें म्हणितलें॥३॥ ऐसा देहाचा दिवाळखोर दुसऱ्यासी घेऊनी गेला। तेणें मज दाखविला अद्वैत पारु॥४॥ सहस्त्रापरि कांहीं धरियेली जरी। ज्ञानमूढें तरी कायि जाणती॥५॥ ऐसा बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु मध्यावर्ती भला। तेणें उगाणा केला परावृत्त होऊनियां॥६॥

३२७. चतुर्देहाची भरणी पुरली। एकाएकी देखिली निजतनु॥१॥ त्याचे नांव गोवळु फिटला

काळ वेळु। जाला सकळु सकळांसहित॥२॥ ऐसा बापरखुमादेविवरु सुंदरु। तेणें माझा वेव्हारु खंडियेला॥३॥

३२८. अकल्पित द्रुम आजि संयोगे घडलें। अपार आपणातें विसरलेंगे माय॥१॥ महुरलें मन माझें मोहरलें। भक्तिफळासि कैसें आलेंगे माय॥२॥ देठींहुनि सुटलें पुढति कैसें जीवनासि आलें। बापरखुमादेविवरविठ्ठलें ऐसें केलेंगे माय॥३॥

३२९. पांचासहित लयातीत जालिये वो। प्रेम भक्ती अनुसरलें वो काळ्या रूपासी॥१॥ ठायींचाची काळा अनादि बहु काळा। म्हणोनि वेदा चाळा लाविलागे माये॥२॥ बापरखुमादेविवरें जन्मावेगळें पै केलें। म्हणोनि भाज जाले बाईयेवो॥३॥

३३०. संसारा तुकलिये वेव्हार मुकलिये। घराचारा पारुषलिये काय सांगों॥१॥ माझें जिणेंचि बुडालें माझें जिणेंचि बुडालें। विठ्ठलें कुडें केलें काय सांगों॥२॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठलें। सहज मोलेंविणें विकत घेतलें॥३॥

३३१. तुज जाणावया जाय देवा। तंव आठवे इंद्रियांचा हेवा। मनें करूनियां ठेवा। स्थान एक निर्मिलें॥१॥ मग इंद्रियें भजती मना। अल्प जाली पै वासना। स्वरूप देखावया मना। मन नयन एकरूपें॥२॥ तुझें ध्यान आवडे कान्हा। रूप न्याहाळी नयना। निजीं निरंतर वासना। कृष्ण ध्यानीं तत्पर॥३॥ ऐसें तुझें रूप चोखडें। मनें निवडिलें पै कोडें। जें योगियां न संपडे। ध्यानरूपीं रया॥४॥ या रूपाचा सोहळा देई। हेंचि मागतुसे पाही। आणिक न मागे गा कांहीं। तुजवांचोनि स्वामिया॥५॥ जरी स्वार्थ करूं कल्पनेचा। हरि हाचि विस्तारु प्रपंचाचा। काय यासि वर्णू वाचा। तूं दीनाचा स्वामी होसी॥६॥ नको हा संसार व्यर्थ। भक्ति ज्ञान वैराग्य परमार्थ। हाचि देई मानीं स्वार्थ। नलगे अर्थ मायेचा॥७॥ माझ्या मनें ध्यान केलें। रूपीं रूप हिरोनि घेतलें। थितें मीपणहि नेलें। मज आपुलें म्हणवें॥८॥ गोंवी ज्ञान पदवियें। ज्ञानाग्नि दावी मांडवीये। दृश्य द्रष्टा सर्वज्ञ सोये। अवघा होये दातारा॥९॥ विश्व हें तूंचि क्षरलासि। आत्मा जगदाकारें होसी। सवेंचि क्षरलें मोडिसी। तदां शेखी एकत्व॥१०॥ बापरखुमादेवीवरध्यान। वृत्तिसी साधलें पूर्ण। ज्ञानदेव म्हणे निधान। विठ्ठलीं मन स्थिरावलें॥११॥

३३२. तुज पासाव जन्मलों हरी पुढती सामावलों तुझ्या उदरीं। तुझिया व्यापकपणें चाले सत्कर्माची दोरी। सायीखडियाचें बाहुलें कैसें हावभाव धरी। सूर्यकांत वेधें अग्नीच प्रसवे सहजे समंधु ऐसा धरी रया॥१॥ तुझें तुज देवा सांगता निकें। समर्थेसि केवी बोलावें रंकें॥ध्रु०॥ अहंकार महदादि भूतें गुणेंसि आलीं। तें चैतन्यनयनीं अधिष्ठिलीं। सर्व शरिरीं वायो व्यापिला कीं पृथ्वींसि मिळोनि आकाशा भरोवरी जाली। ते हे स्थूळ लिंग कारण तिहीं तत्त्वेंसी प्रकृति अथिली रया॥२॥ सर्व होणें तुज एकाचें। दुजेपण तेथें आणावें कैचे॥ध्रु०॥ चंद्रमा मन चक्षुसूर्योदिशा श्रोत्र आकार उकार मकार प्रणव मन बुद्धि चित्त अहंकार। ब्रह्मा विष्णु महेश राजस तामस सात्विक माया ब्रह्मीचा दावि पाड पावो तुज वेगळे काय आहे तें सांग पां तरि मज कां म्हणवितासि जिऊ रया॥३॥ जेथें पाहें तेथें तुंचि दिससी। लपोनिया अबोला कासया धरिसी॥ध्रु०॥ रसना रस सेवावें हे तो जीव आत्म्याची स्थिति। श्रवणीं ऐकणें की नेत्री देखणें हे तो तुझीच नाद श्रुती। घ्राणसि परिमळ घेणें कीं हस्तपादादि कां चरगती। हे तो तुझींच पांचै तत्त्वें तरीं तूं मज कां भोगावितांसि यातायाती रया॥४॥ लाजेसि ना तूं देवा माझें ह्मणतां। संन्यासावें कैंचीरे कांता॥ध्रु०॥ इंद्रियें दारुणे जीव आत्मयासी हे तो सुखदुःख प्राप्ती। तेणें हें कारण कीं आत्मा पाव यातायाती। इंद्रियें दंडून तप जें करावें ऐसें बोलती वेद श्रुती। साहीजणासि तो वेवाद लाविला हे तो तुझीच करणी सांगती रया॥५॥ दुजेंविण एकला खेळतो स्वारी। कवणातें

जय कवणा आली हरी॥ध्रु०॥ अंगें ब्रह्मा जालासि उत्पत्ती करावया सृष्टी। ते समयीं तो रचिली विषयाची कसवटी। ऐसें तुझें वालभ मिरऊं जाय सृष्टि। तंव सुखदुःख लागतसे पाठीं। येथें काय माझा अपराध जाणसी तरि शस्त्रेंसि मान निवटीं रया॥६॥ सगुण रचना वोजा विस्तारली। भुजंगी व्याली तिची काय झालीं पिलीं॥ध्रु०॥ वेद प्रमाण करावया कारण कीं कृष्णमूर्तिची बुंथी घेणें। अनंतब्रह्मादिकांसि आदिवंद्य तो तूं राखसी गौळियाचीं गोधनें। अंबऋषीकारणें गर्भवास साहिले कीं अजामिळादिकांसि उद्धारणें। वैरियां भक्तां येकिचि मुक्ती मा समर्थु नाहीं येणें मानें रया॥७॥ अनंत ब्रह्मांडें घडिसी मोडिसी। अकर्तेपणें जैसा तैसा अससी॥ध्रु०॥ एक विरा माया मारावी कीं गणिका उद्धारावी हे कवण प्रकृती। दशरथापिता रौरवीं कीं वैरिया सायुज्यता मुक्ती। कर्मभ्रष्ट पांडव सरते केले की अज्ञानासि मोक्षप्राप्ती। शास्त्रें पुराणें वारूं जाय तंव अधिकचि गुंती रया॥८॥ सुताचें गुंडाळें उगवीं पा वहिलें। खंडूनियां सांडी देवा एकाचि बोले॥ध्रु०॥ मिथ्या हा प्रपंच कीं दर्पणीचें दुजे जळीं बिंब प्रकाशे। एक साचें दुजें दिसें तैसेंचि दुसरे का प्रतिभासे। लटिकें म्हणों जाय तंव तेथें मन कां विश्वासे। सगुण निर्गुण हे तों तुझीच माया तुझी तुजमाजी दिसे रया॥९॥ अर्धनारी सोंग पाहतां निकें। साच लपऊनि दावितो लटिकें॥ध्रु०॥ सिद्धासी साधन हे तों कष्टचि वायांविण। अनंत प्रत्यक्ष जाणोन कायसें परिमाण। स्वयंभासि प्रतिष्ठा करणें हे तों देखतचि अज्ञानपण। निजबिंबामाजी प्रतिबिंब बिंबलें तैसें सगुण निर्गुण तुजमाजी रया॥१०॥ सहजसिद्ध तें तूं आपणपें पाहीं। बाहिजु भीतरी ये दोन्हीं नाहीं॥ध्रु०॥ विश्वरूप अळंकारलें कीं मुसें आटली भांगारें। अथवा घटमटादिकीं अभावीं परिपूर्ण असिजे अंबरें। उदकी पडिला काश्मिरा तो नागवे निरा न सरे। दुसरेपणें तैसा आदि मध्य अंतीं हृदयींचा जाणोनि पूर्णबोधेंविण द्वैत न सरे रया॥११॥ सच्चिदानंदरूप तत्वता। लटिकेंचि बंधन बंधना मुक्ता॥ध्रु॥ म्हणसी माझा संकल्प फळला तरि म्या दुःख नाहीं इच्छिलें। अवघा तुझा खेळ बहुरूप असें विस्तारलें। जाणसी तें करी देवातें तुझें तुज पुढां सांगितलें। तेथ काय माझा अपराध देखसी तरी देह कां खंडिले रया॥१२॥ पुरे पुरे आतां जड जालें जिणें। उरी नाहीं देवा लाजिरवाणें॥ध्रु०॥ ऐसीं इंद्रियें वासनेसी आणीजती ते तुझी तुजमाजीं सामावती। समस्त जीव हे तों तुझे आकारलें येरी ते लटकीच भ्रांती। जाणसी तें करी देवा तेचि तें सांगों किती। दग्धबीज तरु बीजीं सामावला तैसा तुजमाजी श्रीगुरुनिवृत्ति रया॥१३॥ ऐक्य जालें तेथें नित्य दिवाळी। सहज समाधि तेथें कायसिरे टाळि॥ध्रु०॥

३३३. देवा तुज नेणतांना कांहीं न सांभाळितां नाना याति धरुनि धांविन्नलों। धांवतां धांवतां पुढें सुनाट देखिलें त्याचि पाउलीं मागुतां मुरुडलोंजी सुंदरा॥१॥ आलों भक्तिशाळें अतौता तेथें कांहींएक गौरव गमलें। जेणें वेषें आहे तेणें तुजजोगें नव्हे मग ऐसें कांहीं एक गुंथावें केलेंजी सुंदरा॥२॥ असो येणें औटहातें काई होईल म्हणौनि एकचि वेळा उगविलें। आब्रह्म सकळैक जग आपणापें तुज एकालागीं आणियेलें हो सुंदरा॥३॥ आतां अवघा तुज डोळां पाहेन दातारा तुज आलिंगीन अवघांचि बाहीं। अवघा मुखीं तुजसी बोलत आहे न ध्याईजे मा चालिली अवघाचि पायींजी सुंदरा॥४॥ आतां अवघा वेळु अवघेपणें तुज अवघीयातें गिळूनि ठेलों। तुझिये भक्तीची चवी जों लागली तंव अवघेपणा उबगलोंजी सुंदरा॥५॥ पाहतां दर्पण परता नेलिया दुजेपण रिघे पाहाते भागीं। ऐसे आदि मध्य अवसान जाणोनि अवचितां जडिनलों तुमच्या अंगीं हो सुंदरा॥६॥ आतां तुज पावेन कवणे दशे नातळसी दुजेपण केलाहो तूंपण नाहीं। तेथें मीपण कैचें होतेंनि मिळणें ते गेलें

ठाईच्या ठाईजीं सुंदरा॥७॥ ऐसा न जेविलाचि जेविला कीं जेविलाचि भुकेला तृप्तातृप्त दोन्ही नाहीं। बापरखुमादेविवरविठ्ठला वरपडा जालों ऐसियासी कीजे काईजी सुंदरा॥८॥

३३४. आदि पुरुषा जय विश्वंभरिता नानापरि तुझा खेळू। जया ब्रह्मगोळु कल्पकोडी घडी मोडिता नलगे वेळु। वेदपुराणें मत्सरें भांडती बहुतें करित होती कोल्हाळु। होय नव्हे ऐसी भ्रांतिसी गुंतली तयासि तूं आकळु गा॥१॥ तुझें नाम बरवें तुझें नाम बरवें। हरि वोळगों आपुल्या साच भावें॥ध्रु०॥ गायत्री पासाव वोळलें क्षीर करणी पासाव विस्तारु। दूध दही ताक नवनीत आगळे चहूंचा वेगळा परिभरु। जो ज्याविषयें पढिये तोचि मानिती थोरु। सांठवण करितां एकवट नव्हे तैसा नव्हे भक्तिआचारू॥३॥ कवणा एका राया बहुत पैं सेवक त्यासि दिधला वेगळा व्यापार। आपलाले म्हणिये सुचित राहटतां मान करील अपार। समर्थाचा मोहो जाणुनि वेगळा करूं नये तयासि मत्सर। साभिलाषपणें वर्ततां देखेल शिक लाविल हा निर्धार॥४॥ कव्हणा एका राया बहुत पै लेंकुरें आळविती नाना परी। ऐकें पाठीचीं एकें पोटीचीं एकें वडिलें एकें धारि सेखीं सारिखाचि मोहो करी। द्वैतभेदु जया नव्हे संवादु सेखीं तयासि तो निर्धारु गा॥५॥ सागरींचे तरंग आनेआन उमटती तेतुले अवतार होती। शिव केशव उंच नीच आगळे कासियानें मानावी भक्ति। परमात्मया सौरसें तेचि हे मानली विश्वमूर्ति। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला परियेसी ज्ञानदेवो करिताहे विनंति गा॥६॥

३३५. आल्हादपण काय सांगशी देवा। मन बैसें भावा तैसें करी॥१॥ हा घोडा हा राऊत करुनि दाखवा। मग पदीं बैसवा ब्रह्माचिये॥२॥ मी डोलेन आनंदें तुमचेनि प्रसादें। रत्न जेंवि अंधें देखियेले॥३॥ करा तत्त्वीं सौरसु म्हणे निवृत्तिदासु। जेथें रात्री दिवसु अथिचिना॥४॥

३३६. तुझे पवाडे सांगतां तुजपुढें। मुक्तीची कवाडे उघडती॥१॥ नाहीं जातिकुळ म्यां तुज पुसिलें। पन मावळलें देखोनिया॥२॥ तुझें तुज पुसतां लाजिरवाणें। तरि हांसति पिसुणें प्रपंचाचीं॥३॥ उगवितां भलें कीं नुगवितां सांपडलें। ज्ञानदेवो बोले निवृत्तीसी॥४॥

३३७. फळाचें बीज कीं फळ। म्हणौनि पत्र पुष्प मूळ चोजवेना॥१॥ ऐसि हे रचना नकळे गा देवा। सिद्धांतु अनुभव साक्ष देतो॥२॥ मृत्तिकेची पृथ्वी कीं पृथ्वीची मृत्तिका। या गति अनेका चोजवेना॥३॥ बापरखुमादेविवरु निरंतरी। बाह्य-अभ्यंतरी नांदतुसे॥४॥

३३८. सर्वगत निर्धारितां आत्मा एक चराचरीं तेथें तंव नाहीं दुजेयाची परी। चारी खाणी चारी वाणी चौऱ्यांयशीं लक्ष योनी मी अपत्य तुमचें अवधारी॥ तुझिया भेटीलागी रोडेलों दातारा हे तनु होतसे संकीर्ण भारी। जवळीच असतां भेटि कां नेदिसी थोर सिणविलो वोरबारी रया॥१॥ तुजविण मी कष्टलों दातारा कष्टोनि खेदक्षीण जालों। संसारश्रम त्रिविधतमें मार्ग सिद्धचि चुकलों॥ उपजोनियां बुद्धी येऊं पाहे तुझे शुद्धी तंव द्वैतसंगें भांबवलों रय॥ध्रु०॥ मागील कष्ट सांगतां दुर्घट नको नको ते आठवण। सुखदुःखें प्राण पिडला गा बापा गुणत्रयें ओझें जडपण। भव विभव निरय आपदा ऐसें ऐकिलें आनेआन। तूं हे जीव तरी भोगितां हे कवण हें आकळीतां वाटे विंदान रया॥२॥ वेळावेळ भावाभाव बोलतां अवचितां चोरटा काम उठी। तुज देखतां अनादि वाटपाडे वधापरि धैर्य धांवणे न करिसी गोष्ठी॥ तुझियें दृष्टी शरीर काळ फाडफाडूं खातो कवण काकुलती तया ना तुज नुठी ऐसें विपरीत नवल वाटे ये सृष्टीं रया॥३॥ ऐसें न कळतां भरंवसा मी हिंडे दिशा हें तंव मन जालेंसें पिसें। असोयी जातां अपायी पडिजे श्वास उश्वास पाळती सरिसे॥ वय वित्ताचा अंत घेउनि नाडळेपण परत्र पंथ

नकळे भरवसें। कर्म वाटे आड गर्वे रिगतां तंव विघ्नचि उदैलें अपैसें रया॥ ४॥ ऐसी माया मोहाची भुलवणी घालुनि कीं बापा लाविलें अविचार कामा। उपाधि वळसा नथिला धिंवसा जड केला शुद्ध आत्मा॥ मी तूं कवणाचें विंदान न कळेचि ऐसी नित निगुति सीमा। तर्कबीज कैसें सांपडलें वर्म मा हाचि भावो कल्पिला आम्हा रया॥५॥ ऐसा वाउगाचि सोसु पुरला गा बापा परि तूं न पडसी ठाउका। साही दर्शनां अठारा पुराणां वेवादु नाहीं खुंटला॥ आपुलाला स्वमार्गु संपादितां केउतां जासी गांवींचा गांवीं। विश्वास नाहीं चित्ता ये देहीं ऐसियासी कीजे कायि रया॥६॥ ऐसा जन्मोनि का उबगलासी मायबापा कवण कां सांडिली ऐसी। रंका काळाचेनि धाकें सत्कर्में अनेकें विश्रांति नाहीं या जीवासी॥ समर्थपणें वेगळें घातलें तरि दैन्य दारिद्र कां भोगवितासी। आपुलें म्हणतां न लाजसी देवा तरि सांगपां माव आहे ते कैसी रया॥७॥ समुद्रीचें जळ घेऊनि मेघ वरुषती मेदिनी तें कां मागुतें मिळे सागरीं। आकाशा पासाव उत्पत्ति वायु हिंडे दशदिशीं। परि तें ठायींच्या ठायीं राहणें जालें। जळींहूनि तरंग अनेक उमटती परि ते जळींचे जळीं निमाले॥ स्वप्नसंगें परदेशा गेले तरी जागृति ठायीं संचले रया॥८॥ ऐसा तुज पासाव सगुण स्वरूप जन्मलो गा देवा आतां कैसोनि वेगळा निवडे। लवण पडिलें जळीं कीं कर्पूरासि नुरे काजळीं तैसें भावार्थ प्रेम चोखडें॥ ज्ञानदेव म्हणे रुक्मिणीरमणा देई क्षेम वर्म न बोले फुडें। निवृत्तिप्रसादें खुंटला अनुवादु फिटलें सकळही सांकडें रया॥९॥

३३९. तो अपुलिया चाडा कोटिगर्भवासां येतां श्लाघिजे तुझिया गोमटेपणा पकडलों दातारा। हें बोलणें बोलतां लाजिजेजी सुंदरा॥१॥ तुमतें देखिलिया हें मन मागुतें मोहरेना। वज्र द्रवे परि मन न द्रवे हाचि विस्मो पुढतु पुढती सुंदरा॥२॥ ऐसें स्थावर जंगम व्यापिलें कीं आपुलें वालभ केलें तूंत देखिल्या त्रिगुणुपरे ऐसें कोणे निष्ठुरें घडविलेजी सुंदरा म्हणौनि तुज माजी विरावें कीं देवा तूंचि होऊनि राहावें। बापरखुमादेविवरा न बोलावे परि बोले हें स्वभावेंजी सुंदरा॥४॥

३४०. चंद्रा पूर्णिमे पूर्ण शोभा। कळा तुटलिया कैची तेथें प्रभा॥१॥ तैसा कां गा निकुर वृत्ती करिसी। सर्वांठायीं विभांडिसी गा देवा॥२॥ कापुरें दूतीसी रुसणें केलें ती। तरि सांगपा कवणाचें काय गेलें॥३॥ तरंगु निमालिया जळासागरू सागरसि नाही दुसरा उपचारु॥४॥ शिरा शरीरीं एक वंकीं जैसी। आतां तुझ्या पायीं आम्हा पाइकी तैसी गा देवा॥५॥ रखुमादेविवरा विठ्ठला राणे राया। मी न बोलें तरि बोलें काजा तुझिया गा देवा॥६॥

३४१. शहाणियाची दासी होईन कामारी। तो अनुसरु तेथें नव्हेरी॥ चित्तासारिखा मिळो गोंवळु रानींचा। तो मज मेरु कनकाचांगे बाईये॥१॥ लक्ष असो त्या मूर्खाचे गोठीं। परि तो नाणावा माझिये दृष्टी॥ कर्पूराची राशी कुल्लाळ नासी। कवण साहित्याची तुटी गे माये॥२॥ अविंधे मोतिये तेजें सुढाळें। सोहरूं जाणे ते शहाणे॥ टाकियाच्या घायीं पाषाण विंधती। तैसें त्या मूर्खाचें जिणेंगे बाईये॥३॥ चंदनाच्या दूतीं वेधल्या वनीच्या वनस्पती। परि तो वेळु न वेधें चित्तीं॥ उदकामाजीं तैसी पाषाणाची वस्ती। तैसी त्या मूर्खाचि संगतीगे बाईये॥३॥ भ्रमरु काळा भोगी पुष्पयाती सकळा। तेथें म्हैसा येवो नेदावा जवळा॥ परिसु पाषाणाचा परि तो गुणें आगळा। तैसा वैष्णव मिळो मज दुबळागे माये॥४॥ ऐशा सकळ कळा भोगिसी। नंदरायाचा गोंवळु म्हणविसी॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला तुज न विसंबे अहिर्निशी रया॥५॥

३४२. नामरूपीं प्रीति कीं ध्यानीं सगुण मूर्ति। हेचि तुझी यश कीर्ति जाणोनियां॥ हृदयीं तुझें रूप मुखीं नाम घोष। नैवेद्य प्रसाद जठरीं

आम्हा ॥ निर्माल्य मस्तकीं वंदूं तुमचे चरण हाचि अच्युता तुमचा महिमा रया ॥ १ ॥ अखंड नाम वाचे हेंचि तप साचें। तेंचि स्वरूप दिसें हृदयीं तुझें ॥ २ ॥ तुझें नाम निर्धारितां हेंचि गा तप आतां। काया वाचा मनें न विसंबे तत्त्वतां। म्हणौनि आसनीं पंथीं शयनीं जड पडो भलतैंसे परि नाम न संडी अनंता। जीवाचिया जीवना सगुणगुणनिधाना हेंचि प्रेम देई निज भक्ता रया ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला आनंद सुखाचिया वोवरा। पाहे तंव भरला दशदिशा दुसरा न दिसे सोयरा। तेविं गुण नामकीर्ति तेचि आम्हा मूर्ति हृदयीं न विसंबे दातारा। येणें निवृत्तिरायें खुणा दाऊनि सकळ आतां जोडलासी माहेरा रया ॥ ४ ॥

३४३. भुक्ति मुक्ति कारणें न घाली तुज सांकडीं हे तों ठायींचीचि जोडी। कांहीं जोडिली असे तूज नेणता हें तुझेचि दळवाडें ऐसें जाणोनि फुडें न बोले दातारा ॥ १ ॥ सलिलीं रंग तरंगीं सलिल। निवडूनिया कोण वेगळें करील ॥ २ ॥ उपाधिभेदें भूमि झाली भिंती ऐसें विचारिता चित्तीं अनु न देखे। इतुलालें जीवपण तूज मज दातारा वेगळेंचि नाहींरे गोवळ्या ॥ ३ ॥ दर्पणाचें दुजेपण दर्पण जंववरी तें काय वेगळाल्या व्यापारी ठेवूं येईल। नाम घेऊनि ठेले हेम अळंकार। इतुलाले अंतर तुज मज रया ॥ ४ ॥ वाहाटुळीची धांव केव्हडा वेळु आकाशीं। सहज स्वभावें निमे अपैसी। गगनावरि जाता नलगे पाल्हाळ। तैसें तुज मज सकळ ऐक्य रया ॥ ५ ॥ गगना वेगळा घटु केवि निपजे दातार यापरी सर्वेश्वरा तूं मी एक। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु भोगिया। येरी असतु वाउगिया गोठी रया ॥ ६ ॥

३४४. भेटि जाली धुरेसी। पालटु जाला या जीवासी। लोहो लागलें परिसेसीं। तें सुवर्ण जालें। ऐसा गुणागुणाचा दाता। तो विश्व व्यापिलेंरे अनंता। काय पाहतोसि आतां। विमानीं वाट पाहातुसें ॥ १ ॥ तरि मी गुंतलों दातारा। येऊनियां संसारा ॥ ध्रु० ॥ नट घेऊनियां अंगवणीं। वरूं नेणे संपादणी। एकत्र जालें लवण पाणी। तें मिळोनि गेलें। ऐसा बहुतां गुणांचा दाता। तो विश्व व्यापिलें रे अनंता। काय बा पाहातोसि आतां आपुल्या सारिखें करी बापा ॥ २ ॥ चंद्र चकोरा नावडे। सेखीं होणार तेंचि घडे। वृथा वेंचितासि खडे। परिस म्हणोनि ठेविसी। आतां असो हा गाडोरा। शरण रिघे रखुमादेविवरा। अरे अरे विठोजी दातारा। नवजे घरा आणिकांच्या ॥ ३ ॥

३४५. यम नियम पाप पुण्य आम्हासी। आपण भलतेंचि करिसी। तुझिया थोरपणा बिहुनी असावें कवणें शंकावें रायासी। प्रत्यक्ष जगी बाटली नारी तिचें स्मरण लोकांसी। पुराणी डांगोरा पिटिताति हें पतिव्रतापण तयेसी रया ॥ १ ॥ आवडे तें करिसी देवा कवण करी तुझा हेवारे ॥ ध्रु० ॥ बहुता परी उणें ऐकिजे पांडवा सांगो या गोष्ठी। पांचांपासुनि जन्मले पांचैजण येक पत्नीच्या पोटीं। गोत्रवधु करुनि राज्य करिति विश्वासि वंद्य शेवटीं। जन्मेजया ऐसें बोलिला सत्य तो पापिया जाला कुष्टी ॥ २ ॥ प्राण जाई तंव बोलिला तुज। पतन तया दशरथा। गणिका एक पाखिरु पोखिलें होतें पाचारिलें प्राण जातां। कीं तयेसी ऊर्ध्वगति ऐसीं बोलती पुराणें कासया न मिळे पाहतां। बोलणें खुंटलें तुजपासी देवा वेव्हारु नाहीं सर्वथा ॥ ३ ॥ तपाचा जो राशी पुण्यपणें थोर। तीर्थरूप सर्वां तीर्थमंत्राचा अवतार। देव आणि शक्ती सूर्य तैसा विचारितां। तो मांडव्य ऋषि वाहिला सुळीं येक ऊजाला वधिता। पुत्रा पाचारिलें पापिये दुर्जनें तो वैकुंठीं आजामेळु सरतारे रे ॥ ४ ॥ यज्ञमुखीं अवदानें देति त्या करिसी वांकडें तोंड। लोणी चोरावया जासी घरोघरीं उघडिसी त्यांचीं कवाडें। छप्पन कोटि यादव संगती हे तुझे ते त्वां केले शापावरपडे। कोळियानें तुज विंधिलें पायीं। त्यासी सायुज्यता कोडें रया ॥ ५ ॥ अष्टांगयोगें शरीर दंडिलें तुजलागीं जालीं पिसी। पुत्रदारा धन सांडूनियां जन

हिंडताती वनवासी। गाती वाती पूजिती तूतें त्यांसि निजपद सायासीं। विष पाजूं आली पूतना राक्षसी सायुज्यता देणें तियेसि रया॥६॥ वारया मोट बांधेल कोण आकाशासि कुंप कायसा। सूर्यापुढें दिवा लाऊनिया चालणें वाऊगाची शिण जैसा। विचित्र तुझें रूप अव्हेरुन जासी। सर्वेशा ज्ञानदेव म्हणे देवादिदेवा। जन भांबांविला ऐशा मावा रया॥७॥

३४६. म्हणोनि तुझें रूप देखिलिया दिठी। जयसच्चिदानंदपदेंसी मिठी। ओंकारेंसी त्रिपुटी। न साहे तो तूं सगुण जगजेठी॥ या दृष्टीचेनि सुखें माये हृदयीं भासलें रूप। शेखीं पाहतां कां आम्हा चाळविसी रया॥१॥ आतां सेवेलागीं सेवा करणें कोणाच्या अंगें। स्वामीपणें जगीं होउनि ठेले॥२॥ ते सांवळिये प्रमाण न दिसे अनुआन। शेखीं ध्यानीं विरालें तें मन गे माये॥ रूप खुंतलें पण हाचि हा संपूर्ण। तेथें द्वैताद्वैतपण हारपलें रया॥३॥ आतां बुद्धियोग इंद्रियांचा तो तूं गोपवेषें साचा। भक्तियोगाचा सौरसु दाविसी आतां। बापरखुमादेवीवरा विठ्ठलाच्या पायीं सुख। तेंच दरुशन येक जालें रया॥४॥

३४७. आठवीं तंव तूंचि जवळिके नाठविसि तरी निजमुखें। आठव न विसरु पाहे तंव सगुणचि हृदयीं एक रया॥१॥ तुझ्या नामाचा आठऊ रूपाचा आठऊ ध्यानाचा आठऊ असो मना॥२॥ विसरु पडे संसाराचा आठव होता तुझ्या रूपाचा। येथें नाम रूप ठसा हृदयीं राहो॥ जिवाचिया जिवलगा माझिया श्रीरंगा। गोडि घेऊनिया द्वैत पाहे रया॥३॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला सगुणीं सुमनीं गुंफिले। प्रीति आवडे तों कोंदाटलें सुमनी हें विरालें॥४॥ जाली नामरूपीं ऐक्यभेटीं। नामरूप सार जाणोनि जीवन संसारा जाली तुटी रया॥५॥

३४८. कितिये स्तुति स्तवने स्तविती स्तोत्रें विधिगुणें॥ विधि तूं तें कर्म करणें परि नेणती मार्ग॥ अकर्मीं विकर्मीं जगीं शब्द म्हणती। हा ब्रह्म कर्माचा भागु। शेखीं ब्रह्मकर्म तो योग चुकलें पंथ शेखीं ब्रह्म तें तूंचि आतां॥ सगुण हृदयीं धरुनि। अनु नातळे वाणी रया॥१॥ तुझा गोपवेष हृदयीं सौरसु मज सुखाचें सुख निजप्रेम देई रया॥२॥ म्हणोनि यज्ञ यज्ञादिकें तपें व्रतें अटणें। बहुविधि अनेकें पंचाग्नि गोरांजनें। सुखें करिती विधि द्वाद्वश अग्नि जळवास। ऐसा धरुनि हव्यास परि ते चुकले कार्यसिद्धि॥ तुझें भजन सगुण मज प्रिय गा दातारा। अनु न लगती मजलागीं आधि रया॥३॥ बापरखुमादेवीवरा उदारा सोईरा। सगुणागुणाचिया निर्धारागुंतल्या येसी। मना पुरली हांव विश्वीं अळंकारला देव कीं दिठी न विकारें अनुध्यासीं॥ येणें निवृत्तिरायें खुणा दाऊनि सकळ सुखीं सुखावोनि ठेलें निजध्यासें रया॥४॥

३४९. आपुलिये खुणें आपणपे दावी। कीं सगुणबुंथी चोख मदवी। ऐसा सुंदर गोपवेष। कीं तत्त्वमस्यादि सौरसु जेथें श्रुति नेति नेति ठेल्या पायीं। तो तूं सगुण निर्गुणी निजानंदें सहजचि कळे विदेहीं रया॥१॥ एक म्हणतां दुजे नाहींरे तेथें शून्य तूं सांगसी काई। निरशून्य तें आतां सगुण ते निराळले तेथें हे कल्पना काई रया॥२॥ नामरूपछंद गोडी ऐसी इंद्रियांची आवडी। परतोनि पाहे घडिघडी तोचि तूं॥ तेथें आठऊ ना विसरु। परी तोचि गा तूं थोरु ऐसा निर्धाराचा धीरु धरी॥ ऐसें जाणोनिया जरी सांडी मांडी करिसी। तरी पावसी कोण येरझारी रया॥३॥ तोचि तूं जगदात्मा विसावा घडि क्षण न विसंबावा। हाचि होऊनि रहावा प्राण माझा॥ म्हणोनि धीरु धीरु बापरखुमादेविवरा विठ्ठला आतां। प्रपंचीं न गुंते साचे आम्हा जितांचि मरणें कां मेलिया कल्पकोडी जिणें धरि या निवृत्तिची आंत रया॥४॥

३५०. अगुणाचिया पा समंधा गुणसंबंध करू। नकळे हा वेव्हारू लोकांमाजी। हा नाटकु विंदाणी न कळे याची करणी। दाटोनि अंतः-करणीं रिघों पाहे॥१॥ सरसर परता गुणाचिया

गुणा। निजसुखनिधानां तूंचि एकु॥२॥ तुझ्या गुणागुणीं वेधलीं मुनिवृंदें। मानसाचिया छंदें वर्तसी तूंचि॥ आपुलें निज सोंग भुलविलें जयासी। अखंड मानसीं जवळी आहे॥३॥ ऐसा हा नवलावो विस्मो हा वाटला। भाव हा गळाला काय सांगों। रखुमादेविवरु विठ्ठलु हृदयीं वसे। बाह्यअभ्यंतरी केव्हां वेगळा नव्हे रया॥४॥

३५१. तुझिया गुणासाठीं लागलों भजनापाठीं। तुझी सगुणगोठी हृदयीं वसे॥ मी म्हणे तें जीवन कीं निर्गुण चैतन्यघन। व्याप्य व्यापक स्थान दुजें नाहीं॥ विश्वाकारें जगडंबरला जो श्रुति नेति नेति म्हणोनि ठेला। हेंची भावें विचारी भलें॥ परि दृष्टी सगुण हृदयींचि हेचि खुण परी न विसंबे तुझीया पाया रया॥१॥ तूं एकुची एकला बाहिजु भीतरी। कोणा द्वैतपरी सांगों बापा॥२॥ म्हणोनि परापर स्थूलसूक्ष्मादि विचार। तो तुझा सगुणची आधार मज वाटे॥ म्हणोनी ते तुझी बुंथीं हेचि उरो आम्हां स्थिती। कीं द्वैताद्वैत भ्रांती न लगे मना॥३॥ ते तुझेनि सुखें पडिपाडे आणि हें मनची स्वयें उजाळें। तेथें थोडें बहू न निवडे ऐसें जालें॥ तेथें आपुलेंची अंग विसर पडो ठेलें। शेखी सोंगची दुणावलें रया॥४॥ या मनाची भ्रांती फेडावया तो तुझा सगुणभाव मज गोड लागे। पाहाते पाहाणियामाजि स्वयेंची विस्तारलासी कीं देखणेंची होऊनी अंगें। त्रिपुटीसहित शून्याशून्य निमाले ॐकार मार्गही न चले। रखुमादेविवरु विठ्ठले उदारे। सुख भोगिजे येणें अंगे रया॥५॥

३५२. डोळ्याची निशी कोणें काढिली। की रविबिंबा हारीं कोणे आणिली॥ कीं काळिमा पाठी प्रकाशु तरि चंद्र हा नव्हे चकोरा पारणें। फिटलें विकासित कुमोदिनी चंद्र हा न दिसे सेखीं नवलावो हे तुझी बोली रया॥१॥ तूं चंद्रमा आर्त चकोरें आम्हीं। तृप्त झालों तुझ्या नामीं रया॥२॥ जाणाचिया राया सुजाणा। कीं जीवाचिया जिवना। जिवलगा सोईरिया निधाना गा ऐसा॥ तो तूं प्रकृतिपरु न कळे तुझा विचारु। साचारी वेवादती दाहीदिशा॥ ऐसोंचि लाघव कोणा दाविसी दातारा। बोलु ठेविसी कोणा कैसा रया॥३॥ आवडी माजी लागे हे गोडी। नाम रसनेसी सुखनिज कीर्ति हे गाढी॥ तुझा स्वरूपतंतु लागो या मना। अंतरीच्या जीवना अगा तूंचि॥४॥ लक्षालक्ष संभार नातुडे हा विचार म्हणोनि श्रुति नेति नेति तो तूं येकलाचि नट ना देखिलासि दातारा न कळे तुझी हेचि स्थिती। म्हणौनि सांडिमांडी करूं नको मना सगुण जोडे ते करी प्रीति रया॥५॥ यालागीं मनेंसि बोध चाळावा कीं जोडलेपणें पाहावा। कीं कोणाहि या मावा इंद्रियांचिया॥ सकळ इंद्रियेंसी नगर कोंदलें दशदिशीं विस्तार। म्हणौनि तुझे रूप अनावर कोणें धरिजे दातार बापरखुमादेविवरा विठ्ठला धिरा उघडा। डोळा देखिजे निधान तंव मार्ग सोपा रया॥६॥

३५३. काळां पैं गोवळु काळासि आलोट। नामामृतें पाठ भक्ता देहीं॥ नित्य सुखा आह्मां तपांचिया कोडीं। न लागती परवडी व्रतें तीर्थे॥१॥ सुलभ सोपारा सर्वांघटीं अससी। साधुसंगें दिससी आम्हा रया॥२॥ चैतन्याशेजारीं मन पैं मुरालें। सावळें सानुलें हृदयघटीं॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलराज। निवृत्तीनें बीज सांगितलें॥३॥

३५४. मंगळमूर्ति तूं किं मनाचिया लावण्यवाणा। वेधी वेधक तूं सहजगुणा। सगुण निर्गुण न कळे तुझें विंदान। कैसें आपचि पर दाटुन रिगसि॥ तेथें नवलाव वर्णू काय कोण रया॥१॥ वर्णितां तुझे गुण मना मौन्य पडे। कळिकाळ बापुडें काय करिल आह्मां॥२॥ ध्यानमूर्ति तुझी मनें अळंकारली मनामाजी संचरली। संचरतां इंद्रियें समानपदीं तुजविण न दिसे आन बोली। तेथें भिन्नाभिन्नपणीं कोणा पाहों दातारा दिठी सुखाचेनि सुखें स्थिरावली रया॥३॥ बापरखुमादेविवराविठ्ठले वोतप्रोत सधन नावेक नुरे कांहींएक केलें। तुझें तुज ग्व्हाणें किती देऊं दातारा बोलवितां नव्हे भलें रया॥४॥

३५५. तुझी सेवा करीन मी मनोभावें वो। माझें मन गोविंदीं रंगलें वो ॥ १ ॥ नवसिये नवसिये माझे नवसीयेवो ॥ पंढरिचे दैवते विठ्ठले नवसिये वो ॥ २ ॥ बापरखुमादेवीवरे विठ्ठले वो। चित्तीं चैतन्य चोरुनि नेलें वो ॥ ३ ॥

३५६. तुझी गुण कीर्ति ऐकोनि आर्ते मन उचललें। आलिंगना धाविन्नले उताविळ ॥ १ ॥ तनु मनु विगुंतले मन वाचा गुंतलें। मी माझें विसरले दर्शन गे माये ॥ २ ॥ उतावेळपणें भुजदंड उचललें। नेणोनि ठकलें ठेले रूप पाहतांचि बाईये ॥ ३ ॥ पातिया पातें नलगे पाहणें तेंचि ठेलें। तैसें बापरखुमादेवीवर विठ्ठलें केलेंगे माये ॥ ४ ॥

३५७. व्योमाचा पालऊ शिरेंविण पांगुरलें। मस्तकेंविण तुरंबिलें सुमन वो ॥ १ ॥ सुखांचें सुख निजसुख नव्हे। नव्हे तें हो म्यां गिळिलेंगे माये ॥ २ ॥ नेणेनि शाहाणे झाले चौघेजण। अठारांसी खूण बाणली माये ॥ ३ ॥ रखुमादेविवरु जीवनीं जीवनु। त्याहूनि माझें मनु परतें देवा ॥ ४ ॥

३५८. अवघां डोळां तुज म्यां पाहावें। अवघां श्रवणीं तुजचि ऐकावें ॥ १ ॥ अवघी मूर्ति तुजपें ध्यावें। अवघां चरणीं तुझ्या पंथीं चालावें ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु अदट दाविला। माझ्या देहीं वाढला ब्रह्माकारें ॥ ३ ॥

३५९. मन हें लोंधलें प्रपंचा विसरलें। मीपण गेलें तुजमाजी ॥ तूं आम्हां गोसावी सुखादि क्षेम न ठेवी। आपली सुखपदवी देई भोगूं ॥ तेथूनि वेगळें होतां प्राण जाईल आतां। नामाचा न व्हावा वियोगु रया ॥ १ ॥ तुझें नाम ध्यान कीर्तन आतां। न विसंबे सर्वथा तुझिया पायां ॥ पायापासूनि वृत्ति माथां चढे। हृदयीं धरिलासि सबाह्य रया ॥ २ ॥ ऐसिया वृत्ति ध्यान ध्यावों कां माझें मन। होय तुज समान मीपण नाहीं ॥ अनंत गोवळु अलगटु दावितासी नेटपाटु काय वानूं तुझी सुरपदवी। ठाण त्रिभंगीं देखोनी देवढें सुंदर आठवू विसरु हा नाहीं रया ॥ ३ ॥ तोचि तूं आतां वेगळेपणें पाहतां। इंद्रियाची सत्ता वर्तविता ॥ कीं परतोनि पाहातां प्रपंच निमाला। तुजमाजी तेथें नातळे द्वैतभावो ॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलु पाहतां। पाहणें निमोनियां उरे रया ॥ ४ ॥

३६०. कांहीं न करिजे ते तुझी सेवा। कांहीं नव्हेसि तें तूं देवा ॥ १ ॥ नेणिजे तें तुझें रूप। जाणिजे तितुकें पाप गा देवा ॥ २ ॥ स्तुति करणें ते तुझी निंदा। स्तुति जोगा नव्हेसि गोविंदा ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला। येवढा साभिलाषु कां दाविला ॥ ४ ॥

३६१. आकार स्थूळ नाशिवंत। हे तरी जाईल भूमि आंत। तयावरि हरि चालत। तेणें होईल कृतकृत्य ॥ १ ॥ देहो जावो अथवा राहो पांडुरंगीं दृढ भावो ॥ २ ॥ दुजा गुण आपीं मिळें। तरि मी होईन गंगाजळ। हरि अभिषेक अनुदिनीं। सुखें सर्वांगावरि खेळे ॥ ३ ॥ तिजा गुण तेजरूप। तरि मी होईन महादीप हरि रंगणीं दीपमाळा। दीप उजळीन समीप ॥ ४ ॥ वायु व्यापक चौथा गुण। तरि मी विंजणा होईन। हरि अष्टांगें विनवी मना। ऐशा दृढ धरिन खुणा ॥ ५ ॥ आकाश पांचवा गुण। तरि मी प्रसादीं राहेन। बापरखुमादेविवरा अखंड तुझे अनुसंधान ॥ ६ ॥

३६२. निमीष नलगे मन वेधितां। येवढी तुझी स्वरूपता ॥ १ ॥ विठोबा नेणों कैसी भेटी ॥ उरणें नाहीं जिवेसाठीं ॥ २ ॥ उरणें उपाधि कारणें। तें तों नेमिलें दर्शनें ॥ ३ ॥ निवृत्तिदासा वेगळें। सांगावया नाहीं उरलें ॥ ४ ॥

३६३. पाहेंपा ध्वजेचें चिरगुट। राया जतन करितां कष्ट ॥ १ ॥ तैसा मी एक पतीत। परि तुझा मुद्रांकित ॥ २ ॥ मसीपत्र तें केवढें। रावो चालवी आपुल्या पाडें ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरदा। सांभाळावें आपुल्या ब्रिदा ॥ ४ ॥

३६४. पावलोंजी म्हणे देखिलें जें देखणें। गेली आधीं तेणें दृष्टि माझी ॥ १ ॥ उचललिया बाह्या क्षेम देईन तया ॥ गेली माझी माया

देहत्यागें ॥ २ ॥ आनंदें स्फुंदत येती अश्रुपात। अगा गुरुनाथा देवराया ॥ ३ ॥ निवृत्तिदास म्हणें तूंतें जिवें वोंवाळिलें। शिर निरोपिलें तुझ्या चरणीं ॥ ४ ॥

३६५. तुझेनि बळें मांडली फळी। तुवां जवळी असिलें पाहिजे ॥ १ ॥ ऐसिये जुंझी घालिसी मज। काकुलती तुज नाहीं आतां ॥ २ ॥ रणभूमीं आला रणवट घातला। पाहो जों लागला न देखे कांहीं ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवो म्हणे उफराटें पाहाणें। खुंटलें येणेजाणें येचि भेटी ॥ ४ ॥

३६६. सर्वजीव तूं जालासी आपण तरी निरय आपदा भोगिताहे कवण। परमात्मया तुमचें अविनाश स्वरूप तरी येवढें कां कष्ट साधन। तूं अंतरीं परब्रह्म सांवळें म्हणोनि जगत्रय व्यापिलें या ध्यानें। म्हणोनी तुमचा पुत्र जालों स्वामिया जगाअधीन कां केलें माझें जिणें रया ॥ १ ॥ तूं बाप म्हणतां मी लाजिलों लाजोनी माघारा ठेलों। एकीकडे काळ एकीकडे संसार मध्यें ची वाटे ठेलों। ऐसिया संनिधी तुज जवळा येवों पाहें तंव तुझीया देवपणा भ्यालों ॥ २ ॥ नांदबिंदापासाव शरीर जन्मलें असाध्य करूनी वरी साक्ष देऊनी मदामांसामाजी वाढविलें। कर्मदेह वेचुनी सत्य सुकृतालागी उपजविलें। तरी हें दैन्य दारिद्र कां भोगविलें। तुझीया बापपणा बोलु लागला तरी मज पुत्रसें वायां म्हणितलें रया ॥ ३ ॥ आयुष्याची गणना करूनिया प्रमाण वरी मनुष्यदेह ऐसें नाम ठेविलें। तें आयुष्य कां स्वामी तुम्ही दोंठायीं वाटिलें। अर्ध रात्रीचे अर्ध दिवसाचे निरय सत्त्व वेचिलें। पैल समर्थाचे बाळक रंकें गांजिलें। त्याचें थोरपण तें काय जालें रया ॥ ४ ॥ बांधोनी जन्म आम्हांकडे भोगविसी आपणया मायबापा म्हणविसी। विश्व प्रसवला या जागासी तरी आधारु आहे ऐसे अनुवादसी। जगत्रजीव तव शिव हे तो नये माझिया मनासी। पैल कीटकिये भृंगिये नैसी जाले तैसें कां न करिसी आह्यासीरे ॥ ५ ॥ अल्प दोषासाठीं आम्हांतें दंडिसी येवढें कैचे मंत्रसाधन जे भक्ति करूनि निरसूं तयासी। तुज देखतां काळ शरीर फाडफाडुं भक्षिताहे कवण कां सांडिली ऐसी। जठर सीणसीण फुटतील देवा वायां कष्टविसिल आम्हांसिरे ॥ ६ ॥ दर्पणीं पाहातां येकचि दिसे तेथें अनुसारिखें कांहीं न दिसे। रविबिंब उगवलिया किरणीं प्रकाश आस्तु जालियावरी कांहीं न दिसे तैसे गुरुशिष्य संवाद सोहं बोध ऐक्य जालें अभ्यासें। याहूनि जाणसी तें करि वेळोवेळां आतां सांगों मी तें कैसें रया ॥ ७ ॥ यमें जाचितां कांहीं नुरे यालागीं मुनि सेविती वनवास। खवणीक फणीक लुंचनीक वसैत भटभराडे धाकें करिती आरामसंन्यास। योग साधावया वनवास सेविती करिती पवनअभ्यास। इंद्रियें दंडून परतोनि गृहस्थान न पवतीच खडु पान रसु रया ॥ ८ ॥ जळींचा तरंगु जळीं निमाला तो अनुठाया वेगळा नाहीं गेला। तैसा तुजमाजी दातारा मध्यें कां हा प्रपंच वाढविला। तूं देव आम्हीं प्राकृत मनुष्यें हा आगमु कां गमला। मज पाहतां हें अवघेंचि लटिकें जैसें असेल तैसें सांग पां उगला ॥ ९ ॥ लवण पाणीयांसी कीं पाणी लवणासीं ऐक्य जालियाविण निवडेना गुणास। लोहो लागलें परिसीं तें उठिलें कनकेंसी बापरखुमादेविवरा विठ्ठला परियेसी। आजिपासून ये तरी तुझीच आण पुढती न घाली न निघे गर्भवासीं रया ॥ १० ॥

३६७. देखोनि हांव बांधे तें तंव नाहीं होये। आहें ते केही न जाये बापा। असें तें दिसों नये नाहीं तें घेवों पाहे थोर काजेविण विटंबिलें कैसें रया ॥ १ ॥ शिव शिव लटिकेचि शिणले। येणें लटिकेंनि बहु श्रमविलें। साच तें लटिकें लटिकें तें सांच लिंगा हे खूण जाण रया ॥ २ ॥ आपुली प्रतिष्ठा पूज्य जे होती। ईही गुणीं आम्हा उपहति बापा। मनाचा फाळका फाटुनि केला बाउला। तोचि तो खेळवूं किती रया ॥ ३ ॥ आपुलें युक्तीचे वाति वेन्ही गिवसीतां

त्या पदार्थाचे पोटीं लपती रया। तें सांडूनियां अभिप्रायाचे बळ निजतत्त्वीं तें केवीं निवती रया॥४॥ निज लाळा लिंपोनि जुन्या अस्थि श्वान चघळूनि करितसे कोड रया॥५॥ हाता पायांचा निखळ स्त्रीपुरुषांचा येक मेळ। देह ऐसा यातें म्हणती बापा आपणपै जगा प्रतीति मानव हें तंव चिळसवाणें रया॥६॥ मायबापें आडनावें त्यांचिया वोसंगा। निघों म्हणों तरि आपुलिये साउलिये कां न बैसावें रया॥७॥ प्रजाचे पोसिलें पुढें पाइकाचें रक्षिलें। इंद्रियांचें वोळगणें तें काळाचे खेळणें। जगीं राय बोलिजति आतां गोसावी कवणातें म्हणावें रया॥८॥ मृगजळ तंव मृगजळींच भरतें देखोनि धांवणें तंव सीणणें। या परि झणी करिसि सदाशिवा जगा प्रतीति पावउनि झकणें रया॥९॥ आतां असो हा बोलु तूं एक गोसावी साच येतुलेनि आम्हां उजरी कोटि स्वप्न ऐक चेईलिया कैचें ज्ञानदेव म्हणे ऐसें करी रया॥१०॥

३६८. तूं विष्णु म्हणोन हें जगचि केवळ। येर सकळीक मजशीं सहोदर। तेणें कारणें गोत्रेंसि सेकोपजिवीं आम्हां न संडवे कोडें रया॥ माहेरा वाचूनि आन कांहीं नेणें। माहेर तें उपजवी तरंगाचें जीवन। तोय वरी सामावे वेगळालें असिजेल केविं रया॥१॥ उदरीं सिनार घरदारीं सिनार। सिनार दृश्य द्रष्टा॥ करी त्या मायबापाचेनि उद्वेगें॥ मी तो सांगोनियां आलों तुझिया पोटा रया॥२॥ अंगें ब्रह्म झाला तें तुवां वो जाणितलें। परि तो अविद्ये घायतळीं सुदला॥ ते तूं मजलागीं नेणसीच माउलिये आपुठे पान्हाये वाढविलें रया॥३॥ तंवचि मी जालों परि उदर न भेदित जननी। जोडलेना वाटी चक्षु पक्ष निघाले मज तुझाचि वाहाणीं। म्हणोनि सामावलों तुझ्या पोटीं रया॥४॥ ऐशापरि तुम्हा सम सरिसा जालों। परि तो नामें वोळखिजे॥ मी तो बाळ कीं मी तो वृद्ध ऐसें। अनत्रअन्यपणें लोक कीजे रया॥५॥ चेवो तरि स्वप्न स्वप्न तरी चेवो माय पुता नेणें ऐसें माझें तुझें। आपलें आपण म्हणतां लाजिजे नमो नमो तुज व्याली वांझ रया॥६॥ आयुवित्त भव विभव जगीं जिवांनिडळीं लिहिलें। अलग्न तें मज नेणतया अजंगमा लागुनि पुसोनि घातलें मूळ सानु रया॥७॥ दृष्टिभेणें रूपा नये काळा भेणें नामाची सोय सांडियेली। तुझ्या रूपीं सर्व रूप रूपस होउनियां दिठी उतरिलीया परि रया॥८॥ आपुलें वित्त आपणा देखतांचि शंकिजे त्याविभागाची केउती परि। बापरखुमादेवीवरा विठ्ठला तूं येक सचराचरीं रया॥९॥

## डौर

३६९. सभा समस्त साधु संतांची। महामुनी विरक्ताची। पंडितपाठकज्ञानियांची। समस्तासी विनवणी॥१॥ या पहिलिया पाहाऱ्यांत। डौरकार सांगेल मात। समस्त रिझाल तुम्ही संत। ऐका निवांत तुम्ही सर्व॥२॥ आतां परिसा पांच नाद। पांच नादाचे पांच भेद। पहिला नाद चटपट चटपट। दुसरा नाद खटपट खटपट। तिसरा लटपट लटपट। चौथा फटफट फटफट। पांचवा तळमळ तळमळ॥३॥ पहिला नाद चटपट चटपट। शिखासूत्र त्यजुनी सपाट। विरजा होमिला दृष्ट। परि अपुट तैसाची॥४॥ वाया केली तडातोडी। वृथा त्यजिली सूत्रूशेंडी। परि विषय वासना न सोडी। उपाधि गाढी श्रीपादा॥५॥ संन्यास घेऊनी कांचा। जिव्हांशिश्न वेधलें लांचा। विटंबु केला बापुडे कायेचा। चटपट मनीचें मनीं वसे गा दादेनो॥६॥ खटपट खटपट। शास्त्रप्रज्ञा अलोट। बांधोनी व्युत्पत्तीची मोट। सैरा सुनाट धांवती॥७॥ वादतर्का लागी धावे। भरला विषयाचे नांवे। वरिवरि वृंदावन दिसे बरवें। परी अंतरीं कडुवट गा दादेनो॥८॥ लटपट लटपट। मेळवूनि शिष्यांचा थाट। अद्वैत ज्ञानाचा बोभाट। भरला हाट जिविकेसी॥९॥ गुरु लोभी धनमानें। शिष्य लोभी अति दीन। दोघांसी लटपट लागली

पूर्ण। कोणी कोणासी आवरेना॥१०॥ ब्रह्मज्ञान जाहलें वोस। पाहिले दुःखाचे दिवस। अंतीं जाले कासावीस। कामपाश समंध गा दादेनो॥११॥ आतां फटफट फटफट। या नादाची गोठ नीट। वोळागोनी ओटपीठ। ऊर्ध्व पाठ भेदिती॥१२॥ मन पवन समरसोनी॥ ब्रह्मरंध्रीं लीन होउनी॥ हा अभिमान वाहोनी। जालेपणी फुंजती॥१३॥ तें वोखटें गा डौरकारा। करोनि देहाचा मातेरा। भरूं पाहाती सुषुम्ना द्वारा। परि असाध्य खरा तो मार्गु॥१४॥ ऐसी जालिया ब्रह्मप्राप्ती। शिणतोच अहोरात्रीं। अति विरोध भगवद्भक्ति। यालागीं बोलती फटफट गा दादेनो॥१५॥ आतां तळमळ तळमळ। धरणीं पारणी हळहळ। तीर्थयात्रे लागीं चळपळ। घेतलें बळ तपाचें॥१६॥ जपध्यान मंत्रावळी। नाना दैवतें आराधिलीं। शेखीं काळें नरडी चेंपिलि। दुःखें तळमळी या हेतु॥१७॥ ऐसे भेद नादाचे। मनीं धरा विवेकाचे। ज्ञानदेव बोले निवृत्तिचें। बोला वाचें हरिनाम गा दादेनो॥१८॥

## गळति

३७०. विदेह आत्मलिंगा गुरुकृपेचा तुषारु। पूर्ण पूर्ण भरिला घटु हळुहळु बिंदु उदारु। वरुषला लिंगावरि तेणें तुष्टला श्रीगुरु। प्रसन्न निवृत्तिराजा ज्ञान देउनि उदारु॥१॥ यालागिं ज्ञानदेवो नाम गुरुकृपेनें पावलों। असतां इये देहीं संसारा हारपलों। ज्ञानविज्ञान कळो आलें अद्वैतरूप बुझालों। विठ्ठल नाम माझे वाचे तेणें वागपुष्प पावलों॥२॥ नित्य गळति नामें जालीं गेला प्रपंच अनिवार। उपरती देहीं जाली निमाली वासना संसार। तपन जालें ब्रह्ममूर्ति दिननिशीं साचार। आठवितां मागिल भावो अवघा पारूषला उदारु॥३॥ विज्ञानेंसि ज्ञान गेलें एकरूप परिचार। ज्योतिमाजि कळिका गेली एकदीप जाला आकार। वृत्ति ते निवृत्ति जाली माया मारुनि केलें घर। निवृत्ति गुरु माझा घट स्थापिला त्या समोर॥४॥ ज्ञानदेवें घटमठ निरोपिली हरिभक्ति। उडाली पक्षपाती इंद्रिया तेथें नाहीं गती। विराले अभिमान ममता जाली समाप्ती। खुंटलिया उर्मी दाहि स्नपन जालें लिंगाप्रती॥५॥

३७१. आदि आत्मा जोतिलिंगा लांबियेला घटु। स्थावरिले मायावस्त्र। लिंगावरी प्रविष्ट॥ तपन नाम ध्वनी। इंद्रिया केलें सपाटु॥१॥ हळुहळु गळती गळे। गळों लागली सकळें॥ उच्चारितां कृष्णनाम। भेणें पळिजे कळिकाळें॥ त्रिगुण सुटल्या गांठी घटु विराला सघन। पंचतत्वें एके ठाईं आत्मा नांदें परिपूर्ण॥ जिवशिव हारपले एक दिसे चैतन्य। आत्माराम विदेहिया॥ श्रीगुरुनें सांगीतली खुण॥२॥ नरदेह अवचितें। जो साधकु होय नारायण। परमानंदें गळति गळे। पांचहि तत्वें हरपोन॥३॥ निवृत्ति सखा माझा दीनदयाळ श्रीगुरु। आळंकापुरीं स्थपियेलें॥ दिधला विठ्ठल उच्चारु। समाधि जीवन माझें वरी अजानवृक्षतरु॥ जोंवरी चंद्रसूर्य तोंवरी कीर्तिघट स्थिरू॥४॥ गाति वाति साधु मुनी छंद घट मठीं चित्त। विरेल देह बुद्धि ज्ञानदाता देईल उचित॥ विज्ञानेंसी गोष्टी सांगे ऐसें पद पावत। बापरखुमादेविवरीं लांबविला घटु ज्ञानदेव सांगत॥५॥

## सौरी.

३७२. कर्मास्तव जालों सौरा। गेलों पंढरपुरा। मा मी गेलों पंढरपुरा। संतसनकादिकां मेळीं डौर वाईला पुरा॥१॥ चाल रामा घरा करूं प्रपंचेसि वैरा॥ ध्रु०॥ द्वैतभाव कल्पना खोडी सांडी याची आशा। विठ्ठलनाम हेंचि सार जिव्हें प्रेमठसा॥२॥ अद्वैत भरिन मन भारीना तोडिन भवपाश। क्षमा दया धरिन चित्तीं सर्वभूतीं महेश॥३॥ ज्ञान ज्ञेय हाचि विचार सर्वमय हरि मा मी सर्वमय हरि। दुजेपण न पंडे दृष्टी एकपण घरोघरीं॥४॥ वासना खोडि वेगीं टाहो करीन रामनामें मा मी टाहो करीन रामनामें। पुंडलिक पेठ संताचें माहेर तेथें नाचेन मनोधर्में॥५॥ विज्ञान हरि आपणचि क्षरला दुजेपणें छंदु थोरु। मा मी दुजेपणें छंदु थोरु। निष्काम स्वरूप सूत्रधारी खरा एकरूपें

हरिहरू॥६॥ त्रिकाळध्यान त्रिकाळ मन हारपलें जेथ। पुरली मनकामना मा मी पुरली मनकामना। वैकुंठ प्रकट आपणचि नाथ॥७॥ देहुडा पाउलीं वेणु वाहे विटेवरी निट। वोळली कामधेनु युगें अठ्ठाविस वाट॥८॥ एक वृक्ष क्षरला आपणचि जग सर्वघटीं आत्मारामु। ज्ञानदेवो म्हणे आम्हा पंढरपुरीं जाला विश्रामु॥९॥

## फुगडी.

३७३. फुगडीफूगे बाई फुगडीफू। निजब्रह्म तूं गे बाई परब्रह्म तूं गे॥१॥ मन चित्त धू। विषयावरी थू॥२॥ एक नाम मांडी। दुजा भाव सांडी॥३॥ हरि आला रंगीं। सज्जनाचे संगीं॥४॥ सकळ पाहे हरी। तोचि चित्तीं धरी॥५॥ नमन लल्लाटीं। संसारेंसि साटी॥६॥ वाम दक्षिण चहूंभुजीं आलिंगन॥७॥ ज्ञानदेवा गोडी। केली संसारा फुगडी॥८॥

## पांगूळ.

३७४. मृत्युलोका माझारी गा एक सद्गुरु साचार। त्याचेनि दर्शनें तुटला हा संसार। पांगुळा हस्तपाद देतो कृपाळु उदार। यालागीं नांव त्याचें वेदा न कळे पार॥१॥ धर्माचें वस्ति घर ठाकियलें वा आम्हीं। दान मागों ब्रह्म साचें नेघो द्वैत या उर्मी॥२॥ विश्रांति विजन आम्हां एक सद्गुरु दाता। सेवितां चरण त्याचे फिटली इंद्रियांची व्यथा। निमाली कल्पना आशा इळा परिसीं झगटतां। कैवल्य देह जालें उपरति देह अवस्था॥३॥ मन हें निमग्न जालें चरणस्पर्शे तत्त्वतां। ब्रह्माहंस्फूर्ति आधीं भावो उमटला उलथा। पांगुळलें गुह्य ज्ञान ब्रह्मरूपें तेथें कथा। अंध मग दृढ जालों निमाल्या विषयाच्या वार्ता॥४॥ ऋद्धिसिद्धि दास्य आपेंआप वोंळलीं। दान मान मंद बुद्धि ब्रह्मरूपीं लीन झाली। वोळली कामधेनु पंगु तनु वाळली। पांगुळा जिवन मार्गु सतरावी हे वोळली॥५॥ पांगुळ मी कल्पनेचा पंगु जालों पैं मनें। वृत्ति हे हारपली एका सद्गुरु रूप ध्यानें। निवृत्तीसी कृपा आली शरण गेलों ध्येयध्यानें॥६॥

## आंधळा

३७५. पूर्वजन्मीं पाप केलें तें हें बहु विस्तारिलें। विषयसुख नाशिवंत सेवितां तिमिर कोंदलें। चौऱ्यांशीं लक्ष योनी फिरतां दुःख भोगिलें। ज्ञान दृष्टि हारपली दोन्ही नेत्र आंधळे॥१॥ धर्म जागो सदैवांचा जे बा परउपकारी। आंधळ्या दृष्टि देतो त्यांचे नाम मी उच्चारीं॥२॥ संसार दुःखमूळ चहूंकडे इंगळ। विश्रांति नाहीं कोठें रात्रंदिवस तळमळ। कामक्रोधलोभशुनीं पाठीं लागलीं वोढाळ। कवणा शरण जाऊं आतां दृष्टि देईल निर्मळ॥३॥ मातापिता बंधु बहिणी कोणी न पवती निर्वाणीं। इष्टमित्रसज्जनसखें हे तों सुखाची मांडणी। एकला मी दुःख भोगीं कुंभपाक जाचणी। तेथें कोणी सोडविना एका सद्गुरुवाचुनी॥४॥ साधुसंत मायबाप तिहीं दिलें कृपादान। पंढरीये यात्रे नेलें घडलें चंद्रभागें स्नान। पुंडलिकें वैद्यराजें पूर्वी साधिलें साधन। वैकुंठीचें मूळपीठ डोळां घातले तें अंजन॥५॥ कृष्णांजन एकवेळा डोळां घालितां अढळ। तिमिरदुःख गेलें तुटलें भ्रांतिपडळ। श्रीगुरु निवृत्तिराजें मार्ग दाविला सोज्वळ। बापरखुमा-देविवरुविठ्ठल दिनाचा दयाळ॥६॥

३७६. अंध पंगु दृढ जालों मायापडळभ्रांती। कर चरण विव्हळ गेले तंव भेटलें निवृत्ती। ज्ञान मज उपदेशिलें नेलें अज्ञानक्षिती। वृक्ष एक तेथें होता त्या तळीं बैसविलें रीती॥१॥ धर्म जागो निवृत्तीचा हरिनामें उत्सावो। कर्म धर्म लोपले माझें फिटला संदेहो। धर्म अर्थ काम पूर्ण दान मान समूह। नेघे मी इंद्रियवृत्ति रामकृष्णनामीं टाहो॥२॥ कल्पना मावळली कल्पवृक्षाचे तळवटीं। चिंता हें हरपली माझी नित्य अमृताची वाटी। मन हें निमग्न झालें नित्य वसे वैकुंठी। तापत्रयें ताप गेलें नाना दोषाचे थाटी॥३॥ अनंत हें मायामय लोपल्या जिवाचिया साठी। हरपल्या योनीमाळा चिंतामणीकसवटी। सिद्धि बुद्धि समरसल्या

जीवशिव एकदाटी। आत्माराम मन जालें एकतत्व शेवटीं॥४॥ आत्माराम निर्गमलें वेदशास्त्रगुह्य ज्ञानें। वासनेचि मोहजाळी ते विराली नाना स्थाने। फुटलें नाना घट तुटलीं नाना बंधनें। सुटल्या जीवग्रंथी ऐसें केलें त्या गुरुज्ञानें॥५॥ मा मोक्ष हे ठेले मागें मुक्तिमार्ग निमला। वृत्ति हे बुडाली माझी निवृत्ति गळाळा पाजीला। सत्रावी वोळली बाळा आत्माराम दाता जाला॥६॥ बुद्धि बोध संवगडे साजीव करचरण। नयनीं नयन जाले चक्षु मी समाधान। दिव्य देह अमृत कळा दशदिशा परिधान। सर्व हें ब्रह्म फळद फळलें विज्ञान॥७॥ निवृत्ति गुरु माझा अंधपण फेडिलें॥ सर्वत्र दृष्टी जाली परतत्वीं राहिलों। निरसली माया मोहो श्रीराम अंजन लेईलों। ज्ञानदेव ज्ञानगंगे निवृत्तिनें बुडविलों॥८॥

## नामपर व कीर्तनपर

३७७. दसविये द्वारीं वोहट पडिला। नेणता पैं गेला पाहावया॥१॥ अवचिती वाट सांपडली पंथें। ब्रह्मनाम तेथें आलें हातां॥२॥ ज्ञानदेवा गीती निशाणी नाम। समाधि संजिवनीं तारक हरि॥३॥

३७८. भावाचेनि बळें घेतलें वैकुंठ। हरिनाम नीट वैकुंठ मार्ग॥१॥ सोपें हो साधन साधावया लागी। नलगे उपाधि नाना मते॥२॥ ज्ञानें सहित ज्ञान विज्ञानेसि धन। वृत्तीचें समाधान निवृत्ति करी॥३॥ शांति दया क्षमा करुणानिधी प्रेमा। नेऊनि परब्रह्म भावें मिळती॥४॥ ज्ञानदेवो सांगे भावो मिनला गंगे। सुस्नात सर्वांगें हरी गंगा॥५॥

३७९. आलिया जवळा भक्तिसुख देखे। पालव पोखे वाणिव भोगी॥१॥ तें सुख आम्हां विठ्ठलचरणीं। निवृत्ति करणी व्यासाचिये॥२॥ जप तप ध्यान क्रिया कर्म धर्म। रामकृष्ण नेम गुरुभजनें॥३॥ ज्ञानदेवो म्हणे संसार निरसी। अखंड मानसीं विठ्ठल हरी॥४॥

३८०. अभाव संगती नाना भूत व्यक्ती। संसार पंगती मेळवी त्यासी॥१॥ हरिनाम शोक करी अभाव कामारी। यातें दुरी करी हरिपाठें॥२॥ संतांची संगती वेदश्रुतीची मती। घेउनियां हाती ब्रह्मशास्त्र॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे नारायण नाणें। घेउनि पारखणें भक्तीपेठे॥४॥

३८१. यश कीर्ति वानु नेणें मीं वाखाणू। रामकृष्ण आम्हां सणू नित्य दिवाळी॥१॥ नरहरि रामा नरहरि रामा। पुराणपुरुषोत्तमा हरि गोपाळा॥२॥ या नेमीं अक्रूर बोधला परीक्षिति उपदेशिला। अर्जुनासि जाला साहाकारी॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे नामेंविण जो नरु। तो होय भूमिभारु ये संसारीं॥४॥

३८२. प्रीतीवींण फळ केंविं लाहे प्राणी। जैसा चातक धरणीं उपवासु॥१॥ वोळलिया मेघ सावधु बोभाये। बिंदुमात्र घेई जीवन देखा॥२॥ तैसें केंवि घडे संसारिया चित्तें। प्राप्तीच्या अर्थातें साहे संत॥३॥ सगुण निर्गुण समस्त आहे। विरुळा येथें साहे समता बुद्धी॥४॥ जंववरी समान शांति बुद्धि हे ठेली। तंववरी हे भूली बोली कैसी घडे॥५॥ दिन काळ पळ स्मरण नामाचें। विरुळा या मंत्राचें करी पठण॥ ज्ञानदेव म्हणे नामया हें तूं गा जाणसी। भजन केशवासी तूंचि तुझा॥६॥

३८३. निज तेज बीज नाठवें हे देहे। हरपला मोहो संदेसीं॥१॥ काय करूं सये कोठें गेला हरी। देहीं देह मापारी हरी जाला॥२॥ विदेह पैं गंगा पारुषली चित्तीं। चिद्रुपीं हे वृत्ति बुडीयेली॥३॥ गुरुलिंगी भेटीं निवृत्ति तटाक। देखिलें सम्यक् समरसें॥४॥ दत्तचित्तवृत्ति ज्ञेयज्ञानकळा। समाधि सोहळा विष्णुरूपीं॥५॥ ज्ञानदेव गाय हरि नामामृत। निवृत्ति त्वरित घरभरी॥६॥

३८४. कापुरीं परिमळु दिसे वो अळुमाळु। हळु हळु सुढाळू पवनपंथें॥१॥ पवनीं न माये पवनही धाये। परतला खाय आपणासी॥२॥ मुखवात नाहीं तरसते बाहीं। नावें दिशा दाही आप घोष॥३॥ ज्ञानदेवा मौन्य नामाचें तारण। तारक हरिविण दुजा नाहीं॥४॥

३८५. श्रवण त्वचा चक्षु जिव्हा घ्राण। दशहि इंद्रियें जाण हरीच्या ठायीं॥१॥ अवघा हा गोविंदु अवघा हा मुकुंदु। अवघा हा विद्दु भरला दिसे॥२॥ पतीतपावन नामे दिनोद्धारण। स्मरलिया आपण वैकुंठ देतु॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे हें पुंडलिक जाणे। अंतकाळी पेणें साधीयेलें॥४॥

३८६. अनंत नामाचें पाठांतर। रामकृष्णनाम निरंतर। सर्व सुखांचें भांडार। हरि श्रीधर नाम वाचे॥१॥ हरिनाम गजर करा। येणें तूं तरसील सैरा। जन्म जुगाच्या येरझारा। खंडती एक्या हरिनामें॥२॥ अनंत तीर्थांचे मेळ। साधलिया हरी नाम कल्लोळ। पूर्वजांसहित अजामेळ। उद्धरिला सहपरिवारें॥३॥ कोटिजन्मांचे दोष। हरतील पातकें जातील नि:शेष। अंतीं होईल वैकुंठ वास। कोटि कुळांसी उद्धार॥४॥ हें योगियांचें निजजीवन। रामकृष्ण नारायण। येणें जगत्रय होय पावन। हरिस्मरण जिवासी॥५॥ ज्ञानदेवी घर केलें। हरी ऐसें रत्न सांठविलें। शेखीं कोटिकुळां उद्धरिलें। हरी हरि स्मरिलें निशीदिनीं॥६॥

३८७. पदपदार्थ संपन्नता। व्यर्थ टवाळी कां सांगता। हरिनामीं नित्य अनुसरतां। हें सार सर्वार्थी॥१॥ हरिनाम सर्व पंथीं। पाहावें नलगे ये अर्थी। जें अनुसरलें ते कृतार्थी। भवपंथा मुकले॥ कुळ तरलें तयाचें। जींही स्मरण केलें नामाचें। भय नाहीं त्या यमाचे। सर्व ग्रंथीं बोलियेलें॥३॥ नलगे धन नलगे मोल। न लगति कष्ट बहुसाल। कीर्तन करितां काळ वेळ। नाहीं नाहीं सर्वथा॥४॥ हरि सर्व काळ अविकळ। स्मरे तो योगिया धन्य केवळ। त्याचेनि दर्शनें सर्वकाळ। सफळ संसार होतसे॥५॥ ज्ञानदेवी जप केला। मन मुरडुनी हरि ध्याइला। तेणें सर्वांगीं निवाला। हरिच जाला निजांगें॥६॥

३८८. त्रिपदा चतुष्पदा गायत्रीस्मरण। त्याचे विस्मरण हरिप्रेमें॥१॥ निवृत्ति सांगे हरीनामगंगें। जालासि सर्वांगे गंगोदक॥२॥ पाणिपाद चित्तवृत्ति हे बुडाली। देहीं गेहा गेली प्रीति सदा॥३॥ चक्षुद्वयतेज हरिरूपीं बिंबे। पृथ्वीतळ अंभ हरि दिसे॥४॥ सुलज्ज निर्लज्ज मेघवर्णशाम। सांवळा सप्रेम गुणग्राह्य॥५॥ थोडेनि आतुडें सडेनि पदार्थे। येतु असे अर्थे हृदयामाजी॥६॥ नाम मंत्र रूप इतुकेन संकेत। देतुसे अर्थ दीनाचा दाता॥७॥ बापरखुमादेवीवरुविनत सोपारा। मरणाच्या येरझारा दूर केल्या॥८॥

३८९. सर्वव्यापक सर्वदेहीं आहे। परि प्राणियासि सोय नकळे त्याची॥१॥ परमार्थ तो कडु विषय तो गोडु। तया अवघडु संसार॥२॥ नामाचें साधन जिव्हे लावी बाण। तया अनुदिनीं जवळी वसे॥३॥ धारणा धीट जरि होय विनट। तया प्रेमें वैकुंठ जवळी असे॥४॥ सुलभ आणि सोपारें केलेंसे दातारें। आम्ही एकसरें उच्चारिलें॥५॥ ज्ञानियासि ज्ञान ज्ञानदेवि ध्यान। कलिमळ छेदन नाम एक॥६॥

३९०. अळुमाळु सोयरा तळीचि धाय। सत्वतेजें माय एकतत्वीं॥१॥ तें तत्वसाधन मुक्तामुक्त घन। कृष्णनाम पूर्ण तेजीं माये॥२॥ सोकरी पापपुण्या ठायीं आपा। आयुष्य मापा हरि धावें॥३॥ ज्ञानदेव गीत सांगतसे नित्य। कृष्णकृष्ण सत्य इतुकें सार॥४॥

३९१. तिहीं त्रिगुणीं वोतिलें त्रिपुटिसि गोंविलें। आणुनी बांधिलें चर्मदेहीं॥१॥ न सुटतां शिणताहे भवति वास पाहे। प्रपंच मोहताहे काय करूं॥ध्रु०॥ कृष्णनाम मंत्रु सुटे। विषय पप्रंचु तुटे। मोहनमुद्रा निघोटे वैकुंठ रया॥२॥ सावधपणे विरुळा जाणें तेथिंचि कळा। विज्ञानपणें सोहळा निमथा गातुं॥३॥ ज्ञानदेव सांगतु हरि पंथें मुक्तिमातु। एकतत्व सांगातु जनींवनीं॥४॥

३९२. जन्मजन्मांतरीं असेल पुण्यसामुग्री। तरिच नाम जिव्हाग्रीं येईल श्रीरामाचें॥१॥ धन्य कुळ तयाचें रामनाम हेंची वाचे। दोष जातील जन्माचे श्रीराम म्हणतांची॥२॥ कोटीकुळाचें उद्धरण मुखीं राम नारायण। रामकृष्ण स्मरण

धन्य जन्म तयाचें ॥ ३ ॥ नाम तारक सांगडी नाम न विसंबे अर्धघडी। तप केलें असेल कोडी तरिच नाम येईल ॥ ४ ॥ ज्ञानदेवीं अभ्यास मोठा नामस्मरण मुखावाटा। कुळ गेलें वैकुंठा हरि हरि स्मरतां ॥ ५ ॥

३९३. अढळ सप्रेम उपरति पावो। हरि हरि घेवो तारक नाम ॥ १ ॥ संवगडे वागणें हरीपंथीं चालों। हरि हरि बोलों दिननिशीं ॥ ध्रु० ॥ पाहाते निमते सरे हंसि गति। हरिची पंगति जेऊं बैसों ॥ २ ॥ ज्ञानदेव सांगे रामकृष्ण आशा। संसार पिपासा दुरी करी ॥ ३ ॥

३९४. कापुराचें कलेवर घातलें करंडा। शेखीं नुरेंचि उंडा पाहावया ॥ १ ॥ मा ज्योति मेळे कैसा उरेल कोळिसा। भावें हृषीकेशा भजतां ऐसें ॥ २ ॥ ज्ञानदेव म्हणे वासना हे खोटी। नाम यज्ञें मिठी दिधलीया विरे ॥ ३ ॥

३९५. सुकुमार वेल्हाळ रूपें पै सुंदर। तोचि पै आगर नंदाघरीं ॥ १ ॥ अवघ्या सुख देतु अवघ्या विदटे। अवघेंची पेठे हरिनाम ॥ २ ॥ यापरि आगरु कृष्णनाम ठसा। वोतला सरिसा भाग्ययोगें ॥ ३ ॥ बापनिवृत्तिराज उपदेशिती आम्हां। ज्ञानदेवा महिमा नामें आली ॥ ४ ॥

३९६. ज्याचेनि तेजें तेजस रविग्रह। त्याचेनि मोह निरसती ॥ १ ॥ तें नाम परिकर कृष्णचि सुंदर। वैकुंठींचें घर आम्हीं केलें ॥ ध्रु० ॥ जपतां नाम स्मरतां पैं हरि हरि। प्रपंच बाहेरी कृष्णनामें ॥ २ ॥ निवृत्ति सांगे ज्ञाना कृष्णाचि नयना। सर्वां सर्वत्र पान्हा कृष्णरूपें ॥ ३ ॥

३९७. समरसें घटु विराला विनटु। एक्या रूपें पाटु गेला सांगसी ॥ १ ॥ कृष्ण कृष्ण वाट सांपडली नीट। जिव्हेसी घडघडाट इंद्रियें सहित ॥ ध्रु० ॥ मनाच्या मोवनी समाधीच्या ध्यानीं। चिंतिला पद्मासनीं आत्मराजु ॥ २ ॥ ज्ञानदेवा चित्त कृष्णध्यानीं रत। जन्मजरामृत्यु हारपले ॥ ३ ॥

३९८. सर्वत्र समान भावयुक्त पूर्ण। धृति धारणा घन वर्ते जया ॥ १ ॥ सामान्यत्व हरी समसेज करी। चित्त वित्त घरीं हरिपाठें ॥ २ ॥ आकारीं निराकारीं त्रिपंथ शेजारीं। हरि भरोवरी घेतु विरुळा ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवा जिणें अवघें ज्ञान होणें। विज्ञानीं राहणें गुरुकृपा ॥ ४ ॥

३९९. सावळिये तेजीं भक्ति पसु बोल। इंद्रिया शरण रजीं ॥ १ ॥ निवालों वो माये अमृतरसनें रामनामपेणें वैकुंठींचें ॥ २ ॥ आळवितां सगुण निर्गुणरूपडें। वचनें फाडोवाडें हातां येत ॥ ३ ॥ ज्ञानांजन लेवो ज्ञानदेवी निज। निवृत्तीनें गुज सांगितलें ॥ ४ ॥

४००. समाधिसाधनसंजीवन नाम। शांति दया सम सर्वाभूतीं ॥ १ ॥ शांतीची पै शांति निवृत्तिदातारु। हरिनाम उच्चारु दिधला तेणें ॥ २ ॥ शम दम कळा विज्ञान सज्ञान। परतोनि अज्ञान नये घरा ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवा सिद्धि साधन अवीट। भक्तिमार्ग नीट हरिपंथी ॥ ४ ॥

४०१. परेंसि परतें स्वरूप या हरिचे। भक्तिमार्ग साचे विरुढे रूप ॥ १ ॥ चला जाऊं पाहूं आत्मराज घटीं । नामें नेतु तटीं वैकुंठीचिया ॥ २ ॥ समाधि विधान हरिपाठगुण। उगीयाचि मौन असिजे रया ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव निवृत्ति पुसों जाये भाव। तंव तेणें स्वयमेंव दाविले डोळा ॥ ४ ॥

४०२. त्रिभुवनीचें सुख एकतत्व विठ्ठल। नलगे आम्हां मोल उच्चारिता ॥ १ ॥ विठ्ठल उघडा मंत्र कळिकाळा त्रास। घालुनियां कांस जपों आधीं ॥ २ ॥ सत्वर सत्वाचे जपती नामावळी। नित्यता आंघोळी घडे रया ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु जिव्हाळा हृदयीं। जीवाचा जीव ठायीं एकेपाती ॥ ४ ॥

४०३. कांरे स्फुंदतोसी कारे स्फुंदतोसी। न भजतां विठ्ठलासी नरकीं पडसी ॥ १ ॥ पुण्यापापें बाधा न पवसी गोविंदा। पावशील आपदा स्मरे परमानंदा ॥ ध्रु० ॥ पुण्य करितां स्वर्ग पापें करितां भोग। नाम जपतां सर्वांग होईल पांडुरंग ॥ २ ॥ देहीं आत्मा जंव आहे। तंव करूनियां पाहे। अंतीं कोणी नोव्हे धरी वैष्णवाची सोय ॥ ३ ॥ जाईल

हें आयुष्य न सेवीं विषयविष। पडतील यमपाश वेगीं करी सौरस॥४॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठलीं मन चरणीं गोंवी। हारपाला देहभावीं जालासे गोसावी एकरूपें॥५॥

४०४. सहज कर्मभक्ति घडावया कोठें। ज्ञानधन निवाडें नाम जपों॥१॥ नाम मात्र नमन ज्ञानघन पूर्ण। रामनामें कर्ण भरूं रया॥२॥ सत्वाचें सागरीं उतरों पैलथडीं। रिति अर्धघडी जावों नेदों॥३॥ ज्ञानदेवा चित्त अवघें धन गोत। रामनामें तृप्त सकळ जीव॥४॥

## नाममाळा

४०५. एक मूर्ख नेणती। नाम हरिचें न घेती। मुखें भलतेंचि जल्पती। तें पावती अध:पंथा॥१॥ नामेंविण सुटका नाहीं। ऐसी वेदशस्त्रीं ग्वाही। जो वेद मस्तकीं पाहीं। ब्रह्मयानें वंदिला॥२॥ नित्य नामाची माळा। जिव्हे घे तूं गळाळा। तो नर कर्मा वेगळा। ऐसें बोलती पुराणें॥३॥ नयनीं श्रवणीं हरी। आणिक काम न करी। तो साधु भक्त निर्धारीं। हरिचा आवडता॥४॥ ज्ञानदेवीं पाहिलें। हरिनाम साधुनी घेतलें। तें समाधिस केलें। पुष्पशयनीं आसन॥५॥

४०६. नाममाळा घे पवित्र। अंतीं हेंचि शस्त्र। राम हा महामंत्र। सर्व बाधा निवारी॥१॥ भवकर्मविख। रामनामी होय चोख। भवव्यथादु:ख। पुढें सुख उपजेल॥२॥ माळा घाली हेचि गळां घे अमृताचा गळाळा। होईल वैकुंठीं सोहळा रामकृष्ण उच्चारणी॥३॥ ज्ञानदेवीं माळा केली। सुखाची समाधि साधिली। जिव्हा उच्चारणी केली। अखंड हरिनाम॥४॥

४०७. समाधीचें साधन तें रामनाम चिंतन। चित्ता सुखसंपन्न। हर्ष जीवनीं केला॥१॥ कोटी तपाचिया राशीं। जोडती रामनामापाशीं। नाम जपतां अहर्निशीं। वैकुंठपद पाविजे॥२॥ हेंचि ध्रुवासी आठवलें। उपमन्यें हेंचि घोकिलें। अंबऋषीनें साधिलें। रामकृष्णउच्चारणीं॥३॥ पांडवांसि सदा काळीं। कृष्ण राहिला जवळी। ज्ञानदेवहृदयकमळीं। तैसाचि स्थिरावला॥४॥

४०८. निरंतर ध्यातां हरि। सर्व कर्मांची बोहरी। दोष जाती दिगंतरीं। रामकृष्णउच्चारणीं॥१॥ जप तीर्थ हेंचि नाम। जपव्रता हेंचि नेम। ऐसें धरोनियां प्रेम। तोचि भक्त तरेल॥२॥ जीव शिव एक करी। शांति क्षमा जरी धरी। त्यापाशीं नित्य श्रीहरी। प्रत्यक्ष आपण उभा असे॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे नित्य। त्याचें वचन तेंचि सत्य। त्यांचे वचन सर्व कृत्य। सिद्धी पावेल सर्वथा॥४॥

४०९. जन्म जरा दु:ख बाधा। स्मरता नाहीं गोविंदा। ऐसा जयासी नित्य धंदा। तोची सदा सुखरूप॥१॥ धन्य कुळ धन्य याती। धन्य जन्म पुढती पुढती। भक्तीवीण नाहीं गती। मुखीं हरिनामउच्चार॥२॥ विश्वीं विश्व जो व्यापकु। तोचि माझा हरि एकु। त्यासी भक्तिविण साधकु। नोळखे पै दुर्बुद्धि॥३॥ ज्ञानरंजनीं रंजला। ज्ञानबोधें उपजला। ज्ञानदेवीं हरि सेविला। निरंतर सर्वकाळ॥४॥

४१०. संपत्तिविपत्तिदु:ख। हरेल अवघा शोक। वेगीं करूनिया विवेक। हरिस्मरण करी॥१॥ मंत्र यंत्रसूत्रधारी। सिद्ध साध्य तोचि हरि। नित्य जपोनि वैखरी। आप्तता करी हरीसी॥२॥ ध्यान मन एक चित्त। अलक्ष लक्षी अच्युत। न सांगे हिताची मात। अखंड जपे हरिनाम॥३॥ ज्ञानदेवें जप केला। मग समाधीस बैसला। नाम घेतां बोध जाला। देव आला हृदयासी॥४॥

४११. देवाविण शून्य मुख। नाम न घेतां नाहीं सुख। अंतीं होईल रे दु:ख। नाम नसतां मुखीं॥१॥ राम कृष्ण गोविंद। हरि माधव परमानंद। नित्य ऐसा जयासि छंद। तोचि सुलभ गर्भवासीं॥२॥ अनंत नाम निरसून। एक मार्ग तोचि मान्य तेणें जोडे नित्य सौजन्य। तोचि रामकृष्ण उच्चारी॥३॥ ज्ञानदेवें अनुमानलें। मग भक्तिसुख साधलें। रामकृष्ण उच्चारिलें। जें तारक तिहीं लोकीं॥४॥

४१२. सदा परिपूर्ण। तो हा जनार्दन। नित्य जपता नारायण। कोटि याग घडतील॥ १ ॥ एवढा महिमा नामाचा। काय मंत्र जपसील वाचा। जो विठ्ठल म्हणे तो दैवाचा। ऐसा ब्रह्मा बोलें पूर्वी॥ २ ॥ तो नित्यकाळ पंढरी। आणि देव तेहतीस कोटी। वृक्ष जाले निरंतरी। उद्धार करावया कुळाचा॥ ३ ॥ एवढें क्षेत्र पांडुरंग। तेथें उद्धरिलें हें त्रिजग। आनंदत ब्राह्मण याग। कोटिकुळें उद्धरती॥४॥ कीर्तन केलीया वाळवंटी। घेतां वैष्णवांची भेटी। होईल संसाराची तुटी। चरणरज वंदितां॥५ ॥ तुळशीच्या माळा। घालितां हरिदासाच्या गळां। तो न भिये कळिकाळा। त्यासी जिव्हाळा हरिविठ्ठल॥६ ॥ पंढरीसी जाऊं म्हणती। तयांकडे यम न पाहती। तयांचे पूर्वज उद्धरती। म्हणती वैकुंठा जाऊं आतां॥७॥ देव जाणे ऐसा। तोचि हरिदासा भरंवसा। ज्ञानदेव म्हणे परियेसा। थोर पुण्य तयाचे॥८॥

४१३. प्रेम जयाचें कथेवरी। तोचि धन्य ये चराचरी। रामकृष्ण निरंतरी। मुखीं आवडी जपतसे॥१ ॥ धन्य धन्य तोची वंशी। धन्य धन्य माता कुशी। धन्य धन्य काळ तयासी। कृष्णराम ह्मणतांची॥ २ ॥ ऐसें धन्य जन्म तयाचे। धन्य धन्य पुण्य साचे। त्यासीं भय कळिकाळचें। नाहीं जन्म घेतलिया॥ ३ ॥ एवढा महिमा नामाचा। धन्य तो राम उच्चारी वाचा। धन्य जन्म तयाचा। ज्ञानदेव म्हणे॥४॥

४१४. सकळमंगळनिधी। श्रीविठ्ठलाचें नाम आधी॥१ ॥ म्हण कारे म्हण कारे जना। श्रीविठ्ठलाचें नाम वाचे॥ २ ॥ पतितपावन साचे। श्रीविठ्ठलांचे नाम वाचे॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु साचे। श्रीविठ्ठलाचें नाम वाचे॥४॥

४१५. गोपाळारे तुझें ध्यान लागो मना। आनु न विसंबे हरि जगत्रजीवना॥१ ॥ सोनयाचा दिवस आजि अमृतें पाहीला। नाम आठवितां रूपीं प्रगट पैं झाला॥२॥ तनु मनु शरण विनटलों तुझ्या पाई। रखुमादेविवरा वांचूनि आनु नेणें कांहीं॥ ३ ॥

४१६. आरंभीं आवडी आदरें आलें नाम। तेणें सकळ सिद्धि जगीं जालें पूर्ण काम॥ १ ॥ रामकृष्ण गोविंद गोपाळा। तूं माय माउली जिवीं जिव्हाळा॥ २ ॥ तुझियेनि नामें सकळ संदेहो फिटला। बापरखुमादेविवरा श्रीविठ्ठला॥ ३ ॥

४१७. अष्टांगयोगें न सिणिजे। यम नेम निरोध न किजे रया॥ १ ॥ वाचा गीत गाईजे। गातां वातां श्रवणीं ऐकिजे रया॥ २ ॥ गीती छंदें अंग डोलिजे। लीला विनोदे संसार तरिजे रया॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु नामें। जोडे हा ऊपावो किजे रया॥ ४॥

४१८. अंडज जारज स्वेदज उद्भिज आटे। हरिनाम नाटे तें बरवें॥ १ ॥ जें नाटें तें नाम चित्तीं। रखुमादेवीपति श्रीविठ्ठलाचें॥ २ ॥ शरीर आटे संपत्ति आटे। हरिनाम नाटे तें बरवें॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवराचें नाम नाटे युगे। गेलीं परि उभा विटें॥ ४॥

४१९. यमधर्म सांगे दूता। परिसावी निजकथा। जेथें रामनाम वार्ता। तया देशा नवजावे॥ १ ॥ नाम महादोषां हरण। नाम पतीतपावन। नाम कलिमळदहन। भवबंधनमोचक॥ २ ॥ जये देशीं नाम वसे। नाम श्रवणीं विश्वासे। गाती नाचती उल्हासें। झणी पाहाल तयाकडे॥ ३ ॥ जये ग्रामीं हरिपूजन। जये नगरीं हरिकीर्तन। तेथें गेलिया बंधन। तुह्मी पावाल त्रिशुद्धि॥ ४॥ जये देशी गरुडटका। कुंचे ध्वज आणि पताका। जेथें संतजन आइका। तया देशा नव जावे॥ ५ ॥ आणिक एक ऐकारे विचारु। जेथें रामनामाचा गजरु। तेथें बापरखुमादेविवरु। तयाबळें नागविती॥ ६ ॥

४२०. रामनामा वाटा हेचि पै वैकुंठ। ऐसी भगवद्गीता बोलतसे॥ १ ॥ अठारा साक्षी साहीवेवादत। चौघाचेनि मतें घेईन भागु॥ २ ॥ शेवटलिये दिवसीं धरणें घेईन बापरखुमादेविवरा बळेंचि साधीन॥ ३ ॥

४२१. नाम पवित्र आणि परिकरु। कल्पतरुहूनी उदारु। तें तूं धरी कारे सधरु। तेणें तरसी भव

दुस्तरु ॥ १ ॥ नरहरिनाम उच्चारी। तेणें तरसिल भवसागरीं ॥ २ ॥ जपें न लाहसी तपें न लाहसी। क्रिये षट्कर्मे न पवसी। नामें ऐकरे पावसी। स्वर्गी अमृतपान ॥ ३ ॥ क्षीर गोड ऐसें म्हणसी परि तेथेंही वीट असे। नाम उच्चरितां वाचें कोटि जन्माचें पातक नासे ॥ ४ ॥ मन मारुनियां सायासी परि तेथेंही अवगुण असे। नाम उच्चरितां वाचें सकळिक ध्यान डोळा दिसे ॥ ५ ॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाचे विपायें नाम आलें वाचें। जळती डोंगर कल्मषाचें भय नाहीं कळिकाळाचें ॥ ६ ॥

४२२. नाम प्रल्हाद उच्चारी। तया सोडवी नरहरी। उचलुनि घेतला कडियेवरी। भक्तसुखें निवाला ॥ १ ॥ नाम बरवया बरवंट नाम पवित्र चोखट। नाम स्मरे नीळकंठ निजसुखें निवाला ॥ २ ॥ जें ध्रुवासी आठवले। तेचि उपमन्यें घोकिलें। तेंचि गजेंद्रा लाधलें। हित जालें तयांचे ॥ ३ ॥ नाम स्मरे अजामेळ। महापातकी चांडाळ। नामें जाला सोज्वळ। आपण्यासहित निवाला ॥ ४ ॥ वाटपाडा कोळिकु। नाम स्मरे वाल्मिकु। नामें उद्धरिलें तिन्ही लोकु। आपणासहित निवाला ॥ ५ ॥ ऐसें अनंत अपार। नामें तरले चराचर। नाम पवित्र आणि परिकर। रखुमादेविवराचें ॥ ६ ॥

४२३. जें शंभूनें धरिलें मानसीं। तेंचि उपदेशिलों गिरिजेसी ॥ १ ॥ नाम बरवें बरवें। निज मानसीं धरावें ॥ २ ॥ गंगोदकाहुनी निकें। गोडी अमृत जालें फिकें ॥ ३ ॥ सीतळ चंदनाहुनी वरतें। सुंदर सोनियाहूनि परतें ॥ ४ ॥ भुक्तिमुक्तिदायक। भवबंधनामोचक ॥ ५ ॥ बापरखुमादेविवरें। सुलभ नाम दिधलें सोपारें ॥ ६ ॥

४२४. कर्म आणि धर्म आचरति जया लागी। साधक सिणले साधन साधितां अभागि ॥ १ ॥ गोड तुझें नाम आवडते मज। दुजें विठोबा मना उच्चारिता वाटतसे लाज ॥ २ ॥ भुक्ति आणि मुक्ती नामापासीं प्रत्यक्ष। चाऱ्ही वेद साही शास्त्रें देताती साक्ष ॥ ३ ॥ काया वाचा चित्त चरणी ठेविले गहाण। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलाची आण ॥ ४ ॥

४२५. भक्तीचें तें ज्ञान वाचे नारायण। दया ते संपूर्ण सर्वाभूतीं ॥ १ ॥ ज्ञान नारायण ध्यान नारायण। वाचे नारायण सर्वकाळ ॥ २ ॥ संसारग्रामीं नाम हेंचि साठा। पावाल वैकुंठा नामें एकें ॥ ३ ॥ गोविंद गोपाळ वाचेसी निखळ। पद पावाल अढळ अच्युताचें ॥ ४ ॥ नामेंचि तरले शुकादिक दादुले। जडजीव उद्धरले। कलियुगी ॥ ५ ॥ स्मरण करीता वाल्मीक वैखरी। वारुळा भीतरीं रामराम ॥ ६ ॥ सर्वांमाजी श्रेष्ठ पुण्यभूमि वैकुंठ। विठ्ठल मूळपीठ जगदोद्धार ॥ ७ ॥ निवृत्ति निरोपण ज्ञानदेवा ध्यान। सर्वत्र नारायण एकरूप ॥ ८ ॥

४२६. अशौचीया जपो नये आणिकातें ऐको नये। ऐसिया मंत्रातें जग बिहे त्याचें फळ थोडें परि क्षोभणें बहु। ऐसा मंत्रराज नव्हेरे रे ॥ १ ॥ नारायण नाम नारायण नाम। नारायण नाम म्हणकारे रे ॥ २ ॥ बाह्य उभारावी त्या वरी काहाळ लावावी। गातिया ऐकतिया उणीव येवों नेदावी। उत्तमापासुनि अंत्यजवरी। मुक्तीची सेल मागावीरेरे ॥ ३ ॥ काय कराल यागें न सिणावें योगें हें तों व्यसनचि वाउगें। नरहरि नरहरि उदंडा वाचा म्हणाल तरि कळिकाळ राहेल उगेरेरे ॥ ४ ॥ चरणीं गंगा जन्मली अहिल्या उद्धरली नामें प्रतिष्ठा पावली गिरिजा। सकळिकां साधना वरिष्ठ हें नाम मा मनीं भाव न धरी दुजारेरे ॥ ५ ॥ तीर्थी भजिजाल अमरीं पूजींजाल तुमच्चिया भावासारिखा देवो होईल। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु तुमचा ऋणवई म्हणतां नलजेरेरे ॥ ६ ॥

४२७. प्रेमाचा जिव्हाळा नाम मुखाशीं आलें। सार्थक पैं जालें संसाराचें ॥ १ ॥ केशव नाम सार विठ्ठल उच्चार। राम निरंतर हृदयीं वसे ॥ २ ॥ पाहतां हा भाव लीळाविग्रह। तेथींचा अनुभव विरळा जाणे ॥ ३ ॥ बपुरखुमादेविवरु पाहतां विस्तारु। नामाचा बडिवारू न बोलवे ॥ ४ ॥

४२८. रामकृष्ण नामें ये दोन्ही साजिरी।

हृदयमंदिरीं स्मरे कारे ॥ १ ॥ आपुली आपण करा सोडवण। संसारबंधन तोडी वेगीं ॥ २ ॥ ज्ञानदेवा ध्यानीं रामकृष्णमाळा। हृदयीं जिव्हाळा श्रीमूर्तिरया ॥ ३ ॥

४२९. कर्माचिया रेखा नुलंघिती अशेषा। म्हणोनि विशेषा केशवसेवा। रामकृष्णमाळा घाला पा रें गळा॥ अखंड जीवनकळा राम जपा ॥ १ ॥ करावा विचार धरावा आचार। करावा परिकर रामनामीं ॥ २ ॥ सकळांचा सकळी त्यांतें तूं आकळी। जिव्हा हे वाचाळी रामरती ॥ ३ ॥ रिघेरे शरण तुज नाहीं मरण। ठाकिसी चरण श्रीविठ्ठलाचे ॥ ४ ॥ निवृत्तिप्रसादें जोडे विठ्ठलनामें घडें। ज्ञानदेव बागडे पंढरिये ॥ ५ ॥

४३०. आठवितां विसरले आपुलिया गोता। हरिनामें त्वरिता मोक्ष जाला ॥ १ ॥ त्याचें नामचि त्वरित प्रल्हादें केलें प्रसन्न। तेणें संजिवन जाले त्याचे देह ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरु नृसिंहरूपें देखे। दैत्य हरिखें धरी जानु ॥ ३ ॥

४३१. तत्वमस्यादि वाक्यउपदेश। नामाचा अर्धांश नाहीं तेथें। ह्मणोनि नामसंकीर्तन करिता जवळी जोडलासि आतां। क्षणु न विसंबे जिवाचिया जीवना रया ॥ १ ॥ नाम निजधीर गर्जती वैष्णव वीर। कळिकाळ यमाचे भार पळाले तेथें ॥ २ ॥ म्हणौनि नाम वज्रकवच तोचि निर्गुणाचा अभ्यास। पाहेपां स्वप्रकाश विचारूनी। ऐसें सुंदर रुपडें हृदयीं धरिलें आतां। पाहातां केवि होये पुनर्योनि रया ॥ ३ ॥ ऐसा सकळां अकळ कळला। हृदयीं धरिला समता बुद्धी। बापरखुमादेविवरू विठ्ठलु चिंतिता। तुटली जन्माची आधि व्याधि रया ॥ ४ ॥

४३२. जिव्हेच्या निडळी नामाक्षराचि वोळी। कान्हो वनमाळी या वोजा ॥ १ ॥ लेहोन घाली पान पुसती जैसी। भलतिये रसीं बुडी दे कां ॥ २ ॥ माझे डोळा समजी सुनिळ सहजी। होय तूं बिजीं व्राहुलिये ॥ ३ ॥ ऐसि वाचा दिठी नाम रूपें आथिली। वासने वरी वहिली उठो दे कां ॥ ४ ॥ तुझें उठिलेंपण आह्मां होवावें निकें ॥ तरी गोसावीया पाइकेंसि यावें किजी ॥ ५ ॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु आंतु बाहेरी सुखें। तरी तुजसी म्यां एके नांदावें किजी ॥ ६ ॥

४३३. रसने वोरसु मातृके वो माये ॥ १ ॥ रमणिये माये रमणिये। रामनामामृत रस पिब जिव्हे ॥ २ ॥ निवृत्तिदासाप्रिय। माय रमणिये माय रमणिये ॥ ३ ॥

४३४. विठ्ठल नाम नुच्चारिसी। तरी रवरव कुंडी पडसी ॥ १ ॥ विठ्ठल नाम उच्चारी। आळसु न करी क्षणभरी ॥ २ ॥ विठ्ठल नाम तीन अक्षरें। अमृतपान केलें शंकरें ॥ ३ ॥ रखुमादेविवरा विठ्ठलें। महापातकी उद्धरिले ॥ ४ ॥

४३५. भ्रम धरिसी या देहाचा विठ्ठल म्हणे कारे वाचा ॥ १ ॥ पडोन जाईल हें कलेवर। विठ्ठल उच्चारी पा सार ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु अभयकरु। मस्तकीं ठेविला हा निर्धारु ॥ ३ ॥

४३६. विठ्ठल विठ्ठलु न ह्मणसी। पुनरपि पडसी गर्भवासीं ॥ १ ॥ अंतकाळी स्मरे। स्मरे विठ्ठल राणा ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु निर्धारी। पडों नेदी चराचरी ॥ ३ ॥

४३७. सकळ धर्मांचें कारण। नामस्मरण हरिकीर्तन। दया क्षमा समाधान। संतजन साधिती ॥ १ ॥ निजधर्म हा चोखडा। नाम उच्चरु घडघडा। भुक्तिमुक्तीचा संवंगडा। हा भवसिंधुतारक ॥ २ ॥ लावण्यमान्यताविद्यावंत। सखे स्वजन पुत्रकलत्र। विषयें भोग वयसा व्यर्थ। देहासहित मरणावर्ती ॥ ३ ॥ जें जें देखणें सकळ। तें स्वप्नीचें मृगजळ॥ म्हणौनि चिंती चरणकमळ। रखुमादेविवरा विठ्ठलाचे ॥ ४ ॥

४३८. माझ्या कान्हाचें तुम्हीं नाव भरी घ्यावों। हृदयीं धरोनि तुम्ही खेळावया न्यावो ॥ १ ॥ भक्तांकारणें येणें घेतलीसे आळी। दहा गर्भवास सोसिले वनमाळी ॥ २ ॥ कल्पनेविरहित भलतया मागें। अभिमान सांडूनी दीनापाठीं लागे ॥ ३ ॥ शोखिली पुतना येणें तनू मोहियेले तरू। आळी

न संडी बापरखुमादेविवरु ॥ ४ ॥

४३९. सार सार सार विठोबा नाम तुझें सार। म्हणोनि शूळपाणी जपताहे वारंवार ॥ १ ॥ आदि मध्य अंतीं निजबीज ओंकार। ध्रुव प्रल्हाद अंबऋषी मानिला निर्धार ॥ २ ॥ भुक्तिमुक्तिसुखदायक साचार। पतीत अज्ञान जीव तरले अपार ॥ ३ ॥ दिवसें दिवस व्यर्थ जात संसार। बापरखुमादेविर विठ्ठलाचा आधार ॥ ४ ॥

४४०. हरि आला रे हरि आलारे। संतसंगें ब्रह्मांनंदु जालारे ॥ ध्रु० ॥ हरि येथेंरे हरि तेथेंरे। हरिवांचूनि न दिसे रितेंरे ॥ १ ॥ हरि पाहीरे हरि ध्याईरे। हरिवांचूनि दुजें नाहीरे ॥ २ ॥ हरि वाचेरे हरि नाचेरे। हरि पाहातां आनंदु साचेरें ॥ ३ ॥ हरि आदीरें हरि अंतीरे। हरी व्यापकु सर्वांभूतीरे ॥ ४ ॥ हरि जाणारे हरि वानारे। बापरखुमादेविवरु राणारे ॥ ५ ॥

४४१. रामकृष्ण गोविंदाचें नामस्मरण वाचे। घडिये घडिये साचें ध्यान श्रीविठ्ठलाचें ॥ १ ॥ एकनाम आठवितां दुतां पडियेली चिंता। नाम आनंदें गातां पाविजे सायुज्यता ॥ २ ॥ तिहीं लोकीं नाम थोर वेदाशास्त्रांचे सार। सगुण निर्गुणाकार निज ब्रह्मासी ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवर कृपाळु उदारु। नामस्मरणें पारु उतरा हा निर्धारु ॥ ४ ॥

४४२. आपुलेंनि रंगे येति होति साजणी। तंव वनवासीं एके आळंगिलेगे माये ॥ १ ॥ बोलेंना बोलों देईना। तेथें पाहणें तें पारुषलेंगे माये ॥ २ ॥ आपुलें केलें कांहींच नचले वो आतां। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला देखतां ॥ ३ ॥

४४३. पन्नासअक्षरीं करिसी भरोवरी। शेखीं तुझें तोंड वैरी रया ॥ १ ॥ यापरी नामाची वोळ मांडुनी। संसार दवडुनि घाली परता ॥ २ ॥ रकारा पुढें एक मकार मांडी कां। उतरसी समतुका शंभूचीया ॥ ३ ॥ बाापरखुमादेविवरा विठ्ठलु हृदयीं। आपुली आण वाही त्रिभुवनीं रया ॥ ४ ॥

४४४. सकळ नेणोनिया आना। एकला विठ्ठलुचि जाण ॥ १ ॥ पुढति पुढति मना। एकला विठ्ठलुचि जाणा ॥ २ ॥ हेचि गुरुगम्याची खूण। एक विठ्ठलुचि जाण ॥ ३ ॥ बुझसि तरि तूंचि निर्वाण। एकला विठ्ठलुचि जाण ॥ ४ ॥ हेंचि भक्ति हेंचि ज्ञान। एकला विठ्ठलुचि जाण ॥ ५ ॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाची आण। एकला विठ्ठलुचि जाण ॥ ६ ॥

४४५. गाते श्रोते आणि पाहाते। चतुर विनोदि दुश्चिते। सोहंभावी पूर्णज्ञाते या सकळांतें विनवणी ॥ १ ॥ करा विठ्ठलस्मरण। नामरूपीं अनुसंधान। जाणोनि भक्तां भवलक्षण। जघनप्रमाण दावितो ॥ २ ॥ पुंडलीकाच्या भावार्था। गोकुळींहूनी जाला येता। निजप्रेमभक्ति भक्तां। घ्या घ्या आतां। म्हणतसे ॥ ३ ॥ मी माझे आणि तुझें। न धरी टाकी परतें ओझें। भावबळें फळती बिजे। बापरखुमादेविवर विठ्ठलीं ॥ ४ ॥

४४६. निजानंद हें पै ब्रह्म। ऐसे जाणती योगी वर्म ॥ १ ॥ विठ्ठल विठ्ठल स्मरेना। चुके संसारदर्शना ॥ २ ॥ रखुमादेविवरावांचुनि। कवण पुरविल जिवीची खुण ॥ ३ ॥

४४७. शिवभवानिये उपदेशी प्राणप्रिये। निजमानसीं ध्यायें परमानंदु पाहे ॥ १ ॥ राम सखा राम सखा। रामु सखा हरि रामु सखा ॥ २ ॥ सहस्त्र नामावरी कळसु साजे। तोचि तो अंतरीं बाहिजु भीतरीं ॥ ३ ॥ हेंचि निजधर्म हेचि निजकर्म। हेंचि परब्रह्म वर्म हेचि एकु ॥ ४ ॥ जिवाचें जिवन मनाचें मोहन। सुखाचें साधन भक्तिज्ञानाचें अंजन ॥ ५ ॥ बापरखुमादेविवरु सुलभु साकारु। अर्धमातृका अक्षरु चिदानंदसुख थोरु ॥ ६ ॥

४४८. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। वोडियाणा बंदु घालुनिया देहुडा लागसील पावो। वोतप्रोत सांडूनि मना धरिसि अहंभावो। ओंकारबिंदुचा न पवसि ठावो। वोळगे वोळगे कृष्णद्वारावतिये रावो ॥ १ ॥ ओं नमो भगवते वासुदेवाय। द्वादशाक्षरि मंत्रु न जपसि काह्या ॥ ध्रु० ॥ नागिणि उत्साहे नवहि द्वारें निरोधुन। नाडित्रयामाजि सुषुम्नासंचरण। न

साधे हा मार्ग ऐसे बोलती मुनिजन। नरहरि चिंतनें अहर्निशि मुक्तिस्थान॥ २ ॥ मोडिसि करचरण तेणें पावसि अंत समो। मोहो तृष्णा न तुटे ब्रह्मविद्या केवि गमो। मोठा हा अन्यावो जे हरिचरणीं नाहीं नामो। मोक्षाची चाड तरी मुकुंदीं मन रमो॥ ३ ॥ भांबावसी झणे हें शरीर कर्दळीस्तंभ। भस्म कृमि विष्ठा उभे आहे तों सुशोभ। भाविता किटकी जाली भृंगी तिया क्रमिले नभ। भावें भक्ति सुलभ वोळगा गा पद्मनाभ॥४॥ गति मती इंद्रियें जव आहेती समयोग। गणित आयुष्य न पुरे जंव हे न नचे भंग। गमला हाचि योग जे अनुसरावा श्रीरंग॥ गरुडध्वज प्रसादें निस्तरिजे भवतरंग॥५॥ वनिं सिंह वसतां गजीं मदु केवीं धरावा। वन्हिदग्धबीज त्यासि अंकुर केवि फुटावा। वज्रपाणी कोपलिया गिरी उदधी केवि लंघावा। वदनीं हरि न उच्चारी तेणें संसार केंवि भुंजावा॥६ ॥ तेज नयनींचा भानु जेणें तेजे मीनले ते। त्याचे मानसिचा चंद्रमा तो सिंपोते अमृतें। त्याचे नाभिकमळीं ब्रह्मा तेणें सृजिलीं सकळही भूतें। तें विराटस्वरूप वोळखावें विष्णुभक्तें॥७॥ वाताघातें फुटे गगनीं मेघाचा मेळावा। वारिबिंदु पद्मिणिपत्रीं केवी हो ठेवावा। वानराच्या हातीं चिंतामणी केवि द्यावा। वासुदेव चिंतनें तोचि कल्मशा उठावा॥८ ॥ सूक्ष्म स्थूळ भूतें चाळिताहे परमहंसु। शूळपाणी देवोदेवि जयाचारे अंशु। शुभाशुभीं कर्मी न करि नामाचा आळसु। सुखें निरंतरी ध्याई ध्याई हृषिकेशु॥ ९ ॥ देव होऊनि उदार भक्तां देतो अमरपदें। देतां न ह्मणे सानाथोर वैरियासि तेचि दे। देहे सार्थक अंति वासुदेव द्वय छंदें। देखा आजामेळ उद्धरिला नामें येणें मुकुंदें॥ १० ॥ वाडा सायासि मनुष्यजन्म पावावा। वियाला पुरुषार्थ तो कां वायां दवडावा। वाचामनें करुनि मुरारी वोळगावा। व्रतें एकादशी करुनि परलोक ठाकावा॥ ११ ॥ या धनाचा न धरी विश्वास। जैशी तरुवर छाया। यातायाती न चुकें तरी हे भोगिसिल काह्या। या हरिभजनेविण तुझें जन्म जातें वायां। यालागीं वैकुंठनाथाच्या तूं चिंती पा रे पायां॥ १२ ॥ इहींच द्वादशाक्षरीं ध्रुव अढळ पद पावला। प्रल्हाद रक्षिला अग्निशस्त्रापासुनि जळा। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु तुह्मी ध्यारे वेळोवेळां। तो कळिकाळापासुनी सोडविल अवलीळा॥ १३ ॥

४४९. विठ्ठलु नाहीं जये शरीरीं। वाया कांगा जन्मले संसारीं। विठ्ठलु नाहीं जये नगरीं तें अरण्य जाणावें॥ १ ॥ विठ्ठलु नाहीं जये देशीं। स्मशान भूमि ते परियेसी। रविशशिवीण दिशा जैसी। रसना तैसी विठ्ठलेंविण॥ २ ॥ विठ्ठला वेगळें जितुकें कर्म। विठ्ठला वेगळा जितुका धर्म। विठ्ठला वेगळें बोलती ब्रह्म। तितुकाही श्रम जाणावा॥ ३ ॥ सच्चिदानंदघन। पंढरीये परिपूर्ण। कर ठेवोनियां जघन वाट पाहे भक्ताची॥४॥ विठ्ठलेंविण देवो ह्मणती। ते संसार पुढती। विठ्ठलाविण तृप्ती। नाहीं प्रतीतिविठ्ठलेंविण॥५ ॥ श्रीगुरुनिवृत्तीनें दिधलें। तें प्रेम कोणे भाग्यें लाधलें। बापरखुमादेविवर विठ्ठलें। ऐसें केलें ज्ञानदेवा॥ ६ ॥

## करुणापर

४५०. मी माझें करुनि देह चालविसी वायां। आतां जेथींचा तेथें निमोनि जाय ऐसें कीजे देवराया॥ १ ॥ जंव जंव गोड तंव तंव जाड। जाड गोड दोन्ही नको रया॥ २ ॥ त्रिगुणवोझें जडपण रचूनि लोटुनि देसी महापुरीं। आवर्त वळसा पडिलिया मग तेथें कैची असे उरी रया॥ ३ ॥ ऐसे लटिकेंचि गाऱ्हाणें देवों मी किती। तुज नये काकुलती। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला म्या तुजमाजी घेतली सुति रया॥४॥

४५१. परिमळाची धांव भ्रमर वोढी। तैसी तुझी गोडी लागो मज॥ १ ॥ अविट गे माय विटेना। जवळी आहे परि भेटेना॥ २ ॥ तृषा लागलीया जीवनातें वोढी। तुझी गोडी लागलिया जिवा॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवराविठ्ठलीं आवडी। गोडियेसि गोडी मिळोन गेली॥४॥

४५२. रंगा येईवो ये रंगा येईवो ये। विठाई

किठाई माझे कृष्णाई कान्हाई॥१॥ वैकुंठनिवासिनी वो जगत्रयजननी। तुझा वेधु ये मनीं वो॥२॥ कटीं कर विराजित। मुगुटरत्नजडित। पीतांबरु कासिया। तैसा येई कां धावत॥३॥ विश्वरूप-विश्वंभरे। कमळनयनें कमळाकरे वो। तुझे ध्यान लागो बापरखुमादेविवरे वो॥४॥

४५३. पडलें दूर देशीं मज आठवें मानसीं। नको नको हा वियोग कष्ट होताती जिवासीं॥१॥ दिनु तैसी रजनीं जालिगे माये। अवस्था लावूनी गेला अझुनी कां नये॥२॥ गरुडवाहनागंभिरा येईगा दातारा। बापरखुमादेविवरा श्रीविठ्ठला॥३॥

## देवापाशीं मागणें.

४५४. राज्यमद गाढा पदपाद नसतां। हरिनामीं बसतां सर्वपद॥१॥ पदाभिमानु कांहीं तोही देहीं नाहीं। आला गेला ठायीं न संपडे दृष्टी॥२॥ ब्रह्मानंद आशापाश तोडी। दाऊनी उघडी मूर्ती आम्हां॥३॥ ज्ञानदेवीं सोहं मंत्राचें आवर्तन। मदमत्सरभान विरालें देहीं॥४॥

४५५. होरे तूं विठ्ठला होरे तूं विठ्ठला होरे तूं विठ्ठला होरे तूं गोपाळा। क्षेम देई रे वेल्हाळा॥१॥ तुज पाहतां भुललीये चित्ता। काय करूं मी आतां येई पंढरीनाथा॥२॥ पिसुणें परावीं मज काय करावीं। तुजची आठवी श्रीचरण दाखवी॥३॥ तुजविण वेल्हाळा कें सुखसोहळा। रखुमादेविवरा विठ्ठला शेजे नलगे डोळां॥४॥

४५६. परतोन पाहासी न बोलसी आम्हासी। तुझीया रूपासी नांव नाहीं॥१॥ सांगता नवल पाहतां बरवे मायामृगजळ देखियलें॥२॥ ज्ञानदेवो म्हणे उफराटिये दृष्टी। परतोनिया भेटी देई क्षेम॥३॥

४५७. माझिये हृदयीं बुंथी ते डोळ्यां सगुणप्रीति वाचे नाम संपत्ति ऐसेंचि असो। म्हणौनि तुझें नाम आवडे हेंचि प्रेम न विसंबें वर्म निजध्यास रया॥१॥ श्रवण नाम गोडी श्रवण नाम गोडी। हीच आवडी देई मना॥२॥ तुझिये सगुण बुंथीचा वासु व्हावा माझ्या हृदयीं ऐसा निज सुखाचिया निजध्यासा। तुझिये आवडी अनुसंधान तुझिया स्वरूपीं मन डोळा बैसो कां ध्यान हेंचि रूप। हेंचि निज आवडी देईकां दातारा चुकवी येरझारा गर्भवास॥३॥ म्हणौनि रखुमादेविवरा विठ्ठला उदारा भावें जोडलासि आम्हा। श्रुतिपुराणे वर्णिती नेति नेंति तुझा महिमा। तुझें नाम रूप सुंदर हेंचि निरंतर देई आम्हा सर्वोत्तमा रया॥४॥

## ढोंगी परमार्थ्यास उपदेश.

४५८. शरीर वरिवरि कां दंडिसि जंव वारिलें न करी तुझें मन। जळीं नेत्र लाउनि टोकती अविंशा लागोनि तैसें नको नको बकध्यान करूं॥१॥ चित्त सुचित्त करी मन सुचित्त करी। न धरी तूं विषयाची सोय। वनीं असोनी वनिता चिंतिसि तरि तपचि वाउगें जाय रया॥२॥ त्रिकाळ स्नान करिसी तीर्थजळीं परि नवजाती मनींचे मळ। तुझियानि दोषें तीर्थ कुश्चित्त जाले जैसी त्या रजकाची शीळ रया॥३॥ आतां करिसी तरी चोखटची करी त्यासी साक्ष तुझें तुज मन। लटिकेंन झकवसी तऱ्ही देव दुऱ्हा होसी बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाची आण॥४॥

४५९. मतमांतांतरें रचूनियां ग्रंथु ज्ञानव्युत्पत्ति जंव जाली नाहीं आत्मप्रतिती। ये सकळ विज्ञानें विषयासक्तीचेनि अनुमानें तेणें केंवि तुटे संसृती। अंतरींचा स्फुलिंग जाज्वल्य जाणतां कामक्रोधाचिया उपपत्ती। बाह्य दीक्षा उदंडी आणुनिया तेणें केविं होय ब्रह्मप्राप्ती रया॥१॥ सुटलेपणें करिसी विषय त्याग तेणें अंतरीं होय अनुराग। परतोनि तरीच पावशी ब्रह्म भाग रया॥२॥ आपुलेनि रूढपणें ग्रंथाचे विज्ञानें संपदा मिरविती ज्ञातेपणें। अंतरी आशापाश विखार भरणें जगीं संतता मिरवणें। येणें द्वारें म्हणसी मी वंद्य जगीं कीं उपासनाद्वारें मुक्त होणें। पालट केलिया साठीं सिणो नको बापा जेविं गधर्व नगरीं वस्ती करणें रया॥३॥ यालागी दंभ दर्प सकळ प्रतिष्ठादि भ्रांति धनदाराविषयासक्ती। ऐसा अहंममते ज्ञातेपणाचेनि

अहंकारें तेणें केविं होय आत्मप्राप्ती। जंव येणें देहें विनीतता शरण गेला नाहीं संताप्रती। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु चिंतितां। सर्व सुखाची होय निजप्राप्ती रया॥४॥

४६०. तोंडें जाले संन्यासु। भोगावरी धावें हव्यासु॥१॥ ते नेणती ब्रह्मरसु। वायां होति कासाविसु॥२॥ ब्रह्मकर्मानें साधु जाती। वायां चुकली तुझी भक्ति॥३॥ सर्वत्र आपणचि म्हणती। अभक्ष्य भक्षण करिती॥४॥ तोडी दंभ माया धंदा। शरण रिघे रे गोविंदा॥५॥ चुकले विठ्ठला उदारा। बापरखुमादेविवरा॥६॥

४६१. विटंबुनि काया दंड धरी करीं। हिंडे घराचारी नवल पाहे। असमाधानी विषयीं विव्हळ। तरी दंडु केवळ काजा काई॥१॥ सिद्धचि असतां कां गा विटंबिसी। संन्यासी तूं जाण कैसा॥२॥ निजाश्रमींच वास संकल्पासी त्यागी। सर्वस्वें वैरागी। तोचि तो संन्यासी। संगीं असंगता तोचि जाण संन्यासी। स्वरूप तयापाशीं जवळी आहे॥३॥ बापरखुमादेविवरु उघडाचि संन्यासी। तोचि पूर्ण भासीं भरला असे। निवृत्तिरायें खुणा दाखविला निरुता। तो जाणण्या परता सदोदितु॥४॥

## खऱ्या त्यागाचें वर्म न कळतां बाह्य गृहादि त्यागयास उपदेश.

४६२. घरदार वोखटें त्यजूं म्हणसी तरी शरीरा येवढें जाड। मायबाप वोखटी त्यजूं म्हणसी तरी अहंकार अविद्येचें कोड॥ बंधु सखे त्यजूं म्हणसी तरी काम क्रोध मद मत्सर अवघड। बहिणी पाठीच्या त्यजूं म्हणसी आशा तृष्णा माया अवघड रया॥१॥ त्यजिलें तें काय कासया म्हणिजे सांग पा मजपांशीं ऐसें। जया भेणें तूं जासी वनांतरा तें तंव तुजचि सरिसें रया॥२॥ स्त्रीं वोखटी त्यजूं म्हणसी तरी कल्पने येवढी भोगती। पुत्र अपत्य त्यजूं म्हणसी तरी इंद्रियांसि नाहीं निवृत्ति। सकळ गणगोत त्यजूं म्हणसी तरी हे अष्टधा प्रकृति। आवघेंचि त्यजूं पाहे म्हणसी तरी मना नाहीं निज शांति रया॥३॥ अवघींचि तुज जवळी दुमदुमित असतां वरीवरी मुंडिसी कां करिसी विटंबना। सहज संतोषें असोनि तैसा जैसा परि तो सद्गुरु पाविजे खुणा। आपुले आश्रमीं स्वधर्मी असतां सर्वत्र एकुचि जाणा। बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु इतुकिया साठीं नेईल वैकुंठभुवना॥४॥

४६३. प्रपंचाचें जगड्वाळ दुस्तर जरी मानिसी। त्याग करूनि केउता जासी। जें जें त्यागिलें तें तें तुज माजी। त्यागिलें तें काय सांग आम्हांसी। तुझें तुजचि माजि प्रपंचेंसि तूं सर्वांमाजी वर्तसी। ऐसें जाणोनिया कां विटंबिसी बापा। टाकूनि केउता जासी रया॥१॥ मनेंसि विचारी निर्धारूनि योग करी। तुझें तुजमाजि अरे आतां विचारी बापा। अरिमित्रसम होऊनि मनें हें शुद्ध होय। तेंचि तूं होऊनि राहे जाण बापा॥२॥ बाह्य त्यागिसि तरी तो त्यागुचि नव्हे पालटिसी तरी ते विटंबना। धरिसी तरीचि तो बंधु मोक्ष मागता हे जडपणा। तरि गेलिया जड तो मोक्षाचि नव्हे साचा चुकलासि उगाणा। वृत्तिशून्याकारें अवलोकितां तंव तेणें नव्हें तुज वस्तुज्ञान। ऐसें जाणोनी कां सिणसीरे बापा। हेचि धरुनि राहे निज खुण रया॥३॥ म्हणौनि आतां इतुकें करी। साच तें हें धरी तुझें मन होय तुज अधिकारी। तैं सर्वही त्याग तुज फळती बापा। जैं एकचि होऊनि निर्धारी नलगे सिणणें दंडणें येणेंचि आश्रमभावें ऐसेंचि मनें निर्धारी। बाप रखुमादेविवरुविठ्ठलु चिंतितां सर्व प्रपंचाची जाली बोहरी। निवृत्तिरायें खुणा दाऊनि सकळा। निजीं निजाचे निज निर्धारी रया॥४॥

४६४. आलियाचा संतोष गेलियाची हानी। त्याचा अतिसो वेंचे तयाची काहणी॥ ऐसे संकल्प नाहीं विकल्प देहीं वरि वरि मुंडिलिया होय कांहीं। तरि बहुरूप्याच्या ठाईं काईं काई नटु नसे रया॥१॥ आधीं भीतरी दंडावा पाठी बाहिजु मुंडावा। नाहीं तरी योगभांडिवा कां करिसी रया॥ध्रु०॥ मागितलीया भीक जरि होय

निर्दोष। तरि सणिये रजक काय न मागती॥ देवपणें फुग धरिसील गाढा। तरी वायाविण मूढा सिंतरलासी॥२॥ थिगळी घालोनि गळां म्हणसी न भियें कळिकाळा। तरि काय कर्मा वेगळा कै हो पाहासी॥ योगिया म्हणिजे कैसा भीतरी काश्मिरी जैसा। मीनालिया पदार्थासरिसा होउनी मिळे॥३॥ हृदयीं नाहीं जालेपण क्रोधें भवंडिसी लोचन। अंगीं भस्मउधळण राख राखेल काई॥ खर लोळे उकरडां काय परत्रचिया चाडा। तैसा मठीं बांधोनि मूढा वर्म चुकलासी॥४॥ तीर्थ-व्रत-जपस्नान वाउगें करिसी ध्यान। ऐसें करितां आने आन मार्ग चुकलासी॥ शुद्ध करूनियां मन सेवी निवृत्तीचे चरण। विठ्ठलविठ्ठल म्हण नाहीं तरी नाडलासी॥५॥

४६५. येणेचि आश्रमें नित्यनैमित्यें कर्मे। वर्णाश्रमधर्म त्यागून कोठें जासी। म्हणोनि येकचि विचारी बापा। जेणें सार्थक होय संसारासी। विकल्प नको धरूं। अंतर धरुनि राहे या सगुणासी रया॥१॥ आवडी धरुनी गोडी घेई का ध्यानीं। परतोन मग योनि नाहीं तूज॥२॥ सांडीं सांडीं त्याग नास्तिकाचे मत नलगे करणें अटणें। नानाविधि वाउगे जड कां सिणवणें। केंवीं मन होय शुद्धी। एकलेंचि मन करूनि स्वाधीन। सगुणींचि काय सिद्धि नलभे रया॥३॥ म्हणोनि येकाकारवृत्ति सगुणीं बैसली। प्रीतिचि निर्गुणीचि आर्ति जाण संपदा। याची सांडि मांडी न करी। निरूतें चित्तीं धरी। स्वस्वरूपीं असे सदा बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु चिंतितां सुख सगुणींची जोडे आनंदु रया॥४॥

४६६. कां सांडिसी गृहाश्रम। कां सांडिसी क्रियाकर्म। कासया सांडिसीं कुळींचें धर्म। आहे तें वर्म वेगळेंची॥१॥ भस्मउधळण जटाभारु। अथवा उदास दिगंबरु। न धरि लोकांचा आधारू। आहे तो विचारू वेगळाचि॥२॥ जप तप अनुष्ठान। क्रियाक्रर्म यज्ञ दान। कासया इंद्रियां बंधन। आहे तें निधान वेगळेंचि॥३॥ वेदशास्त्र जाणीतलें। आगमीं पूर्ण ज्ञान झालें। पुराण मात्र धांडोळिलें। आहे तें राहिलें वेगळेंचि॥४॥ शब्दब्रह्में होसि आगळा। म्हणसि न भियें कळिकाळा। बोधेंविण सुख सोहळा। आहे तो जिव्हाळा वेगळाचि॥५॥ याकारणें श्रीगुरुनाथु। जंव मस्तकीं न ठेवि हातु। निवृत्तिदास असे विनवितु। तंव निवांतु केंवि होय॥६॥

## मनास उपदेश.

४६७. अरे मना तूं वांजटा। सदा हिंडसी कर्मठा। वाया शिणशीलरे फुकटा। विठ्ठल विनटा होई वेगीं॥१॥ तुझेन संगें नाडले बहू जन्म भोगिताती नित्य कोहूं। पूर्व विसरलें ॐ हुं सोहुं। येणें जन्म बहूतांसी जाले॥२॥ सांडि सांडि हा खोटा चाळा। नित्य स्मरेरे गोपाळा। अढळ राहे तूं जवळा। मेघश्याम सांवळा तुष्टेल॥३॥ न्याहाळितां परस्त्रीं। अधिक पडसीं असिपत्रीं। पाप वाढिन्नलें हो शास्त्रीं। जप वक्त्री रामकृष्ण॥४॥ बापरखुमादेविवर। चिंती पा तुटे येरझार। स्थिर करीं वेगीं बिढार। चरणीं थार विठ्ठलाचे॥५॥

४६८. अरे मना तूं पापिष्टा। किती हिंडसी रे तूं नष्टा॥ सैरा सिणसी रे फुकटा। विठ्ठलविनटा स्थिर होई॥१॥ येणें पैलपार पावसील॥२॥ तूं अनिवार नावरसी। तुझेनि संगें नाडले ऋषी। तूं तंव अपभ्रंशीं पाडिशी। म्हणोनि गेले गुरूसी शरण॥३॥ न सोडी हरिचरण। नाहीं नाहीं जन्ममरण। अविट सेवी नारायण। तेणें मी तूं पण एक सिद्ध॥४॥ ज्ञानदेव शरण हरी। मन हिंडे चराचरी। न सोडी चरण अभ्यंतरी। नित्य श्रीहरी हृदयीं वसो॥५॥

४६९. आजि लाधलें तुमच्या पायीं स्तुति करु काई। हेंचि तुम्हा पाहीं विनवीतसे॥१॥ निवृत्त बाप निवृत्त माये। निवृत्त पाहें विवळलिये॥२॥ देखणें देखिलें तेचि होई पा रे मना। निवृत्तिचरणीं स्थिर राही पा रे जाणा॥३॥

४७०. श्रवण घ्राण रसना त्वचा आणि

लोचन हें तों दैन्याचीं द्वारें वोळगसी। यांचें यांसीचि न पुरे तुज पुरविती काये। यालागीं धरिजेसु आपुली सोयरे बापा॥ १ ॥ अरे मनारे अरे मनारे। न संडीं न संडीं हरिचरण कमळारे॥ २॥ स्वप्नीचें धन तें धनचि नव्हे। मृगजळीचें जळ तें जळचि नव्हे। अभ्रींची छाया ते साउली नव्हे। ऐसें जाणोनिया वेगीं धरिजेसु आपुली सोयरे रया॥ ३॥ तूं जयाचा तेथोनि जिवें जितासी। त्या श्रीहरीतें रे नोळखसी। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला चिंतिसी। तेणें पावसी तूं सुखाचिया राशी रया॥ ४॥

४७१. ध्येय ध्याताहे दोन्ही नाहीं। तेथें ज्ञेय ज्ञाता उरे काई॥ १ ॥ अरे मना परापर परतें पाहीं। तें तूं स्वयें आपण पाहें रे मना॥ २॥ रखुमादेवीवरा विठ्ठलाची आण। जरी बुझसी तरी तूंचि निर्वाण॥ ३॥

४७२. सुख आपलें आपण तो पाहे। स्वरूप आपुलें आपण ध्यायरे मना॥ १ ॥ लक्ष निवृत्ति चरणी धीरु राहे। भेदभ्रम सांडी सावध होय॥ २॥ बापरखुमादेविवरु एकचि पुरे। जाणतिल या सर्व सुख मोहरे॥ ३॥

## जनांस उपदेश.

४७३. तैं सत्वरजतमें धुतलिया आशा। वेगीं त्या निराशा फळेवीण॥ १ ॥ तैसें हें टवाळ हरिविण पाल्हाळ। कैसेनि मायाजाळ निरसे रया॥ २॥ त्रिपुटीचे पेठे वानवसा दिठा। वैकुंठ चोहटा पिकला रया॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु साजीरा। मार्गी मार्ग एकसरा नामें तारी॥ ४॥

४७४. स्वप्नींचेनि सुखें मानितासि सुख घेतलिया विख जाईल देह॥ १ ॥ मोलाचें आयुष्य दवडितोसि वायां। माध्यान्हींची छाया जाय वेगीं॥ २ ॥ वेग करी भजनां काळ यम श्रेष्ठ। कैसेंन वैकुंठ पावसील झणें॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठल उभा। सर्वत्र घटीं प्रभा त्याची आहे॥ ४॥

४७५. बुद्धिमात चित्त धन वित्त गोत। निजानंदें तृप्त करी रया॥ १ ॥ नैश्वर्य ओझें ऐसें तूं बुझें। वायां मी माझें म्हणसी झणी॥ २ ॥ सांडी सांडी मात उभया दुरित। हरिविण हित घेवों नको॥ ३ ॥ ज्ञानदेवा गांग जाले असे सांग। वेगीं श्रीरंग पावले तुज॥ ४॥

४७६. कर्पुर अग्नीसी स्वदेहा नाशी। चंदनीं मासी न थरे देखा॥ १ ॥ घ्राणची कळिका भ्रमर रुंजीका। तेथील झुळुका रुंजी करी॥ २॥ मोतियाचा चारा राजहंसा सैरा। दुजिया पाखिरा काम नये॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे घेती ते शहाणे। येर ते पाहुणे यमाचे रया॥ ४॥

४७७. शाहाणे सिंतरे व्याहाणे मोहरे। भणंग धुरें आतुडे कैसें॥ १ ॥ या अवचित्या गोष्टी भाग्यें होय भेटी। प्रालब्ध सृष्टीं भोग देत॥ २॥ येत जात वाटा शरीरीं भरे फांटा। मदमत्सरताठा भ्रमकुळीं॥ ३॥ ज्ञानदेवो म्हणे या खुणे मी नेणें। पंढरिचे राणे उगविती॥ ४॥

४७८. दीपीं दीप सामावे तेथें कैचा विचारु। राहिला निर्द्धारु नाना मत्ता॥ १॥ जें जेथें होतें तें तेथें नाहीं। परतोनि काई पाहातोसि॥ २॥ मौनाचिये मिठी सगळेंचि नाहीं। तैसा इंद्रियां दाही चोजवेना॥ ३॥ ज्ञानदेवो बोले सामावलें मन। मन नायकती कान तेथील कथा॥ ४॥

४७९. एका पांडुरंगें नव्हेचि पै जोडी। दया गेले ठाया मज आला रहावया। मत्सर गिळावया कुळासहित॥ १॥ क्षमा गेली परती अहंकार सांगती। ते वोढूनियां नेती अघोराशी॥ २॥ गति म्हणे मी थोर प्रवृत्ति निघाला घोर। राहों न शके घरी निवृत्ति तेथें॥ ३॥ ज्ञानदेवो सांगे असे मज पांडुरंगें। लक्ष्मीये रिघे शरण आडवा॥ ४॥

४८०. विष्णुवीण मार्ग घेसील अव्यंग। तरी वायांचि सोंग करणी तुझी॥ १ ॥ येऊनि संसारा वायांचि उजिगरा। कैसेनि ईश्वरा पावशी हरी॥ २॥ नरदेह कैचें तुज होय साचें। नव्हेरे हिताचें सुख तुज॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे शरण रिघणें। वैकुंठींचें पेणें अंतीं तुज॥ ४॥

४८१. कानीं घालुनियां बोटें नाद जे

पाहावे। न दिसतां जाणावें नऊ दिवस॥१॥ भोंवया पाहातां न दिसें जाणा। आयुष्याची गणना सात दिवस॥२॥ डोळां घालोनियां बोट चक्र जें पाहावें। न दिसतां जाणावें पांच दिवस॥३॥ नासाग्राचें अग्र न दिसे नयनीं। तरी तेंची दिनीं म्हणा रामकृष्ण॥४॥ ज्ञानदेव म्हणे हें साधूचें लक्षण। अंतकाळीं आपण पहा वेगीं॥५॥

४८२. जंववरिरे तंववरी जंबुक करी गर्जना। जंव त्या पंचानना देखिले नाहीं बाप॥१॥ जंववरिरे तंववरी वैराग्याच्या गोष्टी। जंव सुंदर वनिता दृष्टी देखिलीं नाहीं बाप॥ध्रु०॥ जंववरिरे तंववरिरे मैत्रत्व संवाद। जंववरी अर्थेसि संबंध पाडिला नाहीं बाप॥२॥ जंववरिरे तंववरी युद्धाचीं मात। जंव परमाईचा पूत देखिला नाहीं बाप॥३॥ जंववरिरे तंववरी समुद्र करी गर्जना। जंव अगस्ती ब्राह्मणा देखिलें नाहीं बाप॥४॥ जंववरिरे तंववरी बांधी हा संसार। जंव रखुमादेविवर देखिला नाहीं बाप॥५॥

४८३. चोराचियासंगें क्रमितां पैं पंथ। ठकूनियां घात करितील॥१॥ काम क्रोध लोभ घेऊनियां संगें। परमार्थासि रिघे तोची मूर्ख॥२॥ बांधोनियां शिळा पोहूं जातां सिंधू। पावें मतिमंदु मृत्यु शीघ्र॥३॥ देहगेहभ्रांती सोडुनीया द्यावें। साधन करावें शुद्ध मार्गे॥४॥ ज्ञानदेव ह्मणे तरीच साधेल। नाहीं तरी चळेल मध्यभागीं॥५॥

४८४. वेदवाणी चांग स्मरतां स्मरण नित्य नारायण हृदयीं वसे॥१॥ तेथिल गव्हर जाणता विरुळा। ब्रह्मीं ब्रह्मकळा साधुमुखें॥२॥ जाप्य जप होम बुद्धि विधान हरि। हृदयीं श्रीहरि न कळे मूढा॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे श्रीहरि हृदयस्थ। ऐसी आहे भाष्य वेदशास्त्रीं॥४॥

४८५. कामारिकरुणा करुर्णावव झोंबे। करुनिया बिंबें अलिप्तपणें॥१॥ कामधाम हरि ब्रह्मार्पणव करी। आपणचि कामारी होये हरी॥२॥ चक्षुपक्षपादयुगळ अधिष्ठान। हरिविण करूं नको॥३॥ ज्ञानदेव सोहं मंत्र तंत्र ध्यान। मनाचे उन्मन हरिपायीं॥४॥

४८६. नाद भेद सिद्ध अवघेचि विरुद्ध। जेणें तुटे भेद तेंची जपे॥१॥ सुताचिये गुंजे सुतचि पैं माजे। हरिचरणांबुजें निवडिती॥२॥ रुक्मिणीचा नाहो हाचि पैं उगवो। प्रपंच ते वावो जावो परतां॥३॥ ज्ञानदेवा चित्त हरि गोत वित्त। विज्ञान उचित ज्ञानघनें॥४॥

४८७. चिंतिलें अपैसें पाविजे सायासें। तरी कामा नसे सायास या॥१॥ देखणें स्वप्नींचे भुरें मायेचें। भ्रमित देहाचे हरिविण॥२॥ आयुष्याची पेंठ संसाराचे तट। गुरुविण वाट कैची रया॥३॥ त्रिपुटिसी वर्त्ते वैकुंठ सरतें। प्रेमेंविण भरितें कैसें येत॥४॥ ज्ञानदेवि घर केलें पै सपुर। संसार येरझार हरिचरणीं॥५॥

४८८. दीप दीपिका शशी तारा होतुका कोटिवरीरे। परि नसरे निशि नुगवे दिवसु दिनकरनाथें जियापरीरे॥१॥ नुद्धरिजे नुद्धरिजे नुद्धरिजे गोपाळेंविण नुद्धरिजे॥ध्रु०॥ नगर भ्रमतां जन्म जावो परि प्रवेशु एक्या द्वारेंरे। तैसा यजिजो भजिजो पूजिजो परि उकलु नंदाकुमरुरे॥२॥ सर्वावयवीं शरीर सांग परि विरहित एका जिवेंरे। तैसा धिक् तो श्रोता धिक् तो वक्ता जो वाळिला विठ्ठलदेवेंरे॥३॥ गळित शिर हें कलेवररे उदकेंविण सरिता भयंकररे। रविशशीविण अंबर तैसें हरिविण जिणें असाररे॥४॥ अंतःकरणीं रुक्मिणीरमणु परि त्या श्वपचाहि स्वरूपा बंधन नघडें नघडेरे। येरु यति होकां भलतैसा परि तो भव अगाडीहूनि न सुटे न सुटेरे॥५॥ शिखिपक्षींपत्रींडोळे जेंवि अकाळ जळद पडळेरे। तैसीं गोकुळपाळकबाळेंविण कर्मे सकळेंविफळेंरे॥६॥ यम नियम प्राणायाम प्रत्याहार हे सकळ उपाय परि अपायरे। जंव तमाळनीळ सांवळा हृदयीं ठाण मांडूनि न ऱ्हायेरे॥७॥ मी उत्तम पैल हीनु भूतीं द्वेषाद्वेष ठेलेरे। केलोंनि कर्मे उफकां निफजे सुख तें दुरी ठेलेरे॥८॥ आतां

असोत हे भेदाभेद आम्ही असों एक्या बोधे रे। बापरखुमादेविवरु विठ्ठल निवृत्तिमुनिराय-प्रसादेरे॥९॥

४८९. दुर्लभुरे दुर्लभुरे दुर्लभु संसारु तुम्हीं कां नेणा। आहारनिद्रेसाठीं दवडितां माणुसपणा॥१॥ आड न विहिरी बावि न पोखरणी। सरिता ना सागर कल्पतरू रानोरानीं॥२॥ बा याची खुण ज्ञानदेवो जाणे। तयाचें करणें तैं अधिकचि होणें॥३॥

४९०. धरसील तरी हाति लागे बापा। सोडसील तरी जाईल दिगंतरा॥१॥ जतन करिरे जिवाचिया जिवा। सांगतसे ठेवा जुगादीचा॥२॥ निवृत्तिनिरोप बुझे आपें आप। आधि पुत्र मागें बाप जन्में रया॥३॥

४९१. हे पृथ्वी तुझे लंकेसि आधारुरे रावणा तें त्वां अपराधें बाधकेविण आणिली। नेणो किती वानर पद्में देखतांचि रविशशी गिळिलेरया॥१॥ विरोध न कीजे विरोध न कीजे पाडू न पाहतां मागें करिसि तें नव्हेरे रावणा। प्राणुचि पारखा जालासे गव्हारा जिणें केंवि सिद्धि जाईलरे रया॥२॥ दों भूतांचि दशा जाणोनिरे रावणा तयाचा आगम सागरिं रिघाला। तयाच्या गडे गड मेळउनी सापें डाव शिळीं बाधला॥३॥ हनुमंत वायूचेनि मिसें तो आधींची पाईकी करी। तयाचेनि रोखें हीं रतलीं पंचभूतें उभा राहासि कास्यावरिरे रावणा॥४॥ आकाश तेंचि अवकाश भीतरि आत्माराम आवेशला तुजवरी। तया म्हणोनि बाणजाळ घातलें वरी येरी येरें कवळी वरच्या वरीरे रावणा॥५॥ आतां तुज देहो कैचारे रावणा आत्मा तोचि राम जालारे। बापरखुमादेविवर विठ्ठले चरेना जुंजतां तें काये केलेंरे रया॥६॥

४९२. मी माझे म्हणतां संसारीं गुंतलें। तंव परत्र परतेंचि राहिलें। हे ना म्हणउनि तया झोंबिन्नले तंव सिद्धासिद्ध हातींचें गेलें॥१॥ पुढीला चुकला मागिला मुकला तैसि परी जाली मातें। आपआपणातें गोंवीत बुद्धीं दोष ठेवी कवणातें रया॥२॥ आतां एक बुद्धि आठवली गेलें तें परतेना मागुतें। बाप रखुमादेवीवराविठ्ठलु ध्याईजे तरी सकळिक होईल अपैतें॥३॥

४९३. मृगजळाचा जळीं चाळिसि जळचरें। कैचें जळ तेथें कोठें मत्स्यरे॥१॥ नाथिलिच खटपट करील किती। गगनींचीं सुमनें तुरंबिसि मस्तकीं॥२॥ वांझेचिया सुता रचसिल मारे। कैचा पुत्र तेथें कायि संव्हारे॥३॥ कोल्हैरीचे वारु आणिसिल सावया। कैचा राऊत कोणा जिंकिसील रया॥४॥ ऐसीं नाथिलींचि नाटकें आचरसी किती। ज्ञानदेव म्हणे सहजें निवृत्ति॥५॥

४९४. मृगजळाचे डोहीं मारिसील जळचरें। कैचें तेथें कैचें मत्स्यरे॥१॥ लटकीच खटपट लटकीच खटपट। लटकीचि खटपटरे साळोबा॥२॥ वांझेचिया पुता घालसिल मारे। तेथें कैचा पुत्र मृत्यु कोणा संहारे॥३॥ रोहिणीचे वारु आणिसी सावया। कैचे वारु काय जुंझसी रया॥४॥ स्वप्नींचिया धना बांधिसी कळांतरा। कैंचें धन काय होसी व्यवहारा॥५॥ निवृत्तिप्रसादें ज्ञानदेव म्हणे। स्वप्नीचें सुख तें साळया जाणे॥६॥

४९५. वोजावलिया वोढी। वोढी पाडीजे ते नाहीं। ऐसें विचारूनि पाही आपुला मनीं। मग राहिजे सुतत्व निर्वाणीं॥१॥ दुर्लभ दुर्लभ संसार त्यात दुर्लभ माणुसपणा। ये जन्मीं नोळखसी। पशु होउनी जन्मसी। मग तुज सांगेल कवण रया॥२॥ जंव देहीं आहे देवो तव या वेदे त्याच्या लाह्या। मग तुज रात्री जाईल जडभारी। बापरखुमादेविवरु विठोजी पंढरपुरीं। तो वोळगे वोळगे जन्मवरी॥३॥

४९६. आनंदुरे आजि आनंदुरे बाह्य अभ्यंतरीं अवघा परमानंदुरे॥१॥ एक आणि दोन तीन चारी पांच सहा। इतुकें विचारुनि मग परमानंदीं रहा॥२॥ सातवा अवतार आठवा वेळोवेळां। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु जवळा॥३॥

४९७. निर्जिवां दगडांची काय करिसिल सेवा

तो तुज निर्दैवा देईल काय॥ १ ॥ कवणे गुणें भुली पडली गव्हारा। तीर्थाच्या माहेरा नोळखिसी॥ २ ॥ अष्टोत्तरशें तीर्थे जयाच्या चरणीं। तो तुझ्या हृदयीं आत्मरामु॥ ३ ॥ देह देवळीं असतां जासी आना तीर्था। मुकलासि आतां म्हणे ज्ञानदेवो॥ ४ ॥

४९८. या पिकलिया अमृताची गोडी। केंवि जाणती इतर जन। वाचा बोलिजे सेवितां निवे प्राणुगे माये॥ १ ॥ सुखाचा साचा केंवी बोलिजे। जिवातें केंवि सुईजे॥ २ ॥ अमृतकराचे रश्मी चकोर सेविती। तें सुख कोण कैसें बोलिजे रया॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु भेटलिया। तें सुख कोण कैसें सांगिजे रया॥ ४ ॥

४९९. चुकलीया चुके। आपादिलिया भलें होय। तरी दु:ख दारिद्र भोगी कवण। तरि अवघेंचि विश्व कां सुखी नव्हे रया॥ १ ॥ म्हणोनियां भ्रम सांडी नाथिला। जें जें कांहीं करीन म्हणसी होणार तें होईल। न होणार तें नव्हेल। तूं फुकाचि नाडसी रया॥ २ ॥ होणें न होणें निढळींच्या अक्षरीं। वोरबार करसील काह्या। पाईक वोळगे अठेप्रहर सेखीं दैव तंव आणील ठायां रया॥ ३ ॥ देखणें डोळा ऐकणें कानीं। जिव्हे कडु रस मधुर वाणी श्वासोश्वास हे जयाची करणी। अनुभवी जाणती ज्ञानी॥ ४ ॥ नाथिलाचि धिंवसा करूं पाहासी। दुराशा जवळि असतां। आकाश झोंबतोसी। आतांचे चिंतिलें आतांचि न पविजे। पुंढें कोण जाणे काय पावसी रया॥ ५ ॥ उपजत देहे मृत्युमुखीं पडलें। मी माझें करिसी किती। उठी उठी जागे आपुलिया हिता। बापरखुमादेविवराविठ्ठलाची करी भक्ति रया॥ ६ ॥

५००. सुंदरु राजसु सकुमारु बिंदुलें न साहे ज्यासी। स्वबुद्धि अळंकारला परा ग्रासूनि ठेला मौन्य पडलें या शब्दांसी। पाहों जाय तंव पाहाणेंचि ग्रासी नवलावो काय या सुखासी। न अवलोकवे मना अवधारूनि ध्यानी आतां न विसंबें तुझिया पायासीं॥ १ ॥ हेम अळंकारु भेदु हा काय सगुणीं निर्गुणीं आहे तैसे गुण। गुळाचेनि अंगें गोडीपणें पाहातां न निवडे आतां मी काय करूं॥ २ ॥ म्हणौनि मन समावेश करणें तुझें तुजमाजीं घालणें येणें तुज अळंकारणें मध्यमणी मन चतुष्ट पदीं पदक तेंचि बैसका चोखट मन मनीं रुतलें ठेलें। आवडीचेनि अभ्यासें कोंदलिया दाही दिशा म्हणोनि प्रीति धरी सगुणीं रया॥ ३ ॥ उभारलेनि सिडें जेथें स्वराज्य तारूं न बुडे ऐसें घडें वाडें कोडें तेचि कीजे। जेथें मनासीं कवण स्वप्नीं राज्य रक्षी जाण। आपुलें पारिखें नेणिजे म्हणोनियां आतां। बापरखुमादेवीवरा विठ्ठला शरण जाईजे रया॥ ४ ॥

५०१. उपजलें देह बाळपणें गेलें तुझें तुजचि देखतां तारुण्यपण मत्सरें आटलें आतां वृद्धपणीं कायिसि अवगणी रया॥ १ ॥ कवण्यागुणें चुकी साठीं पडली कासया श्रमलेंसि गव्हारा। सिद्धचि सांडूनी आनेआन जल्पसी तरी न चुकती तुझ्या येरझारा रया॥ २ ॥ अजागळाचे अजस्तन। तेथें कैचें अमृतपान। तैसें काय करिसी वाउगें चिंतन परपीडा जागृती कारण। तरी तयाचिये चरणीं स्थिर ठेवी मन रया॥ ३ ॥ जीवनजळीं ब्रह्मकमळ विकाशलें। आतां पाहे पां तयाचा मेळुरे। ऐसी जीवीं चिंता। तुजवांचूनिया कवण करील आमुचा सांभाळु रया॥ ४ ॥ जीवनजळीं ब्रह्म कमळ विवळे तैसे वाट पाहतां सिणले माझे डोळें। नको नागवे हा संसार नको तूं तंव निवांत निराळा रया॥ ५ ॥ ऐसा जगाचा जीवनु अमूर्त मूर्ति लेईलों डोळां। बापरखुमादेविवराविठ्ठला वांचूनि कोण पुरविल सोहळा रया॥ ६ ॥

५०२. चौऱ्यांसि लक्ष योनि क्रमुनि सायासीं। नरदेहा ऐसें भांडवल पावलासी। जतन करीरे गव्हारा। भजे न भजे या संसारा। बीज सांडूनि असारा वायां झोंबतोसी॥ १ ॥ हातींचिया लागीं भूमि चाळितासी।आप नेणतां तूं पर काय चिंतिसी

मन एक स्वाधीन तरी खुंटलें साधन। सर्व सुखाचें निधानहरि पावसी रया॥ २ ॥ तृणें पशु झकविले ते क्षीरातें। तैसा विषय पाल्हाळें निज चुकलासी। कोटि युगें जन्मवरी। येतां जातां येरझारीं। दुःख भोगिसी दुर्धर रया॥३॥ पुत्रकलत्र भवविभव विचित्र। होय जाय सूत्र तूं आप न म्हण। तुझा तूंचि नाहीं ऐसें विचारूनि पाहीं। चेतवी चोरलासी वेगीं सावध होई रया॥४॥ तुज नाथिलाचि धिवसा। आस्तिकपणाच्या आशा। असते सांडूनि आकाशा। वायां झोंबतोसी। दिवस आहे तो धांवावें। नाहीं तरी फुटोनि मरावे। मृगजळ हें अघवे पाहे रया॥५॥ स्वप्नीं साचचि जोडे। थोडें ना बहुत हातां सांपडे। तुटले प्रीतीचे कुवाडे। ऐसें जाणोनिया शरण जाई निवृत्ति। तो सोडविल संसृति। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाचे भक्ति रया॥६॥

५०३. सुढाळ ढाळाचें मोतीं। अष्टै अंगें लवे ज्योती। जया होय प्राप्ति। तोचि लाभे॥ १ ॥ हातींचें निधान जाय। मग तूं करिसी काय। पोळलियावरी हाय। निवऊं पाहे॥२॥ अमृतें भोजन घडे। कांजियानें चूळ जोडे। मग तये चरफडे। निती नाहीं॥ ३ ॥ अंगा आला नाहीं घावो। तंव ठाकी येंक ठावो। बापरखुमादेविवरा-विठ्ठलु नाहीं॥४॥

५०४. सकुमार साकत कापुरें घोळिली। गोडी परिमळु दोन्ही उरली॥ १ ॥ मित्रत्त्व करा जीवनाहूनि वेगळें। पढियंते आगळें प्रेम जाण॥ २ ॥ तरुमाजी जैसा एक चंदनु। राहिला वेधूनु वनस्पती॥ ३ ॥ बापरखुमादोविवरु जीवींचा जिव्हाळा। कांहीं केलिया वेगळा नव्हेगे माये॥४॥

५०५. असे तें न दिसें। दिसे तें नाहीं होत। यापरि दिसें दिस जुगें जाती परंपार। ऐसें जाणत जाणत तुझें चित्त कां भ्रमित। अझुनि न राहासी निवांत तरि भलें नव्हे॥१॥ सांडीं माया मोह द्वंद्व दुराशा। ज्यालागी शिणसीतें तुजसी उदासा॥२॥ स्वप्नींचे धन तें धनचि नव्हे। मृग जळींचे जळ तें जळचि नव्हे। अभ्रींची छाया तें छायाचि नव्हे। तैसें विषय सुख नव्हे नव्हे रया॥ ३ ॥ स्पर्शे मातंग दीप्तीं पतंग नादें मृग घ्राणें भृंग रसनें मीन या पांचाही विषयीं पांचही मारिलें सेखीं निर्धारूनि पाहातां पांचही तुज पाशीं तुज केवीं निकें होईल रया॥४॥ कापुराचिये मसी मेघ माखीन म्हणसी कापुर कां वायां जाळितोसी। क्षण एका तेथें कापुर नामसी उफका सिण कोठे पाहसी रया॥५॥ उपजतांचि देह मृत्यूच्या तोंडी मी माझें म्हणतां न लाजसी। शरण जाई त्या निवृत्ति। तो तारील संसृति बापरखुमादेविवराविठ्ठलाचिये रया॥ ६ ॥

५०६. उपजोनि संसारीं आपुला आपण वैरी। मी माझे शरीरीं घेऊनि ठेला। या देहातें म्हणे मी पुत्र दारा धन माझें। परि काळाचें हें खाजें ऐसें नेणतु गेला॥ १ ॥ कामक्रोधमदमत्सराचेनि गुणें। बांधला आपण नेणे भ्रमितु जैसा। मिथ्या मोह फांसा शुक नळिके जैसा। मुक्त परि अपैसा पळों नेणें॥ २ ॥ जळचर आमिष गिळी। जैसा का लागलासे गळीं। आपआपणापें तळमळीं। सुटिका नाहीं॥ तैसें आरंभीं विषयसुख गोड वाटे इंद्रियां फळपाकीं पापिया दुःख भोगी॥३॥ राखोंडी फुंकितां दीप न लगे जयापरी। तैसा शब्द ब्रह्मकुसरी ज्ञान न पवे। व्रत तप दान वेचिलें पोटा दंभाच्या खटपटा सिणतु गेला॥४॥ मृगजळाची नदी दुरूनि देखोनि। धांवे परी गंगोदक न पवे तान्हेला जैसा तैसें विषयसुख नव्हेचि हित। दुःख भोगितो बहुत। परि सावधान नव्हे॥५॥ परतोनि न पाहे धांवतो सैरा। करितो येरझारा संसारींच्या। ज्ञानदेव म्हणे बहुतां जन्मांचा अभ्यासु। तरीच होय सौरसु परब्रम्हीं॥६॥

५०७. दुजेपणाचा भावो वायां वाढविसी गव्हारा। उतराई या देहा कैसा होसील। दुजेपणें पाहसी तरि देहीं देवो पाही। सेखीं दुजेपणे नाहीं तूंची येकला रया॥१॥ भ्रांति पडलिया मना नेणसी सुख ब्रह्म चुकलासि वर्म अरे मुढा॥ २॥

ते कल्पिलिया नकळे गुरुकृपे वेगळें। वायांविण उगलें कां धांवतोसि सैरा॥३॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु जन्मोजन्मीं वोळगिला अससी तरि ते खुण पावसी निभ्रांतरया॥४॥

५०८. आउट हात आपुले आपण होतासी। येर तें सांडितासी कवणावरी। ऐसेंनि सांडिसी तरी थोडें तें सांडी। कां सकळैक मांडी तेणें सुखिया होसी रया॥१॥ कळिकाळ ते आपण। प्रभा अनु कोण। करितां दीपें लाजिजे। घरामाजी घरकुल करूं पाहासी तें दैन्यचि वाउगें येर सकळैक तूं आहासी रया॥२॥ पृथ्वी येवढा घडु लाघे यावा। मा गगन भरूं जावें अनाठायां। अस्ति नास्ति दोन्ही येकेचि पदीं। आकाशाची भरोवरी घटे केविं कीजे रया॥३॥ धावतां धावतां वेगें। तुजचि तूं आड रिगे पाय खोंवितु खोंवितु मार्ग ठाके काई जासलट ज्या वाही त्याचि सवा पाहीं। वायां तूं हावे जासी रया॥४॥ जागणेंन काय जन्मलासी निजेलेनि काय निमालासी। स्वप्नें काय केलासि तडातोडी। ऐसा जाणत नेणत तेथींचा तेथें आभासत असे तूंचि तूं भल तेथें रया॥५॥ आपला आरोहणीं लाऊ पाहातोसि निशाणी। तरी सांगेन ते वाणी लाविजेसु। श्रीगुरुनिवृत्तिनाथा चरणकमळीं। पाखोवीण होय अलिया म्हणे ज्ञानदेव॥६॥

५०९. ये सातें आलिया वोळंगा सारंगधरु। नाहीं तरि संसारु वायां जाईल रया॥१॥ कवणाचे मायबाप कवणाचे गणगोत। मृगजळवत जाईल रया॥२॥ विषयाचें सम सुख बेगडाची बाहुली। अभ्राची सावुली वायां जाईल रया॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे पाहातां पाहलें। स्वप्नींचें चेईलें तैसें होईल रया॥४॥

५१०. स्वप्नींचा घाई विवळें साचें। चेईलिया वरी म्हणे मी न वाचें॥१॥ जन कैसें माया भुलले। आपलें हित चुकले॥२॥ आपींआप देखिलें। परतोन पाहे तों येकलें॥३॥ आपीं आप असे। मी काय जालोंसें लोकां पुसे॥४॥ सकळहि शास्त्र पढिनले। नुगवेचि प्रपंचीं गुंतले बापरखुमादेवीवरा विठ्ठलें। कैसें गुरुमुखें खुणा उगविलें॥५॥

५११. वहिलिया येईरे सौरभ्य घेऊनि जाईरे। तिया इया जिवित्वाच्या लाह्यारे भ्रमरा॥१॥ सुमनाचे जीवन विरुळेविपाये। वियोगु जालिया केहीं न साहेरे भ्रमरा॥२॥ येर सकळिक पाल्हाळरे। बापरखुमादेविवरु सुखाचें निधान रे भ्रमरा॥३॥

५१२. सुखाचिया गोठी आतां किती हो करणें सुखें सुख अनुभवणें ऐसें करी॥१॥ पढियंते बाईये गुणेविण हातां नये। साचेविण सये तेथें आवडी कैची॥२॥ कैसेनि कीजे मनासी रक्षण। भावासी बंधन केवीं घडे॥३॥ बापरखुमादेविवरुविठ्ठलुचि पुरे। सुखीं सुख मुरें ऐसें करी वो बाईये॥४॥

५१३. त्रिभुवना परतें दाविसी दुरी। आधीं तूं आपुली शुद्धी करी। उदयो अस्तु कवणिये घरीं। पिंडा माझारीं सांग बापा॥१॥ जाग्रतीमध्यें कवण जागत। सुषुप्ती मध्यें कवण निद्रिस्त। दोघे भ्रमलिया स्वप्न देखत। जीव कीं मन सांग पा रे॥२॥ जाग्रति वरुन काढीं चेतना। सुषुप्ति मध्यें रिघता ज्ञाना। दोन्ही चेईलिया स्वप्ना। मग अनुवादती कवण॥३॥ इंद्रीयें सूत्रें दारें दाटली। जागत होती तें काय झालीं। सांग पा कवणें ठाई लपालीं। मग मिळालीं कवणे ठाईं॥४॥ शब्दातें नाइकती श्रवण। पहात पहात डोळे जाले हीन। नासाग्रीं ठेवूनियां सुमन। परि नेणिजे परिमळ॥५॥ पाहेंपां येथें अनुवादु काईचा। मी माजी हरपली खुंटली वाचा। ज्ञानदेव ह्मणे सद्गुरु साचा। अढळपदीं बैसविले॥६॥

५१४. परियेसी गव्हारा सादर। कर्मे निर्वंश झाले सगर। भिल्लें विंधिले शारंगधर। झाला पुरंदर सहस्त्र नयन॥१॥ कर्मे मन्मथ झालासे राख। कर्मे चंद्रासि घडला दोष। कर्मे भार वाहती कुर्मशेष। कर्मे खरमुख ब्रह्मा देखा॥२॥ कर्मे वासुकी

लंके दिवटा। कर्मे हनुमंता उदरीं कांसोटा। कर्मे शुकदेव गर्भी कष्टा। पाताळवाटा बळी गेला॥३॥ कर्मे दशरथ वियोगें मेला। कर्मे श्रीराम वनवासा गेला। कर्मे रावण क्षयो पावला। वियोग घडला सीतादेवी॥४॥ कर्मे दुर्योधनादि रणीं नासले। कर्मे पांडव महापंथें गेले। कर्मे सिंधुजळ शोषिलें। नहुष जाला सर्प देखा॥५॥ कर्मातें शंभु मानी आपण। किती पळसि कर्माभेण। बापरखुमादेविवरविठ्ठला शरण। केलीं कर्मे निवारी नारायण॥६॥

५१५. वृंदावनीं वनमाळी। खेळे गोपींसी धुमाळी। मदनमेचूची नवाळी। रसाकाळीं मनोहर॥१॥ तयाचे करी पा स्मरण। आळसु न करी अंतःकरण। भीतरलीया सुमनपण। निहारण होईल॥२॥ बरवेपणाचेनि मिसें देवातें वाणि या सौरसे। जडत्व फिटेल तया सरिसें। रसनें ऐसें चुकों नको॥३॥ तरी हा देवो तूं न्याहाळीपां। पिसाटपण फिटेल बापा। पावन होसी परमस्वरूपा। नेत्री ऐसा चुकों नको॥४॥ वेगीं क्षेम देऊनिया निविजे। ऐसें दैव कैं लाहिजे। जरी तो हृदयीं ध्याईजे। तै पाविजे अंगसुखा॥५॥ मन भ्रमर येकी हेळा। झेपावे पदकमळा। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला। होईल जवळा सौरसु॥६॥

५१६. रुणुझुणु रुणुझुणुरे भ्रमरा। सांडीं तूं अवगुणुरे भ्रमरा॥१॥ चरणकमळदळरे भ्रमरा। भोगी तूं निश्चळरे भ्रमरा॥२॥ सुमनसुगंधुरे भ्रमरा। परिमळ विद्गदुरें भ्रमरा॥३॥ सौभाग्य सुंदरुरे भ्रमरा। बापरखुमादेविवरुरे भ्रमरा॥४॥

५१७. परदींपींहूनि सूक्ष्म मार्गे। आलासी पवन वेगें। विंदुनिया। नवमासवरि पेणें केलें मातापुरीं। सोहं सोहं परी। परतेसिना॥१॥ निर्लज्जारे तुज शिकवूं किती। न गमे दिनराती बळिया देवो॥२॥ त्या येउनियां वाटा तुज ऐसें गमलें। कोहं कोहं ठेले प्रकाशत। पुसुनीयां तळ वरी सूदलासी मळ घोरीं। क्षुधा आड उरीं आदळली॥३॥ ऐशीं बाळपणीं सांकडीं। बहु ठेली झडाडी। सडाडां वोसंडी। शांति सैरा। तरुण्याचेंनि भरें वित्तविषयचोरें। बांधिलासि संसारें। हालों नेदिती॥४॥ ऐसा वोस मार्ग पुढें अवघा वेळु पाहला। वारितां वारिता निघाला मारिजसी। पुढें पडलिसे वाट। ते ऐकरे बोभाट। परतले घायवट अर्धजीवें॥५॥ ऐसे पायळ पुढें गेले पांगूळ मागें ठेले पैल तीर पावले परम तत्त्वेंसी। बापरखुमादेविवरु। विठ्ठलु सैरारे सावधु। ज्ञानिया प्रसिद्धु उपदेशितु॥६॥

५१८. वायुनें वळावें धूमें मिळावें अभ्रें पाणिये गळावें। आकाश पोकळ म्हणौनि क्षोभा जाऊं नये। निज चेईलया केउतें पळावें रया॥१॥ निराळ निराळ सहज तें निराळ। तें क्षीरचातका दुभे॥ एक धरुनियेरे सकळिक वावो। मा काय काय तेथें नलभे रया॥२॥ स्तन ना वाहे जयाचिये माये। तें बाळक केहीं न धायेरेरे। दृष्टी वोळलें तेंचि क्षीर जालें। कासविचें गोत्र पाहेरेरे॥३॥ केळि पोकळ ह्मणोनि सांडिसील झणें। तरी फळवरी निवांत राहेरेरे। नाहीं नाहीं म्हणोनि थरारिसि झणें नाहीं तें तेथेंचि पाहीरेरे॥४॥ रत्नाचिया आशा घात जाला तया राजहंसा॥ झणें भुलों नको ते सारेरे॥ द्रोणाचेनि नावें मातिये सळ चढे। होई त्या कोळिया ऐसारेरे॥५॥ बापरखुमादेविवरु हृदयींच्रा जागता। सांडुनि अनु सुखाची कायसी चाड। सिद्धचि सांडुनी अनेआन जल्पसी तरि सहजचि पडिलेंसी द्वार रया॥६॥

५१९. शब्द निर्गुणें भावावें। थितिया सगुणसि मुकावें। वेदद्रोही व्हावें। कां ऐसें किजे। कर्म उच्छेदु करुन। अहंब्रह्म म्हणतां तिथिया सुखासी आंचविजे। कर्मेचि ब्रह्म ऐसें जाणोनि दातारा। हृदयीं सगुण धरुनि राहिजे रया॥१॥ जवळी असतां सांडी मांडी करिसि। वायां सिणसी तुझा तूंचि रया॥२॥ मुळी विचारितां मन देह तंव। कर्माधीन तेथिचें संचित क्रियमाण प्रारब्ध पाहीं। तें ठेऊनि जडाचिया माथां। कीं वेगळें होऊनि पाहातां हें तव तुज नातळे कांहीं। ऐसें निरखूनी पाहातां

सगुण धरुनि आतां। मग तुज विचारितां भय नाहीं॥३॥ हा तंव कल्पनेचा उभारा। मनाचा संशय दुसरा। जेणें घडे येरझारा जन्मांतर। म्हणोनि ऐसें कां सोसावें। एकचि धरुनि राहावें। जेणें चुकती येरझारा। तेचि प्रीति जागृति स्वप्न आणि सुषुप्ति। ऐसाचि हो कां थारा। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु चिंतितां। सुख अंतरीं जोडेल सोयरा॥४॥

५२०. बरवें पाउलें पाउलें। सुंदर सकुमार पाउलें॥१॥ शीतळ हरिचीं पाउलें। गोमटें हरिचीं पाउलें॥२॥ ध्रुवासि उपदेशिले। तेंचि प्रल्हादें स्मरिलें॥ ३॥ उपमन्या प्रसन्न जालें। तेंचि गजेंन्द्रें चिंतिलें॥४॥ अहल्येसि उद्धरिलें। तेंचि द्रौपदिये धांविन्नलें॥५॥ यशोदेनें वोवाळिलें। तेंचि गोवर्धनी रंगलें॥६॥ शकटा अंगीं जें उमटलें। तेंचि बळिपृष्ठीं शोभलें॥७॥ शिवें शक्तिप्रती कथिलें। धर्मराजें तें पुजिलें॥८॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलें । ते विटेवरी दाविलें॥९॥

५२१. बहुतादां वऱ्हाडा आलीसी बाळा। हांसती लोक परी न संडी चाळा॥१॥ एकाचें खाये एकासि गाये। लाज नाहीं तिसी सांगावें काये॥२॥ वऱ्हाडियांच्या भुलली सुखा। सुख भोगितां पावली दुःखा॥३॥ नाथिलें पुसे भलत्यासि रूसे। जयाचें लेणें लेऊनि थोर संतोषें॥४॥ क्षणाचा सोहळा मानिलें हित। आपस्तुति परनिंदेचें गीत॥५॥ कवणाचें वऱ्हाड भुललीस वायां। शरण रिघें रखुमादेविवरा नाह्या॥६॥

५२२. लक्ष लावुनि त्रिपुटी ठाण त्रिभंगी चोखडें। सगुण सांवळें म्हणोनि प्रीति मना॥ तें देखतांचि पडे मिठी दृश्यातें निवटी। मना गांठी विरोनि ठेली॥१॥ जवळिल निधान सांडूनि सिणसील बापा। तरि जन्मांतर न चुकेविजें रया॥२॥ कल्पना काळीमा वेगळी त्यागी। अहंभावाचा मोडी थारा॥ आशा दासी करून नातळे कोठें। नावेक मनकरी स्थिर॥ सगुणीं धरूनि प्रीती। मना हेचि अवस्था। तरि उणीव नये संसारी रया॥३॥ मन हें मूर्तिमंत कीं निर्गुण भासत। पाहतां नाहीं भेदर्थ इंद्रियासी॥ आपलें म्हणोनि एके वृत्ति भजतां। बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु ध्यातां हृदयीं सुखें रया॥४॥

५२३. षड्चक्रीं कुंभार घडीतसे मातीं। तैसें मज किती चाळविसी॥१॥ रातीचा दिवसु कीं दिवसाची राती। वावधणी वाती लावितोसी॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे अवघेंचि मृगजळ। सांडूनि पाल्हाळ नित्य ध्याई॥३॥

५२४. मलयानिळ शीतळु पालवी नये गाळूं। सुमनाचा परिमळु गुंफितां नये॥१॥ तैसा जाणा सर्वेश्वरु म्हणों नये सान थोरु। याच्या स्वरूपाचा निर्धारु कवण जाणें ॥२॥ मोतियाचें पाणी भरुं नये वो रांजणीं। गगनासीं गवसणी घालितां नये॥३॥ कापुराचें कांडण काढितां नये आड कण। साखरेचे गोडपण पाखडतां नये॥४॥ डोळियांतील बाहुली करूं नये वेगळी। धांवोनि अचळीं धरितां नये॥५॥ विठ्ठलरखुमाईचे भांडणीं कोण करी बुझावणी। तया विठ्ठल चरणीं शरण ज्ञानदेवो॥६॥

५२५. चातकाचे जिवन घनु तरि तो सये एका धिनु। आला वेळु भुलावणु जैसा नळिनि सिना नाहीं भानु॥१॥ चंद्रासवें चकोर मिळोनियां पूर्णिमेसि विरोधु मांडिला। तो योगु निमिळे म्हणोनि तो प्रसंगु विपाईला वेगळा रया॥२॥ तैसें माणुसपण सहज तनुवरी देवाचा वारा। स्वाधिनु तैसा बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु न विसंबावा एकुक्षणु॥३॥

५२६. संसारा येऊनी लागले फांसे। गुंतला आशा मायामोहें॥१॥ न खंडे न तुटे कर्माची बेडी। अनुभवेंविण तोडी तो योगिया॥२॥ कर्माची सांखळी पडली असे पायीं। गुरुमुखें खुणें उगउ पाहीं॥३॥ ज्ञानदेवो म्हणे तुझे कृपेवीण न तुटे फांसा। निवृत्तीनें कैसा उगविला॥४॥

५२७. द्वीपोद्वीपींचे पक्षी मेरुतळवटीं उतरले।

रत्न म्हणोनी त्या स्फटिका झेपावले॥१॥ राजहंस ते भ्रमलें हो पाषाण चुंबिती। आडकलिया चाचू मग मागिल आठविती॥२॥ एक श्रीकृष्ण तें विसरलें ऐसें ज्ञानदेव बोलें। मूर्खेसी संगती करितां शाहणे सिंतरलें॥३॥

५२८. संसारयात्रा भरली थोर। अहंभावें चळे हाट बाजार। कामक्रोध विवेक मद मत्सर। धर्म लोपे अधर्में वेव्हार॥१॥ यात्रा भरली जरिं देविं विन्मुख प्राणी। विषयाची भ्रातिं आडरे॥२॥ एकीं मीपणाच्या मांडिल्या मोटा। अहंभावाच्या गोणिया सांडिल्या चोहाटा। एकीं गाढवावरी भरली प्रतिष्ठा। तन्हि तृप्ती नव्हे दुर्भरा पोटा॥३॥ एक पंडितपण मिरविती श्रेष्ठ। एक ज्ञान विकुनि भरिती पोट। हिंसेलागी वेद करिताती पाठ। चौऱ्यांशीं जिवांभोंवतसे आट॥४॥ अज्ञानभ्रांतीचीं भरलीं पोतीं। सुवस्तु सांडूनि कुवस्तु घेती। सुखाचेनि चाडे सुखाचि प्रीती। अमृत सांडुनि विष सेविती॥५॥ शांति क्षमा दया न धरवे चित्तीं। विषयावरी थोर वाढविली भक्ति। जवळी देवो आणि दाही दिशा धावती। स्वधर्म सांडुनि परधर्मी रति॥६॥ ऐसें जन विगुंतले ठायीं आत्महिताचि शुद्धिचि नाहीं। नाशिवंत देह मानिला जिंहीं। तया तृप्ति जालि मृगजळडोहीं रया। श्रीगुरु निवृत्तीनें नवल केलें। देखणेंचि अदेखणें करुनि दाविलें। मी माजी देवो यानें विश्व व्यापिलें। बापरखुमादेविवरें विठ्ठलें रया॥७॥

५२९. सुख श्रृंगार सुहावा। मिरवितो हरि समाधान बोधुरे॥१॥ हरिचे सुख गिति गातां। समाधान बोधुरे॥२॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुरे। आठवितां समाधान बोधुरे॥३॥

५३०. सकुमार साकार परिमळें आगळें। कर्पूर परिमळें घोळीयेला॥१॥ मित्रपणें करा मधुर आळुमाळा। मधुकर गोपाळा हृदयीं धरा॥२॥ भवतरु भवमूळीं भवमूळ छेदन। तेंचि अंगीं चंदन लाविजेसु॥३॥ बापरखुमादेविवरु सुकुमारु आगळा। वेदश्रुती बाळा वेधिलिया॥४॥

५३१. सुकुमार सुरस परिमळें अगाध। तयाचा सुखबोध सेवी आधीं॥१॥ मन मारी सुबुद्धि तल्लीन मकरंदीं। विषय उपाधी टाकी रया॥२॥ रखुमादेविवरु गुणाचा सुरवाडु। मन बुद्धि निवाडु राजहंसु॥३॥

५३२. बोलतां बोलु मावळला तो मावळोनि उरला। तरि हा भावों केंवि गमलारे बापा॥ कीं इंद्रियांचा भोगु खुंटला कीं समंधि याचा ठावो निमाला। कीं वर्णावर्णु भला विचारु नाहीं॥ तैसे आपुलेंचि करणें आपुलेंचि नवल। खेळ्या होउनि दावी रया॥१॥ तपें अनेक विधी करावीं हे मनाची आधी। करितां करणें सिद्धि नव्हे नाहीं। म्हणोनि वाउगाचि वळसा पडे या धाडिवसा। तैसा कल्पनेचा फांसा मायाबंधु॥२॥ ऐसी याचा पाठी कां होसी हिंपुटी। नलगे तुज सुखाचा स्वादु या गोष्टी येणें ऐसेंचि विचारी॥ एकुचि धीर धरी न लगे या द्वैतासाठीं रया॥३॥ म्हणोनि डोळियांचें देखणें लाघव तो देखणा जाणे। तेथें आपपर पिसुणें न देखे कांहीं॥ तें शद्वेविणे बोलतां निशद्वे ये हातां। ऐसा उपावो करी कांहीं। जोडिलिया धना वाढी बहू असें। तेथें वेचलें न दिसे कांहीं॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु चिंतितां सुखाचेनि सुखें राही। निवृत्तिरायें खुणा दाउनियां सकळ पुनरपि येणें नाहीं॥४॥

५३३. जंववरी जाड नव्हे उजाड नाहीं काढावया प्राणा। मग मूढा पडसी संसार सांकडा। कांहीं कटी आपुला उवेडा रया॥१॥ जाडरे जाडरे सेवटीचा धंदा। पडियेलेंसि भवकुंडा। एकीकडे जन्म एकीकडे मरण न निमेचि धंदा कुवाडा रया॥२॥ थिल्लरीचें जळ मपितरे मिना जंव न तपे आतपु हा परिमळु। जंव हा आयुष्य वोघू न सरे तंव ठाकी अगाधु। पुढें आहे हाल कल्लोळु रया॥३॥ भाड्याचे घर किती वाढविसी रे गव्हारा। दिनु गेलिया काय पंथु आहे। ऐसें

जाणोनियां वेगी ठाकी लवलाहे। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाचे पाय रया॥४॥

५३४. जव या वायूचा प्रकाश तंव या भंडियाचा विश्वासु। वायो निघोनियां गेला ठाईहूनि जाला उदासु रया॥१॥ काळाचें भतुकें श्रृंगारिलें कौतुकें। जातसे तें देखे परी न चले कांहीं॥२॥ ठाईचेचि जाणार कीं नव्हे राहणार यासी जतन ते काई। जेथील तेथें निमोनियां गेलें उपचार नचलेचि कांहीं॥३॥ हें काळाचें भांडें कीं अवघेंचि लटिकें जैसें आहे तैसें सांगेन पुढती। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुचि सकळ जीवांचा सांगाती रया॥४॥

५३५. स्वप्नींचेनी धनें भरोनियां लाहे। भला वेव्हार करूं पाहासी। मुद्दलुची नाहीं तेथें कळांतर कैचें धरणें अधरणें घेतासी। लटिकिया साठीं संसार दवडोनी। ठकूनी ठकलासी रया॥१॥ कवण नागवितो कां न गवसी। वेडावलेपणें ठकसील तूंची। चोरोनी तुझें त्वांची नेलें। आतां गाऱ्हाणें कवणा देसी रया॥२॥ पृथ्वी आप तेज वायु आकाश। हे सहज परम गुण अंशअंशा आले। येणेंची कष्टें व्यवहार करितां कोठें काय सांठविलें। विचारूनि पाहें तुझें त्वांचि नेलें आतां तुजमाजी हारपलें रया॥३॥ पुत्र कळत्र संपत्ती देखोनी संतोष मानिसी। घडि येकामाजी नासोनी जाईल जैसें कां अभ्र आकाशीं। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुची हृदयीं असतां कां नाडलासी रया॥४॥

## मुमुक्षूस उपदेश.

५३६. सुख सोज्वळ मोतियाचें लेणें। दिधलें जाई जेणें बाईये वो॥१॥ देशीं नाहीं देशा उरी नाहीं। हाटणी नाहीं तें पाटणीं नाहीं॥२॥ लक्षाचेनि लाभें जोडलें निधान। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलु जाण॥३॥

५३७. अनुभव रहणीविण कायसें श्रवण। गर्भ अंधु नेणें रत्नकिरण॥१॥ गेले मेले काय सांगाल गोष्टीं। स्वयें आत्मज्ञानी घाली परमात्मीं मिठी॥२॥ जीवा जीवन अंतरीं बाहेजु निर्धारी। सर्व निरंतरी पूर्ण भरित॥३॥ बाह्यजु प्रवृत्ति अंतरीं निवृत्ति। उभयतां गति एक आहे॥४॥ प्रसूतिकाळीं व्याली वांझ आपत्यजवळी। वांझ क्रीडा विनोदें रळि खेळतसे॥५॥ अनुभव रहणीविण जाला भगवा दिगांबरु। जैसा नग्नवरु हिंडे हाटाबिदीं॥६॥ तीर्थक्षेत्र व्रत दान यागादिक साधन। अनुभव रहणीविण शून्य धिक् गेले॥७॥ सगुण निर्गुण पाहीं या दोहिमाजि होऊनि राही। तरी निवसि ठाईच ठायीं अरे जना॥८॥ सगुण निर्गुण पाहीं जया पासोनि। ते राहे अनुभउनि येर वाउगेचि रया॥९॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलेंसि एकांतु। द्वैताद्वैताची मातु उरेचिना॥१०॥

५३८. स्वरूपावबोधु बोधु कां फावला। इंद्रियीं डवरिला प्रेमभावो॥१॥ जाणते निवाले नेणते गुंतले। भजनेंचि गोविले विसर जावो॥२॥ शांतता समता निवृत्ति उदारु। वर्षो न उद्गारु देतु असे॥३॥ ज्ञानदेवा धीर घटमठीं सामा। अधउर्ध्व व्योमा हरि दिसे॥४॥

५३९. सायुज्यसदनीं ज्ञानाचा उद्गार। विज्ञानें अमर पावताहे॥१॥ साधनबाधन धन गोत वित्त। हरिविण वित्त मनीं नाहीं॥२॥ मार्गीचा कापडी धरुनिया वोढी। ईश्वरीं उघडी उडी घाली॥३॥ ज्ञानदेवा सिद्धी साधन सपूर। कलेवर कापूर मुरालासे॥४॥

५४०. काळें ना सावळें। श्वेत ना पिंवळें। नादबिंदाहुन वेगळें। तें कवणरे चांगया॥१॥ ज्ञानदेव म्हणे जाण कां माझे उमाणे॥२॥ गोडापरिस गोड गगनाहूनि वाड। चौदाभुवना ज्याची चाड। तें कवणरे चांगया॥३॥ ज्ञानदेवो मानवलें। माझें मज सांगितलें । दोहीचे मिळोनि एक जालें। भलें केलें चांगया॥४॥

५४१. आवो कमळनयनीं चांदिणें भासिलें। तयामाजी एक निराकार देखिलें॥१॥ हेंही नव्हे तेंहि नव्हे कांहीं नव्हे तोचि पैं होय॥२॥ बापरखुमादेविवरु नव्हताचि पैं जाला। होऊनियां

फावला फावो सरला ॥ ३ ॥

५४२. मेरुपरतें एक व्योम आहे। तेथें एकु पाहे तेजःपुंजु ॥ १ ॥ तेज नव्हे तेजःपुंजू नव्हे ॥ २ ॥ शितळ नव्हे शांतही नव्हे ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलही नव्हे। नव्हे तो होये चतुर्देहेंविण ॥ ४ ॥

५४३. पाहातां पाहाणें दृश्याही वेगळें। तें कैसें आकळे म्हणतोसि ॥ १ ॥ आहे तें पाहीं नाहीं तें होई। ठायींच्या ठायीं तुंची होसी ॥ २ ॥ स्वरूपीं समता हृदयस्था आप। तयाचें स्वरूप आदि मध्यें ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु सगुणी समाये। निर्गुण दिसताहे जनीं रया ॥ ४ ॥

५४४. त्रिपुटि उलटु निर्गुणि अरुता। पाहातां दृष्टांता भेदु नाहीं ॥ १ ॥ भेदु अभेदु अवघाचि गोविंदु। बिंबे बिंब छंदु हरि लीळा ॥ २ ॥ नाहीं आला गेला शब्द पैं दृष्टांतें। दृश्यादृश्य भूतें एकतत्वीं ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु अर्ध उर्ध्व शेज। वेंगीं तूं उमज अरे रया ॥ ४ ॥

५४५. व्यक्ताचे अव्यक्ती पाहतां पैं न दिसे आपीआप रसे व्यक्त हरि ॥ १ ॥ बाहेजु भीतरी आदिमध्यउर्ध्व। हृदयीं सन्नद्ध बिंबलासे ॥ २ ॥ ऐसीये दशे ते अव्यक्त भुंजसी। मी माझे मोहासी सांडी रया ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवर अव्यक्त व्यक्ती अव्यक्त। अवघे संचित हरि आहे ॥ ४ ॥

५४६. नित्यता समाधी असोनि पै साधी। मायेची शुद्धि पुसे रया ॥ १ ॥ साधन विधान पुजा अनुष्ठान। नित्यता कीर्तन सोहंभावें ॥ २ ॥ स्मरण विलास तत्वीं तत्व हाला। उपदेशु बोला बोलों नये ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवा सिद्धि नित्यता समृद्धि। जीवशिवबुद्धि समाधि त्याची ॥ ४ ॥

५४७. पाहोनिया दिठी नवजाय भूली। मायेची घरकुली खेळतुसे ॥ १ ॥ माया मन पाही मायेसीही पर। परते सत्वर निमिष्य नाहीं ॥ २ ॥ खेळतां बाहुली स्वप्नचि वर्तवी। रावोरंक दावी भेदबुद्धी ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवर अभेदुनि अभिन्न। हरिरूपीं लीन जिवशिवीं ॥ ४ ॥

५४८. अहंते न पाहे नाहीं तेची पाहे। भुलिसवें जाय काय करूं ॥ १ ॥ सोहंभावें सोकरी कोहं भावें हो जरी। पाहे दुरीच्या दुरी एकतत्वीं ॥ २ ॥ आदि हें माजिठें रूपीं रूप पैठें। असोनियां द्रष्टे न पाहे भुली ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवर भुलिभुरेंहरि। माजिठा श्रीहरि आपरूपें ॥ ४ ॥

५४९. जनवन हरि न पाहतां भासे। घटमठीं दिसे तदाकारु ॥ १ ॥ फिटती भुरे धुम उठी तेजा। अक्षरीं उमजा गुरुकृपें ॥ २ ॥ खुंटलिया मुक्ति राहिले अव्यक्तीं। एकरूप ज्योती तदाकार ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव क्षर अक्षर उमजे। बापरखुमादेवीवर हृदयीं विराजे ॥ ४ ॥

५५०. दिव्य औषधीची वार्ता ऐकोनियां कानीं व्याधी टाकी तनु। धालियाचे सुख भूकेला जेवि जाणे कैसे निवे त्याचे मनु रया ॥ १ ॥ सुखाचा अनुभव कैसेनि जाणावा। भेटिचें आर्त सकळांसही सारिखें होईजे देखा ॥ २ ॥ आपण झालिया जागा नलगे सांगावें। बापरखुमादेविवरविठ्ठल भेटलिया। तरि तुझीं तुटतील सकळिक विंदानें रया ॥ ३ ॥

५५१. सर्वांग देखणा हाचि भावो जाण। येर निराकारणें वाया वोझें ॥ १ ॥ शक्तीचा पडिभरु वाहासिल माथा। श्रीगुरुपायां शरण जाईं ॥ २ ॥ नसंडी वेदसिंधु सांडी मांडी कर्म। उपाधीचा धर्म करूं नको ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरदेखणा सर्व दृष्टी। तेथें प्रपंच गोष्टी मुरलिया ॥ ४ ॥

५५२. संसारकथा प्रपंच चळथा। मनाचा उलथा विरुळा जाणे ॥ १ ॥ होतें तें पाहीं नव्हे तें घेई। द्वैतबुद्धि ठायीं गुंफों नको ॥ २ ॥ चित्तवृत्ति ध्यानीं मनाची निशाणी। भ्रमभेद कानीं ऐकों नको ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव गंगा निःसंगाच्या संगा। वेगीं श्रीरंगा शरण जाईं ॥ ४ ॥

५५३. ऐके तूं ज्ञान सुख विश्रांति रूपा। हरिरूप दीपा पाहे ऐसा ॥ १ ॥ चित्तवृत्तिचिया आदिमध्य अंतीं। रूपींरूप आनंदीं समरसें ॥ २ ॥ निवृत्ति सांगे ज्ञाना योगाचि धारणा। जीवशिव

करणा चक्षु दृढ करी ॥ ३ ॥

५५४. येथें तेथें दुरि तो नांदे मंदिरीं। आत्मा चराचरीं एकपणें ॥ १ ॥ ऐसा पाहे दृष्टि चैतन्याची सृष्टि। तरि सुदर्शन घरटीं आपेआप ॥ २ ॥ जातजात येणें प्रपंच साधणे। गाळूनियां गगन हंस घेई ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव संधी साधूनिया सिद्धि। छपनाची संधी टाकुनि गेला ॥ ४ ॥

५५५. सार सप्तमीसि हारपली निशी। दशवे द्वारेसीं उभा राहे ॥ १ ॥ तेथें तूं सावध अवघाचि गोविंद। देहीं देहाभेद करूं नको ॥ २ ॥ इंद्रियांच्या वृत्ति दशवे द्वारीं गति। देहागेहउपरति होईल तुज ॥ ३ ॥ विस्तारी विस्तार गुण गुह्य सार। एकाएकीं पार सार साधी ॥ ४ ॥ विकृति विवर प्रकृति साचार। तत्त्वाचा निर्धार समरसीं ॥ ५ ॥ निवृत्ति सांगे ज्ञाना एक तूं करी। तरी तुतें कामारी होईल चित्तें ॥ ६ ॥

५५६. शांतिक्षमादया निवती निर्विंग। होउनी सर्वांग आत्मभोगी ॥ १ ॥ नाहीं अंतरूप सर्वही चैतन्य। चिदानंदघन बिंबलेंसे ॥ २ ॥ मायीकवृत्तीचा झणी धरिसी संग। इंद्रियाचा पांग सांडी रया ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे कल्पना काजळी। दिपीं दीपमेळीं पाजळी वो जगीं ॥ ४ ॥

५५७. असार घेईजे सार परखुनियां विचार। जेणें तुटे येरझार मरणजन्मीं ॥ १ ॥ तें रूपस रूपडे पहा न संपडे। हृदयीं सांपडे ज्ञान गोष्टी ॥ २ ॥ सांगता अनुमान अद्वैत सार पूर्ण। ज्ञानाज्ञानीं सज्ञान विरुळा जाणे ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव सोपान सांगितलिया संपन्न। हरितत्त्व अनुप्रमाण लाधे पूर्वपुण्यें ॥ ४ ॥

५५८. निर्मिला म्हणसी परेचा विस्तार। तेथें हा विचार वांयावीण ॥ १ ॥ पर नाहीं तेथें अरुतें कैंचे। आदिमध्य साचें कळिका हरि ॥ २ ॥ नाहीं त्या सन्मान विकृति उपरमु। दिपीं दीप समु शेजेबाजे ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवरु परेसि परता। हा विचारु अरूता दिसे भान ॥ ४ ॥

५५९. सज्ञानीं पाहातां अज्ञान तत्वतां। अज्ञानीं अमृता सद्‌गुरु जाणे ॥ १ ॥ गुरुगम्य सत्ता शिष्य होय सरता। पूर्णी पूर्ण हातां ब्रह्म येत ॥ २ ॥ आदि मध्य घर हरीचा शेजार। हरिविण थार नाहीं कोठें ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवीं चित्त गुरु धर्म वित्त। अवघें जीवित हरि केला ॥ ४ ॥

५६०. मनाची सृष्टि स्वप्न वर्तवी दृष्टी। अळंकारलें उठी गंधर्वनगर। तेथेंचिये राणिवेसाठीं कां भ्रमु धरितासि पोटीं। जेथें जेथें पाहातां पाहणें नुठी तोचि होई। म्हणोनि देखणीया जवळीके कीं दृष्टिविण सुके तैसें स्वानुभवें स्वानुभव मावळे ज्याच्या ठायीं। ते अवस्थेविण दृष्टि गोचर होई वेगीं तें देखणेंचि दृष्टि विठ्ठल रया ॥ १ ॥ तुझें तूंचि विंदान जाणोनि पाहीं। आपेंआपवीण विचारू नाहीं ॥ २ ॥ म्हणौनि एकमेका मज आठवे आठवेचि विसरोनि फावे। पैं देहद्वयभाव विरोनि जाय तेथें पदत्रयाची मांडणी कीं तत्वत्रयाची वाणि या पांचांते जेथ न फावे। कर्मेंद्रिया ज्ञानेंसी ज्ञानेंद्रियें जो नेमेसी तंव ते विस्मो करूनि पाहे सुखस्वानुभवादुःख प्रकाशले ते सुख केवि फावे। याचिया गुणागुण न गुंजिजे हृदयीं सुखावोनि तेंचि तूं राहे रया ॥ ३ ॥ मग आंग शेजबाज कीं हे बाह्येंद्रियांचे उपभोग मानिसीं साच। जरी सोंग स्वप्नींचें असे ऐसें जाणतां निदसुरा होसी दातारा या स्वप्नींच्या वोरबारा बापा वोथरसि कांपा। म्हणोनि बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु उघडे डोळांचि निधान देखिजे तवं मार्ग सोपा। म्हणोनि तेथींच्या तेथें पाहतां याविण नाहीं दुजें। वाया खटपट करिसी बापा रया ॥ ४ ॥

५६१. शून्याशून्य धार शून्यशेजे हरी। शून्या-माजि घरीं बिंबलासे ॥ १ ॥ आधीं आप पाही शून्या शून्य देहीं। मज उमजोनी ठायीं घेईजे सुख ॥ २ ॥ शून्य ते कांई शून्याशून्य पुशिलें। हृदयस्था जालें कोण्या गुणें ॥ ३ ॥ बापरखुमादेविवर विठ्ठल अवघा। शून्याशून्य वेगा ज्ञानघन ॥ ४ ॥

५६२. शांति दिसे ओहं पर दिसे सोहं। क्षमा हे कोहं कारुण्य सदां ॥ १ ॥ स्नेहाची दिवाळी फेडूनी

काजळी। या दीपें वोंवाळी जीवशिवीं॥२॥ ज्ञेय ज्ञाता ज्ञान दृश्याद्रष्टा दीप्ती। रूपीं रूपस्थिति अंकुरलासे॥३॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठल साच। मी माझें आहाच वांयावीण॥४॥

५६३. साउमा जंव जाये तंव हृदयींच आहे। चित्त विकासु पाहे चित्तामाजी॥१॥ तंव चतुर्भुज हरि हृदयमंदिरीं। तया नमन करी विज्ञानेसी॥२॥ शांति धरुनि बाही आपेंआप पाही। मननीं निर्वाही न्याहाळिला॥३॥ ज्ञानदेवा रूप बिंबोनी। समीप प्रपंचदुःख सुख जालें॥४॥

५६४. औट हात चर्म देह बांदवडी। त्रिगुणाची घडी नुगवे रया॥१॥ सोकरितां धाया काय करिल माया। श्रीगुरुच्या थायां विरुळा जाणे॥२॥ सोहंकारा सोहंकारा हरी पोकारा। वायांच मायेचा वारा भरूं नका॥३॥ सप्तद्वीप पृथ्वी नव खंडें देव। स्वर्गभोगभाव राणिव व्यर्थ॥४॥ ज्ञानदेवीं सार हरिपंथ पार। एकतत्व उच्चार तिहीं लोकीं॥५॥

५६५. दीपकेमाजि दीपक दीप्तीसि सतेज। बिंबोनिसहज बिंबीं मिळे॥१॥ बिंब नाहीं पाहासील काई। ठायींच्या ठायीं होऊनि राही॥२॥ सर्वी सर्वरस समरसोनी आहे। उभारूनि बाहे वेद सांगे॥३॥ ज्ञानदेव निजीं निजोनि सहज। देहींचा निर्लज्ज रुसला सये॥४॥

५६६. जिणें देउनि देहीं निःशंक होईजे। मां मरणें मरण तयासि म्हणिजे॥१॥ जिणें तें काई मरणें तें काई। जिणें मरणें दोन्ही चोजवेना॥२॥ सिंधु बुडबुडा क्षणामाजि आटे। सिंधु बुडबुडा कांहीं ते नाटे॥३॥ बापरखुमादेविवराच्या पायीं। ज्ञानदेवो पाही मरण जाणें॥४॥

५६७. सायखडियाचें बिक। अचेत परि करी पाक। जनदृष्टीचें कवतुक। स्फुरे वेगीं॥१॥ तैसें हें देहरूप जालें। न होतेंचि होणें आलें। तंव सद्गुरु जाणितलें। येथींचें रया॥२॥ सतधनि म्हणे गुरु। जत सांभाळी विवरु। ऐसेंनि तुज वोगरु। वाढिला ब्रह्मीं॥३॥ निराकार अलिप्त वसे। शरीरीं असोनि तूं नसे। एकत्व मनोद्देशें हृदयीं ध्यायें॥४॥ सोडी रसाची रससोये नको भुलों माया मोहें। सत्रावी दोहतु जाये। जीवन भातें॥५॥ ज्ञानदेव म्हणे श्रीगुरु। ऐसा सांगति विचारु। मग ब्रह्मीं चित्तानुसारु। निरोपिला सर्व॥६॥

५६८. आप आपीं माये तेजी तेज समाये। पवनगे माये पृथ्वी जाये॥१॥ हंस कोठें गेला तूं पाहो विसरला। भ्रमेंचि भुलला कोई शब्दें॥२॥ सांडी तू रे जाती होई रे विजाती। येणें रूपें समाप्ती प्रपंचाची॥३॥ ज्ञानदेवा घर विठ्ठल आचार। वेगीं परंपार हंसपावे॥४॥

५६९. अनंतीं अनंत तत्त्वता तंव एक। विरुळा जाणे एक बिंबताहे॥१॥ एका तेजी बहु बहुतेज घृष्टी। एकतत्व सृष्टी मेळु शिवीं॥२॥ तर्काचाही तर्क विवेक सकळ। तेणेंविण गोपाळ आकळेना॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे जाणे प्रसाद निवृत्ति। मौनाची मुक्ति वाट आहे॥४॥

५७०. स्वभावें विचरतां महीं। सम ब्रह्म दिशा दाही। एकु एकला आस पाही। सर्वाघटीं बाईये वो॥१॥ दुजें द्वैत हेतु सांडी। एकतत्वसार मांडी। हरिविण इये पिंडीं नाहीं वो माये॥२॥ काय सांगो याच्या गोष्टी। अवघा दिसे हाचि सृष्टि। विश्वरूप किरीटी। अर्जुना दिठीं दावियलें॥३॥ ज्ञानदेव दीप उघड। उजळुनी केलासे वाड। माय देवीं आम्हां नाही चाड। अवघा गोड हरि आमुचा॥४॥

५७१. बाहिजु भीतरी भीतरलेपणा ऊरी। ऊरी ऊरैल साचारी जेणें निवविजे॥ तेथचिया सारा मुसें मुसल्या आकारा। सोय सांडु नको येरझारा चुकतील॥१॥ सहज भक्तिसुख पावसील। जाणु असतां कां नेणु होतासी। मागिली ये तुटी साठीं। लाभु ये खेपेचा मनुष्यपणाचेनि मापें घेइजेसु रया॥२॥ येकवटु वटवटाच्या पोटीं। बिजीं बिजा आंतवटु आपण पैं। तिहीं रजीं रजु सरे सरोनियां जें उरे। तैसें एकसरां धुरें तूं अनुसरे पां॥३॥ रविरश्मीचिया तेजा कवण बैसविलिया

वोजा। कैशा सांगताति गुजा सामवलेपणें॥ जळीं तरंगु भेदु तैसा परमात्मा परमानंदु। ऐसा सांडूनि गोविंदु झणें विलया जासी॥४॥ जळें जळ पियींजे तेथें काय उरे दुजें। ओघें ओघुचि गिळिजे बाप सागरा पोटीं॥ सिंधु नेणे अव्हांटा नदीचिया वाटा तैसा करीलरे हरि सांठा तुज आपणामाजी॥५॥ तेथे जगचि परतलें जग जगपणा मुकलें। मोहो अभावीं उरलें उरतां ठायीं॥ तेथें सिंधुचि अवघा अवघेपणें नये मागा। यापरी लागवेगी हरि पावसी रया॥६॥ ऐसे सुखाचे सोहळे माजी सुख प्रेमवोळे। कवण सुख बोले सुख सुकाळे मातलें तें॥ तेथें मीतूं सरे सेखीं भक्त तोही नुरे। शिवीं शिव विरे मोहरे जालया रया॥७॥ अमृतीं अमृता गोडी बोल बोलतां बोबडी। पुण्य मनोधर्मी गुढी उभारिली जेणें॥ अमरवोघाचेनि वोघे आफाविजे जिवलगें। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलासंगें सांपडलें॥८॥

५७२. दृष्टीचें सुख अंतरी देख। ओंकार अरुष बोलताती॥१॥ नादुले ऐकसी बिंदुले ते देखसी कोंदलें चौपासी सांवरेना॥२॥ तें आतु न बाहेरी आणि अभ्यंतरी। एकलेंचि निर्धारी वर्ततसे॥३॥ उफराटिये दृष्टी निवृत्तीच्या शेवटीं ज्ञानदेवा भेटी होउनि ठेली॥४॥

५७३. सांगेन तें ऐक दाविन तें पाहे। या मनाचि मूळ सोय आठवी पां॥१॥ आठवितां तूं तया ठकसिल कैसा। सांजवेळें लाहासि उदो कां जैसा॥२॥ बुडोनिया राही आनंदसागरीं। आठवितां असें जन्मवरी रया॥३॥ पडतासि दृष्टी निवृत्तीच्या चरणीं। ज्ञानदेवो मनीं धरूनि ठेला॥४॥

५७४. जिता जिणें लागे गोड परत्रि तें अवघड। आवधियाहुनि तनु वाड मरण भलें॥१॥ जिता मरिजे मरोनिया उरिजे। इतुजे जाणिजे तरि जपणेचि नलगे॥२॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलाच्या पायीं। ज्ञानदेव पाहीं मरण सांगे॥३॥

५७५. देखणें देखाल तरी हरे मन। सामावलें जीवनमुक्तरत्न रया॥१॥ भला भला तूं भलारे ज्ञाना। निवृत्ति आपणा दावियेलें॥२॥ गुरुमुखें ज्ञान पाविजे निर्वाण। तें निवृत्ति म्हणे ज्ञाना पावसील॥३॥

५७६. सकळहि कळा बिंबोनि निराळें। तें तूं घेउनि उगलें राहे रया॥१॥ तें तत्वता तत्व घेईका एकत्व। या मना महत्व देउनीया॥२॥ निराळ निराकार पाहे तें आपरंपार। तें तूं परात्पर होउनि राहें॥३॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु सकळहि कळा प्रकाशकु। तोचि सर्व व्यापकु जाणौनि राही॥४॥

५७७. जगत्र धांवताहे सैरा म्हणौनि धांवसी। थोर कष्टलासी वायाविण॥ धांवोनि जावोनि काय करिसी। सहज अहिर्निशी भेटी नाहीं॥१॥ जीव जाणवेना जीव जाणवेना। जिवाचें वर्म तें चोजवेना॥२॥ जिवाशिवा दोन्हि भिन्न भेदु नाहीं। विचारूनि पाहि हृदयामाजी॥ जिउ सर्वाठायीं असे योगिया न दिसे। कुडी सांडूनि वसे कवणें ठायीं॥३॥ जिउ जैसाचि आला तैसाचि गेला। तो कोठें सामावला जाणतेनो॥ ज्ञानदेवो म्हणे जिउ कोठें गेला। जिवा जन्म जाला कवणे ठाई॥४॥

५७८. भलें बोलोनि दाविलें मज। आत्मज्ञान सांगेन तुज॥१॥ मनाचा प्रकाशु थोरु। मनेंचि ब्रह्म उजियेडु॥२॥ निवृत्ति सेवियेला सुघडु। तेणें मज जाहला ब्रह्माचा पाडु॥३॥

५७९. आपणासि आपण उपदेशु कीजे। गुरुमुखें बुझिजे तेंचि तूं॥१॥ मी तें कवण हें तूं जाण। बुझें निर्वाण तेंचि तूं॥२॥ सिद्धचि सांडूनि निघसी अनानीं ठाईं। तूं रिघेपां सोई संताचिये॥३॥ जें तपाव्रतांचे ठायीं ते येथेंचि पाही। परि ते ठाईच्या ठाई म्हणे ज्ञानदेवो॥४॥

५८०. पिंड निर्माण जीवकळा सरिसी। गति प्रवेशीं कैसी जाली॥१॥ तेथींची रचना न कळे हो देवा। अनुभवाचा ठेवा काढुनी पाहे॥२॥ वारपंगाचें लेणें लेवविसी जाई जेणें। परी घरांतील ठेवणें

नुमगसी ॥ ३ ॥ अणुचें प्रमाण न साहे डोळां। कैसा मुक्तीचा सोहळा घेवों पाहसी ॥४॥ जळीं नांदला तो तरंगीं उमटला। मिळोनियां गेला सागरासी ॥५॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला उदारा। ज्ञानाचा वेव्हारा होई बापा ॥ ६ ॥

५८१. पाहणें पाहाते सांडुनि निरुते। पाहिलिया त्यातें तूंचि होसी ॥ १ ॥ तेंचि तें आपण तत्व तें तूं जाण। नलगे साधन आन कांहीं ॥ २ ॥ भानुबिंबेवीण भासलें तम। ज्ञानदेव वर्म अनुवादला ॥ ३ ॥

५८२. तूं तो माझें मी तो तुझें। ऐक्य जालें तेथें कैचें दुजें ॥ १ ॥ तूं तो मी गा मी तो तूं गा। अज्ञानें बापुडीं नेणती पैं गा ॥ २ ॥ निर्गुण होतें तें गुणासि आलें। अज्ञान निरसूनि एकचि जालें ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे परतूनि पाही। जीवाचा जीवनु कवणें ठायीं ॥ ४ ॥

५८३. अमोलिक रत्नें जोडलेंरे तुज। कारे ब्रह्मबीज नोळखसी ॥ १ ॥ न बुडे न कळे न भीये चोरा। ते वस्तु चतुरा सेविजेसु ॥ २ ॥ ज्ञानदेवो म्हणे अविनाश जोडलें। आणुनि ठेविलें गुरुमुखीं ॥ ३ ॥

५८४. पढियंते कीं सिंह दुरी जाणसी तरि तो ठावो दृष्टीसी दुरी। मोकारेविण प्रतिबिंबासी चेतना लाहे ऐसें कीजे रया ॥ १ ॥ आवडी वेचुनियां डोळियां पुढें रितां कां रिगतासी। तूंचि सर्वांभूति ऐसें जरि जाणसी तरि साचे भेटी केउता जासी रया ॥ २ ॥ अरे हा दुजेविण खेळु मांडिला हरि जैत अनुठायीं नाहीं। बापरखुमादेविवराविठ्ठला तूं जाणतयासि काय जाणणें रया ॥ ३ ॥

५८५. मन मुरे मग जें उरे। तें तूं कारे सेवीसिना ॥ १ ॥ दिसतें परि न धरवे हातें। तें संतातें पुसावें ॥ २ ॥ तेथींची खुण विरळा जाणे। निवृत्ति प्रसादें ज्ञानदेवो म्हणे ॥ ३ ॥

५८६. व्रतें तपें तीर्थे तवचि वरी गर्जती। जंव देखिलें नाहीं तुवा तूंतें ॥ जेथें वेदा मौन पडे श्रुति नेति नेति म्हणोनि बहुडे। तें सुख वाडेकोडें भोगिजेसु ॥ १ ॥ नाहीं आपण पै सौरसु कां करिसी हव्यासु। लटिकाचि मायाभासु मिथ्या भ्रमु ॥ सिद्धचि असतां करिसी साधनाची चाड। सुख सांडुनी दुःख वाड भोगितासी रया ॥ २ ॥ या विश्वायेवढा जगडंबरु पसारा। देखोनियां सैरा मन धांवें तुझें ॥ मृगजळ देखोनि मृगें आलीं टाकोनि। जीवन म्हणौनि तान्हा फुटोनि मेलीं ॥ ३ ॥ आतां तुज नलगे कष्टावें जें असेल स्वभावें। नेमिलें देवें तें न चुकें ब्रह्मादिकां ॥ उमप सांडूनि करिसी दैन्याचे डोहळे। निधान देखोनि डोळे वायां झांकूं नको ॥ ४ ॥ थोडें हें सांडी परौतें बहुत तें घेई अरौतें। जें चाळितें तूंतें आणि विश्वातें मागें ॥ जें केलें तें अवघे यांतुचि निमाले। आतां पाहतां तुझियेनि बोलें बंधमुक्त रया ॥ ५ ॥ पुत्र कळत्र वित्त हा तो मिथ्या मोहो। तो आपुलासाचि चावो मानेल तुज ॥ नखापासूनि शिखा व्यापूनिया आहे। बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु हृदयींचा ध्यायि सुखें रया ॥ ६ ॥

५८७. नाहीं तें तूं काय गिळिसि। आत्मा वोळखोनि होय तत्त्वमसि ॥ १ ॥ सांडी सांडी सगुणाची भ्रांति। तूंचि निर्गुण आहासि तत्त्वमसि ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु विठ्ठलु पंढरियेसी। कांहीं न व्हावा आवघा होसी ॥ ३ ॥

५८८. पाहाणेंचि पाहासी काय पाहणें तेथें नाहीं। पाहाणेंचि पाही पाहाणें रया ॥ १ ॥ खुंटलें बोलणें बोलीं बोला बोलुचि मौन्य ठेला मौन्यामाजि ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवराविठ्ठलाचिये खुणें। अनुभविया बोलणें पारुषलें ॥ ३ ॥

५८९. कापुरा अग्नि स्नेह जाला। मी नाहीं तेथें काय उरला ॥ १ ॥ मी नाहीं तेथें कवणिये ठायीं। देखत देखन पाहीं भुललासी ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलीं खुण। जणते जाणती ते अनुभविये ॥ ३ ॥

५९०. स्वप्नींचेनि भ्रमें धरिसी स्थुलाकृति। परि सिद्ध नव्हे सत्य त्याच्या पायीं ॥ कारण महाकारण

लिंग आणि चतुष्टय। हे शब्दिक उपाय बोलों ठाती॥१॥ येक नाहीं तेथें दुजें कायिसें। देहद्वय पाहातां दुजें न दिसें॥२॥ तेचि ते संकल्प स्थूळ नैश्वर्याचें भान। त्या म्हणती कारण नवल पाहीं॥ महाकारण लिंगदेह शाब्दिकीं धरिला। तो शास्त्रज्ञीं पाहिलां अर्थी साही॥३॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलुचि देहीं। अवस्थातीत पाही तोचि एक॥ निवृत्तिरायें अंजन लेऊनि। पायाळा निजसदन तें विश्व जालें॥४॥

५९१. बोधलिया अंजनासी पायाळू हा काय। निधान जरी आहे परि शब्द नेणें॥ परादिकां वाचां मौन पडिलें जाण। तेथें पायाळाची खुण कोण लेखी॥१॥ सुखाचा संवाद आपण्यामाजी पाही। देहींचा देही विदेह होऊनि ठेला॥२॥ अविकल्पवृत्ति भानु संकल्पें हा नातळे। कर्म तया न मिळे करिजे कोणे॥ बापरखुमादेविवरु कर्ता कर्म न पडे कांहीं दृष्टि। वायांचि भ्रमें बांधलासी दृष्टि रया॥३॥

५९२. पाहातां पाहाणें दृष्टिही वेगळें। तें कैसें आकळे ब्रह्मतेसी॥१॥ पाहातेंचि पाही नाहीं तेंचि काई। गयनिच्या पायीं तूंचि होसी॥२॥ स्वरूपी रमतां हृदयस्थ आपण। तयाचें स्वरूप आदिमध्य॥३॥ बापरखुमादेविवर सगुणीं न माय। निर्गुणीं दिसताहे जनीं रया॥४॥

५९३. श्रुतीं सांगितलें उपनिषदीं अनुवादलें। आम्हा लाधलें निरुतें वर्म। अनुभवे गोविंदु करितां अनुवादु। परब्रह्म अनुवादु तरि तें नव्हे॥१॥ बोलिजे तें नव्हे दाविजे तें नव्हे। गुरुमुखी पाहावें परमानंदीं॥२॥ अरूप परि बरवे दिसें । भीतरी कैसें निववीतुसे। अनुभविया प्रति बोलिजे लक्षण। ज्ञानदेवें खुण सांगितली॥३॥

५९४. निर्गुणाची वार्ता सगुणीं मांडीली। सगुण निर्गुण दोन्ही एकरूपा आली॥१॥ सगुण नव्हे तें निर्गुण नव्हे। गुरुमुखें चोजवे जाणितलें बापा॥२॥ रखुमादेविवरु साकारु निराकारु नव्हे। कांही नहोनि होये तो बाईये वो॥३॥

५९५. प्रकाशें देखिलें त्याहूनि वेगळें। नाहीं तें धरिलें सोहं मार्ग॥१॥ या मार्गापंथीं तूं तुझें नाहीं। बिंब हारपलें तें तत्त्व पाहीं॥२॥ बीजाचा प्रकाश तुझा तूं नेणसी। हारपलें मन हें दाही दिशी रया॥३॥ पुराणप्रसिद्ध निवृत्ति लाधलें। गुरुमुखें लक्षीं चोजवलें रया॥४॥

५९६. आलाडु आडु पालाडु आडु मध्यें वाहे पाणी। तिही संधी खेळु मांडिला सितादेवि राणी॥१॥ सुखाति चांदिणें राती। बहुतें खेळती येकु देखे॥२॥ खेळतां खेळतां नवल पाहे देखणा खीर खाये। सांपडे ते कोण्हा न संगे भोग्या शिवोन राहे॥३॥ भोगिया सिवोन उतरला डायीं। ज्ञानदेव सांगे निवृत्तीच्या पायीं॥४॥

५९७. एक पाहातां दुजें गेलें। शेखीं पाहातां सर्व शून्य जालें॥१॥ पाहातां तयाचा विचारु। निवृत्ति जाणे तो श्रीगुरु॥२॥ एक मूळ एक आदि। शून्य मांडिली उपाधी॥३। निवृत्ति दासाचें बोलणें। जाणे मीपणा उमाणें॥४॥

## ज्ञानपर

### आपल्या स्थिती संबंधानें जनाशीं उद्गार

५९८. एकत्व बाही उतरला भक्त। द्वैतद्वेषा विरक्त पाहोनि ठेली॥१॥ द्वैताची काजळी क्रोधु दशा पाजळी। नाहीं ते उजळी तमदृष्टी॥२॥ जंववरी कामना आसक्ती मोहो। तंववरी ग्रहो कल्पनेचा॥३॥ ज्ञानदेवा चित्तीं आनंदमय हरी। द्वैताची कामारी नाईके कानीं॥४॥

५९९. आत्मरूपीं रूप रंगलें सहज। रिगोनि निजगुज सतेजीलें॥१॥ तेज बीज बिवडा पेरिलेंनि वाडें। उगवलें चोखडें ब्रह्मरूप॥२॥ शांतिची गोफण उडविला प्रपंच। धारणा आहाच स्थिर केली॥३॥ वेटाळिलें धान्य खळे दान दिठी। दिधलें शेवटीं भोक्तियासी॥४॥ देते घेते जीवें नुरेचि शेखीं। शिवमेव खोपी समरसीं॥५॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्ति उदारा। ऐसा एकसरा तुष्टलासी॥६॥

६००. आदि मध्य आंत टाकोनि अवसान। करूं हरिध्यान सोहंभावें॥१॥ दिवसा कामान रात्रीचा बडिवारु। हरिसपरिवारु हरि आम्हां॥२॥ जातीची विजाती नाहीं पैं कुळधर्म। कुळींचा कुळधर्म हरी आम्हां॥३॥ ज्ञानदेव सांगे वेदशास्त्र थोर। सांगतसे विचार आम्हां तुम्हां॥४॥

६०१. अवघ्या बाहीं म्यां व्योम कवळिलें। अवघां हृदयीं अरूप धरिलें॥१॥ अवघेपणें मी त्याचीच जालें। तेंचि पावलें तदाकारें॥२॥ कांहीं नहोनियां कांहीं एक जाले। अवघाचि शोशिला ब्रह्मरसु॥३॥ रखुमादेविवरु अवघाचि धरिला। अवघाचि गिळिला अवघेपणें॥४॥

६०२. तनु चोरिली कोठें मी पाहों । भूक लागली काय मी खावों॥१॥ पाहणें नाहीं काय पाहों। ध्यान नाहीं काय ध्यावों॥२॥ भिंत नाहीं काय चित्र लिहों। चित्र सरलिया तया नाहीं ठावो जी देवा॥३॥ निवृत्तिदास म्हणे कैसें हो काई। रखुमादेविवरा विठ्ठला ध्यायीं॥४॥

६०३. तुडतालेवांचूनि अवस्था काईसी। दुजे तरी बोलों कवणासिगे माये॥१॥ अनुमानालागीं नुरिजे उरी। सांगतां लोकाचारी लाजिजे॥२॥ अबोलणेंसी बोलणें विनोदें। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला गुणनिधी॥३॥

६०४. मन सुमन घालूनि माळा। करूनि सकळा कळा गळां पूर्ण वो माये॥१॥ आउट पिठींची दुरुगिळी घातली। तेथें दोघें पुजे बैसविले पुजे वो माये॥२॥ तेथें अद्वैत अंगारु परोपरी वासु। करूनियां सायासु वैराग्य ज्ञाने वो माये॥३॥ ऐसा हृदयमंदिरीं दुर्गादेवीअंतरीं। रखुमादेविवरु निर्धारी वो माये॥४॥

६०५. दुधावरिली साय निवडुनि दिधली। तैसी परी जाली आम्हां तुम्हां॥१॥ धालों मी ब्रह्में उद्गार सब्रह्में। अनुदिनीं प्रेमें डुल्लतसे॥२॥ नाठवे आशा देहावरी उदास। मीतूंपण भाष चोजवेना॥३॥ रखुमादेविवर विठ्ठलीं मुरोनि राहिला। तो आनंदु देखिला संतजनीं॥४॥

६०६. जगासि गौसणी ब्रह्मरूपें देखिली। ते मी अंतरीं पांगुरली अंतरामाजि॥१॥ अंतरींचे सुख अंतरीं निमालें। अंतर बैसविलें ब्रह्मपदीं॥२॥ बापरखुमादेविवर ब्रह्मपदीं देखिला। मजमाजी सामावला अद्वैतपणें॥३॥

६०७. आर्धीच तू ज्ञान वरी जालें। उन्मन हरि हें जीवन हृदयीं आलें॥१॥ स्थिरावलें ध्यान ज्ञानाचीये वृत्ति। विज्ञानसंपत्ति साधलिया॥२॥ अंधकारपट नासला समतेज। रामरूपी पैज दीपज्ञान॥३॥ संत शांतशांति उलथिचा ठसा। कृष्णरूपीं दिशा तेजो तेज॥४॥ अलक्ष लक्षिते अगोचर पर। तेथेंही गव्हर संचलें॥५॥ ज्ञानदेव सुखी जालीसे विश्रांति। परमानंद चित्तीं निरंतर॥६॥

६०८. करीं वो अद्वैत माला केले इसन्यो सहिंवर। सिद्धपुरासि गयो। वोलु नाहीं तया दादुला भवसागरीं न सरत कीयो॥१॥ माह्या वऱ्हाडिणी नवजणी सांगातिणी सवें बारा सोळा। अनुहात तुरे वाजोनि गगनीं जगीं जया सोहळा। मान्हा पतीपर्यंत त्याले देखि वो जग जाया आंथला॥२॥ बाप दिन्हो ज्या घरीं त्या लेवो नाहीं। जाति ना कुळ त्यान्हा पालऊ धरि गयो तंव तो सूक्ष्म ना स्थूळ॥३॥ बिहति बिहति मी गये तंव त्यान्हे माले धरे वो हाती। पाठिमोरा वरु वोलख्या त्याने मी बैसे पाठी॥४॥ निरंजनीं मंडप ध्याल्यावो। लग्नविण जाया पाणिग्रहण ब्रह्माक्षरीं। बोलीनें तंव त्यान्हे नेत्रीं दिन्हीं वो खुण॥५॥ पांचजणी सावधान म्हणीयावो। आशा सवती अडधरी। जननिककरंडिये देहे समाविन त्यान्हे माल दिन्हे चिर॥६॥ त्याचि सखिया मान्हीया येरि वों चौघीजन्हे। मिले सुमले येकी करोलीले। जासो यापरी चालविजे सुघरवासु॥७॥ जान्हे सेजे मी पहुडणे तंव तो नपुंसकू वो। जया इंद्रियांविण जान्हा विस्तारु तो पुरुष जगी कैसा वो जाया॥८॥ सोहं वो घरदारीं नांदतां बोला धन्यो

येक पुत नाराज तोही योगिया चालवा व्याईसने मिवो जाया वांझ ॥ ९ ॥ पांच तान्ही वो पांच पारिठि पांच वो सत्य मान्हा पोटीं। अझुणी मी करणकुमारी वो परपुरुवेंसी नाहीं जाया भेटी ॥ १० ॥ मज चौघे दीर भावे राखती चौघी वो नणंदा आटिती। तेणें लागलें मज पिसें। बाईये वो तत्त्वमसी डोळां लेती ॥ ११ ॥ ज्यानें माझें मन सुखी जाया निरालंबीं निरंतरी। राणे रखुमाई भ्रतार श्रीकृष्ण तो म्या दिठी ठो अंतरीं ॥ १२ ॥ दशदिशा दाही जाण दस वो अकरावें मन। बारा सोळा मान्हा सखिया वेचिवोनी निजसजन ॥ १३ ॥ करिं वो कांकण शिरीं बासिंग दाखडाव्या पंढरपुरासि गयो। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु त्यांणें चरणीं समरस गयो ॥ १४ ॥

६०९. मी माझें मोहित राहिलें निवांत। एकरूप तत्व देखिलेंगे माय ॥ १ ॥ द्वैताच्या गोष्टी हरपल्या शेवटीं विश्वरूपें मिठि देतु हरी ॥ २ ॥ छाया माया काया हरिरूपीं ठाया। चिंतीता विलया एक तेजीं ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवा पाहा ओहंसोहंभावा। हरिरूपीं दुहा सर्वकाळ ॥ ४ ॥

६१०. आत्मतेजें तेज रवि तेज बिंबे। जीवशिवी बिंबे ज्ञान तेजें ॥ १ ॥ तैसें तुज ज्ञान जालेंरे हें काज ॥ केशवीं विराज चित्त झालें ॥ २ ॥ समाधिचें रूप रूपासि आलें काह्या। पसरुनी बाह्या देता क्षेम ॥ ३ ॥ प्रवृत्ति निवृत्ति दोहींची तटाक। उतरालासि एक सिंधोदक ॥ ४ ॥ क्षीर नीर हरि जाला असे स्वादु। अवघाचि गोविंद नाना देहीं ॥ ५ ॥ निवृत्तिसंपत्ति आलिया पैं हाता। तत्वीं तत्व निमथा उलथा तूं ॥ ६ ॥

६११. प्रथम नमूं तो गुरुदेवो। जेथें निमाले भावाभावो। अनादि स्वरूप स्वयमेवो। तो आदि देवो नमियेला ॥ १ ॥ जे हें मनाचें पैं मूळ। जेथे द्वैताचा दुष्काळ। स्वरूपीं स्वरूप केवळ। तो अढळ नमियेला ॥ २ ॥ हें जग जेणेंसि संचलें। परी कोठें नाहीं नाडलें। जेविं हालिया अंतराळें। तैसा सर्व मेळे असतांही ॥ ३ ॥ ऐसा सर्वांअतीत। परी ऐसा हा जगभरी होत। कनक कांकणीं रहात। तैसा अविकृती निरंतर ॥ ४ ॥ जो मनबुद्धि अगोचर। तोचि झाला चराचर। हा आत्मसुखाचा विचार। आपविस्तार केला जेणें ॥ ५ ॥ तो जाणावा ज्ञप्तिरूप। निवृत्तिनाथाचें स्वरूप। एकदंत नामें ज्ञानदीप। बोध स्वरूप ज्ञान देवा ॥ ६ ॥

६१२. मी तूं प्रवृत्तिसी आलें। समग्र गिळिलें वासनेसी ॥ १ ॥ नाहीं त्यासि मेरु कैसा विवेकु। जनवन लोकु ब्रह्म दिसे ॥ २ ॥ उजडली शांति मावळली निशी। अवघा ब्रह्मरसीं पाजळलें ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवा चित्तीं क्षमाचि उपजली। प्रवृत्ति सामावली निवृत्ति रया ॥ ४ ॥

६१३. दुरि ना जवळी त्रिभुवनमंडळी। ते मनाचा मुळीं बैसलेंसे ॥ १ ॥ पाहतां न दिसे भानुप्रकाशें। येऱ्हवी तें असे मशकिं रया ॥ २ ॥ बोलों जातां येणें जिव्हाचि खादली। पाहातां पाहातां नेली चर्मदृष्टी ॥ ३ ॥ दांतेविण जेणें स्थूळदेह खादले। शस्त्रेविण छेदिले लिंगदेह ॥ ४ ॥ त्वंपदिं सिद्ध निवृत्ति लाधलें। गुरुलक्षीं लक्ष हारपलें ॥ ५ ॥ निवृत्तिदासा तुम्ही बहुत न बोला। रखुमादेविवरा ध्याइजेसु उगला ॥ ६ ॥

६१४. अधीक देखणें तरी निरंजन पाहाणें। योगराज विनवणें मना आलें वो माये ॥ १ ॥ देहबळी देउनि साधिलें म्यां साधनीं। यानें समाधान मज जोडलें वो माये ॥ २ ॥ अनंगपण फिटलें मायाछंदा सांठवलें। सकळ देखिलें आत्मस्वरूप वो माये ॥ ३ ॥ चंदन जे जेविं भरला अश्वत्थ फुलला। तैसा म्यां देखिला निराकार वो माये ॥ ४ ॥ पुरे पुरे आतां प्रपंचा पाहाणें । निजानंदीं राहणें स्वरूपीं वो माये ॥ ५ ॥ ऐसा सागरु। रखुमादेविवरु। विठ्ठलु निर्धारु। म्यां देखिला वो माये ॥ ६ ॥

६१५. पंधरयाची खाणी अनर्घ्यरत्नाचें पाणी। तें निरंजनीं वनीं शोभतसे वो माय ॥ १ ॥ गुणांची लावणी लाविली गगनीं। निरंजनीं निर्गुणीं आथिले वो माय ॥ २ ॥ पूर्णानंद सच्चिदानंदकंदु तो

निरंजनीं स्वादु आळवीतो माय॥३॥ लक्ष कोटी एकला अनंतगुणी जाहाला। तो अंगें अंगवला निजस्वरूपीं वो माय॥४॥ ब्रह्मरसें भरला दाहीं दिशा व्यापिला। आनंदु सच्चिदानंदी वोसंडला वो माय॥५॥ ऐसा सुखसंवादु सागर भरला। रखुमादेविवरा विठ्ठला वो माय॥६॥

६१६. पुरे पुरे वो आतां जिणे निमालें। मज निरंजनी आफाविले गोंवळें वो माय॥१॥ आणिकाची चाड न लावावो मातें। एकल्या अनंतें मज बरवें केलें वो माय॥२॥ तें परदीपीं उसळलें अंधारें फेडिलें। कोडे कवतिकें जोडलें स्वरूप वो माय॥३॥ आतां मी वेगळावलें पांचाहुनी जाहालें। परब्रह्म जोडलें किरु वो माय॥४॥ ऐसा जगजीवनु जोगावला जगमूर्ति देखिला। तो जगदेश्वरु फळला निरंजनी वो माय॥५॥ भुक्तीभरीं निडारला निजानंदु घनावला। रखुमादेविवरु स्थिरावला हृदयीं वो माय॥६॥

६१७. ठसावलीं देहीं परब्रह्म मूर्ति। सोहं शब्दीं गती प्राप्त जालीवो माय॥१॥ सहजीं सहज स्थिति। जाली वो माये॥२॥ विरालीं अष्टांगे देखोनि गोमटें। पाहातां प्रेम फुटें पातीं श्रमती वो माय॥३॥ अष्टभुजांचिया रिघालीये खेवा। तंव विश्वाचा बाहूवा देखिला वो माय॥४॥ नसमाय लेववितां लेविविजे कैसेनि। निरंजन अंजनीं लेईजे वो माय॥५॥ हे भुली सांडूनि भुलवी परमबोध बोधवी। तोहा रखुमादेविवरु विठ्ठल वो माय॥६॥

६१८. अमित सूर्य प्रकाशले तेज उदयो जाहाले। ज्ञानज्योति फांकले दुणावोनि वो माय॥१॥ दामोदर नामें मना बांधिलें दावें। निरंजन म्हणावे आपणा वो माय॥२॥ गुणचि नाहीं त्यासी काय लाऊं गुण। अतीत निरंजन देखिला वो माय॥३॥ डोळा जरी पाहीं तरि वो डोळियासि आरुवारु। सेऊं म्हणो तरि पारु न कळे खेवोवो माय॥४॥ आतां असे हव्यासु लागला निजध्यासु। निरंजनीं सौरसु करीतसे वो माय॥५॥ आतां आहे तैसा असो माझ्या हृदयींच वसो। हा रखुमादेविवरु विठ्ठलु वो माय॥६॥

६१९. थोकलें याच्या गुणीं तनुमनासहित। त्या निजतत्त्वीं प्रीत निमालें वो माय॥१॥ साहीं संवादले चौघे अनुवादले। पुरोनि उरलें म्या देखिलें वो माय॥२॥ कापुराची भांडुली परिमळें भरली। दीपीं उजळी रूप नासले वो माय॥३॥ तेथें नाहीं ल्याया रूप ना छाया। ऐसी ज्योती कर्पूराची उजळल्या वो माय॥४॥ तेथें नाहीं उरवणी एकला एकपणीं। देखतांचि नयनी उमळला वो माय॥५॥ ऐसी जाली प्राप्ती खुंटली मागिल गती। रखुमादेवीपती जोडला वो माय॥६॥

६२०. ठकपरी धरिला मनोवेगें बांधला। तो ठेंगणाचि जाहाला अनिवाड वो माय॥१॥ समाधी ध्यान निजध्यासिं आरुढलें। तंव अवघेंचि पारुषलें अभाव वो माय॥२॥ हा असो जैसा तैसा हृदयमंदिरीं ऐसा। परपुरुषीं अपैसा अनुसरलें वो माय॥३॥ बरवा देखोनि न्याहाळीं दिव्य कांति झळाळी। परब्रह्मीं दिवाळी चहूंदिशांची वो माय॥४॥ त्यानें निवाला मनु भेटला जगजिवनु। तो आनंद सुख गहनु उचंबळे वो माय॥५॥ हा निरालंब वोळवा भक्ति भावें मिळाला। रखुमादेवी दादुला विठ्ठल राणा वो माय॥६॥

६२१. पाहातां सप्त पाताळें एकविसांवेगळें। तें निरंजन आगळें खुतलें डोळांगे माय॥१॥ पांवा वाहे तळालोरी नादु उमटे अंबरीं। तया सुखसागरीं बुडालें वो माय॥२॥ सुखसंवादु लागला जिवनी जिवनु भेटला। भेटीं देऊनि गुंतला मनोमंदिरीं वो माय॥३॥ आतां न सोडी न राहे आणिकु न पाहे। तंव हाचि लवलाहे मिळाला वो माय॥४॥ आवडी रिघालें घर आपुलें। सहजीं सामावलें स्वरूपीं वो माय॥५॥ वैराग्य-भक्तिज्ञानाची माउली। ते रखुमादेविवरविठ्ठली भेटलीं वो माय॥६॥

६२२. जनीं वनी हरी आहे निरंतरी। बोलिलीं

वैखरीं व्यासमुखें॥१॥ जगजीवईश्वर क्षरला चराचर। लक्षालक्ष पार अलिप्तपणें॥२॥ चहूं देहां ग्रासी व्याला तत्वें तत्वेसी। हरि वैराटेसी एक वृक्ष॥३॥ ज्ञानदेवो म्हणे वृक्षही वृक्ष न होणें। असोनि नसणें सुमनीं जैसें॥४॥

६२३. संसारसातें आलों मी पाहुणा। दिसे दोन्ही आनंदा पाहवायासी॥१॥ तव त्याचे तेजें झडपिलें मज। मजमाजि काज होऊनि ठेलें॥२॥ चित्त जव निवडी तव आपणहि पळे। अवचितें जवळ येतु असे॥३॥ जाऊं पाहे परता तव नेतु असे पंथा। वैकुंठींच्या कथा आपण सांगे॥४॥ एकरूप दिसे तव सभोंवता आपण। अवघा नारायण अवघा नारायण ज्ञानदेवा॥५॥

६२४. आदिमध्यअंत तुजमाजि बिंबे। ब्रह्मीं ब्रह्म थांबे लवण जळीं॥१॥ तैसें झालें ज्ञाना उन्मनी उलथा। प्रपंच चळथा उडालिया॥२॥ रिगु निगु काज जालें तुझें घर। अवघाचि संसार कळला आम्हां॥३॥ गोप्य गुजराज उमजलासे हरि। दिसे अभ्यंतरीं आत्माराम॥४॥ न दिससि ज्ञाना देहीं तुझ्या राम। घेतला विश्राम ऐसे दिसे॥५॥ निवृत्ति निवांत समरसें पाहात। अवघाचि दीसत देहीं विदेही॥६॥

६२५. सुखीं सुख मुरे तेथें कोण झूरे। जळी लवण विरे तैंसे जालें॥१॥ ज्ञान ते विज्ञान प्रंपचेंसि भान। तेजोरूप गगन बिंबलें दिसे॥२॥ आत्मा आत्मरूप परमात्मा समीप। कोटि कोटिरूप एकलेंचि दिसें॥३॥ नाना तेजी भासे प्रपंचप्रकाशे। विरुळा समरमें ध्याये त्यासी॥४॥ ऐसे जालें तुज प्रगटलें निज। कासवीचें बीज अंकुरलें॥५॥ निवृत्ति निजबोध आनंदादि कंद। शाखाद्रुमभेद हरि जाला॥६॥

६२६. सुवेळेची शेज आवेळे घातली। निवृत्ति मोहिली निसंदेह॥१॥ मोह न खुंटलें ममते तुटलें। एकरसी भरलें तत्वीं तत्व॥२॥ प्रपंचाचे घरीं दिसतें कारण। अवघे निराकारण तत्वीं तत्वमय॥३॥ बापरखुमादेविवर त्रिपुटीं न दिसें। रसीं सर भासे हृदय दीपीं॥४॥

६२७. जुगादीचें जुग युगादिचें युग। लक्षा आदिलक्ष मावळलें गे माये॥१॥ मावळल्यावीण भ्रांति जाल्या कोण्ही। निजब्रह्माची खाणीं ठायीं न पडेगे माये॥२॥ रखुमादेवीवर निघोनि घेतला। निर्गुणचि जाला तयासहितगे माये॥३॥

६२८. आत्मा आंगे प्रसिद्ध देखिला। अंतर्बाह्य अलिप्त व्यापला॥१॥ देखिजेसें नाहीं देखिला म्हणती काई। देखणें तें देहीं देखतुसे॥२॥ रूपरेखा नाहीं लक्षावा कवणें ठायीं। लक्षीं लक्षितांही परतल्या दृष्टी॥३॥ ज्ञानदेव म्हणें आनंद होईल पूर्ण। अनुभवें तेचि खुण देखतसे॥४॥

६२९. गगन डोळां भासलें तें वाहाटुळीनें कवळिलें। तेथें काहीं एक उगवलें रूप अरूप वो माये॥१॥ पूर्ण पीठिका टाकुनी मायास्तंभ उभउनी। निजानंदी माळ घालुनी तंव तो वरिला वो माये॥२॥ हा कामीं कामरंजनु गुणहि निर्गुण। पाहातां परिपूर्ण तरी तो सहज वो माये॥३॥ हा पुरोनि उरला नयनीं वोसंडला। बापरखुमादेविवरा विठ्ठला तरि तो वरिला वो माये॥४॥

६३०. चहूंदारवंटा वोलांडुनि वोजा। अंतरीं आत्मकाजा बोधिलें वो माय॥१॥ आनंदाचे चक्षु उघडी पातीं। शब्दा नि:शब्दां अतीति मी जाहालिये वो माये॥२॥ पांगुळें इंद्रियेग्रामु संवादे आत्मरामु। तो ईश्वरु पूर्णकामु मज भेटवा वो माय॥३॥ तेथें गोरस जालालें ज्ञाना अंतरीं वोजावलें। सदेवपण आलें मज वो माय॥४॥ पाहतां ठेंगणे डोळे न्याहाळितां आगळें। ते पदप्राप्तीवेगळें सगुणनिर्गुण वो माय॥५॥ ऐसा हा दिपीं दीपपरनायकू। रखुमादेववरु एकु जोडला वो माय॥६॥

६३१. गगन डोळां भासलें। तें बाहुलिनें कवळिलें। कांही एक उरलें रूप अरूपीं वो माय॥१॥ पूर्वपिठिका सांडूनि मायास्तंभ

उलंघुनी। निजानंदी माळ घालूनि म्यां वरिलें वो माये॥२॥ तो कामिक कामिनी निरंजन निर्गुण निर्गुणी। पाहातां पूर्णापूर्ण सहज वो माय॥३॥ हा भरोनियां पुरला नयनीं वोसंडला। रखुमादेवीवरू विठ्ठला मिळाली वो माये॥४॥

६३२. नव्हे त्याची दुराश म्यां सांडिली वो आस। ज्ञानवैराग्यभक्तिसार वोळला वो माय॥१॥ संभोगवोवरीं होतिये निदसुरी। योगिणी खेचरी मज जागविलें वो माय॥२॥ ऐसा हा योगिराजु तो विठ्ठल मज उजू। बापरखमादेविवर देऊं ठेलें वो माय॥३॥

६३३. दृष्टीचें गुज संच्चिदानंद सहज। तें चक्षूच्या अंतर निज निरोपिलें वो माये॥१॥ अनुवादु खुंटला एकपणें एकला। संबंधु तुटला मागिलाचा वो माय॥२॥ पुरती दृष्टी पूर्ण ब्रह्मींच भासली। त्या सुखा दोंदुलीं वाढलीवो माय॥३॥ अवलोकितां न अवलोकवे बोलिजे तैसा नव्हे। हा रखुमादेविवरु भावें माथिला वो माय॥४॥

६३४. ब्रह्मपदाची प्राप्ति उमगेल दृष्टी। परम चैतन्यांचे पोटीं विश्वंभरु वो माय॥१॥ अवघाचि देखिला अवघा मालवला। देखोनि निवाला जीवगे माय॥२॥ कापुराची पुतळी कर्पुरदीपु पाजळी। तैसी मी त्याच्या मेळीं जाहाले वो माय ॥३॥ तेथें रूप ना छाया त्रिगुण ना माया। रखुमादेविवराचिया उपाये वो माय।

६३५. अंजनी अंजन साधिलें निधान। द्वैताद्वैतघन विज्ञानेसी॥१॥ सारिलेसें द्वैत अद्वैत सफळ। निर्गुण निर्मळ निवळलें॥२॥ साध्य साधक वस्तु आलिया पैं हातां। मुरडोनि पाहतां वस्तुमय॥३॥ ज्ञानदेवीं साध्य अज वस्तुचें। देहीं देह साचें नुरे तरी॥४॥

६३६. न चुकतां चुकलें। संसार वाटे भांबावलें। अवचितें पडले ज्ञानपेठे वो माय॥१॥ माझा निवृत्ति तूं सारा लाधला विकरा। गिन्हाइक पुरा विठ्ठल गे माय॥२॥ कांहीं नाहीं उरले प्रेम वो माय॥३॥ हा पुरोनिया उरला निजानंदु सांवळा। रखुमादेविवरु जोडला कष्टीं वो माय॥४॥

६३७. न गणवे परिमाणें न बोलवे अनुमानें। तो सहज निर्वाणी ज्ञानें फळला वो माय॥१॥ मुक्ताची साउली मजवरी पडली। ढेसी ढेसी वोल्हावली अमूर्तधारी वो माय॥२॥ तेथें एक नवल वर्तलें वो साजणी। सांगतां मिठी मौनी पडली वो माय॥३॥ ऐसा परोपरी फळला दिव्यरूपें फावला। तो रखुमादेविवरु जोडला वो माय॥४॥

६३८. ज्ञानाचें गरोदर वाढलें परपुरुषें व्यभिचारिणी ऐसें म्हणती लोक वो माय॥१॥ नव्हे व्यभिचारिणी नाहीं मज कोणी। पाहतां निर्वाणी सहज जोडलें वो माय॥२॥ निवृत्ति पुराडला देहेभाव चोखाळला। अंगेंसि मर्दिला ब्रह्मरसु वो माय॥३॥ आतां उजरणी येई भ्रांती नलगे माझ्या चित्तीं। उजरणी सहजगती जाली वो माय॥४॥ आतां असो हें बोलणें दुर्जना हें सांगणें। चिदानंदघन तेणें वाढलें वो माय ॥५॥ ऐसा देखणिया देखिला निजगुप्त प्रकाशला। तो रखुमादेविवरु मज फावला वो माय॥६॥

६३९. आपला गुणग्राम सांडूनियां गेलिये। निवांत राहिलिये निर्गुणी वो माय॥१॥ परोपरी पहातां सर्वरूपीं गोपाळ। तो मजपासीं परी खेळ न लगतां वो माय॥२॥ अनुवाद खुंटला सर्वांगें भेटला। गुणग्राम तुटला सहज वो माय॥३॥ ऐसें म्यां रूप आपुलें आपणचि केलें। रखुमादेवीवरे विठ्ठलें वो माय॥४॥

६४०. पुरे जरी म्हणों तरी अमित पुरला। पुरोनिया उरला तेज:पुंज वो माय॥१॥ ज्ञानाचे खाणीं माणिके निर्वाणी लाधले मी निर्गुणी निरालंब वो माय॥२॥ आत्मत्वाचिया परी खेवणिलीं भूषणें। तें मी आवडीचें लेणें लेइलें वो माय॥३॥ हा सुजडु जडला विटेसि लाधला। त्या रखुमादेविवरा विठ्ठला मी न्याहाळी वो माय॥४॥

६४१. जाणोनि नेणपण अंगीं बाणले। नेणोनियां जाणपण सहज नेणवलें वो माय॥१॥ आत्मज्ञानाची गति जाली वो निवांत। प्रबोधतत्व मी पावलें वो माय॥२॥ पाचारिलें अवस्था स्वभावें जाहल्या। म्हणोनि विसरल्या देहभाव माय॥३॥ गुरुमुखें जै जोडे तें फिटे सांकडे। रखुमादेविवर कोडें कवतिके वो माय॥४॥

६४२. अंजनी संपूर्ण ठेऊनियां जन। ज्ञानी ज्ञानघन निरालंबीं॥१॥ आदि मध्य आंतु दिसोनियां दिसे। पाठीं पोटीं दिसे निघोट रया॥२॥ श्रवणनयन जातिगोतपूर्ण। जीवशिवा खुण आसपणें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणें वाच्य वाचक योगें। हरिविण वाउगें नाहीं रया॥४॥

६४३. ज्ञानध्यानपटीं तंतु पैं मनाचा। हरिरूप वाचा सारीपाट॥१॥ स्वरूपकामारी वाग्पुष्पें चारी। विरळा मापारि जाणें खुण॥२॥ त्रिगुण सवडी घालुनि उलथी। एकरूपपंक्तिजेवि नरु॥३॥ ज्ञानदेवा घर तत्वता निर्गुण। परेचें संपूर्ण घर केलें॥४॥

६४४. मृत्युचेनि मापें जे जे गेले प्राणी। तयाची शिराणी यम करी॥१॥ यम नेम धर्म आम्हां नाहीं कर्म। अवघेंचि ब्रह्म होउनि ठेलों॥२॥ द्वैतभाव ठेला अविनाश संपन्न आपेंआप जनार्दन येईल घरा॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे काज सरलें संसारी। चारीही मापारी गिळूनि ठेलों॥४॥

६४५. स्वरूपी पाहातां लक्षलिही घेतां। अरुप अनंता गुणी नाहीं॥१॥ कैसेनि स्वरूप प्रकाश पैं दीप। एकीं एका सोप आकळे कैसें॥२॥ नाहीं या आधार आधारासि निर्धार। परेसि परे पार परमतत्व॥३॥ ज्ञानदेवघरीं पश्यंती वोवरी। वेदश्रुती घरीं दीप केले॥४॥

६४६. लवण पवन जळापासाव धीर। पावन समीर रवी तया॥१॥ तेज दीप्तीं आत्मा इंद्रिया प्रकाशी। अमरसुनी ग्रासी दिव्य तेज॥२॥ पंचक दशकत्वता विचारी। एकरूपें सरी ग्रास त्याचा॥३॥ ज्ञानदेवा जप हरि आत्मा माझा। चिंततां नलजाये तूं वेगीं॥४॥

६४७. सायुज्य सदन श्यामाचिये घरीं। हृदयकल्हारीं श्यामतनु॥१॥ सचेत अचेत नित्यता विरक्त। असोनि अलिप्त जन्ममरणा॥२॥ नारायण साध्य साधक साधिता। विग्रह पूर्णता आंगी लागे॥३॥ ज्ञानदेवी मौनीं गुणग्रास धाम। सर्वत्र आराम हरी माझा॥४॥

६४८. मोहाचें मोहाळ सांगितलें एकीं। पाहतां परिपाकीं मोहाळ नाहीं॥१॥ मोहिलेची दिसे मोहामाजी रसें। नसोनियां भासे तदात्मक॥२॥ बिजीं बिज हरि दिसोनि अविट। विटोनीयां नीट कळिका फाकें॥३॥ बापरखुमादेविवरा आबोला सवळे। अवघेचि निवळे गुरुकृपा॥४॥

६४९. एकि म्हणे ग्रह दुजी म्हणे मोहे। एकीनें सोहं सांगीतलें॥१॥ कोहं वाचे वारी सोहं ममतें सारी। वैकुंठीची दरी उघडली॥२॥ ककार भेदीला मकार शोधीला। ओंकार निमाला तये स्थानीं॥३॥ ज्ञानदेवीं ओहं सोहं गिळिलें पैं कोहं। नाहीं आम्हां मोह कल्पनेचा॥४॥

६५०. दुजेपणीचा भावो आम्हां नाहीं ठावो। सर्वी सर्व देवो आकारला॥१॥ कैसें याचें करणें सांग आम्हां माय। कामधेनु होय कल्पनेची॥२॥ नित्यसुखवेधें वेधली कामना। कृष्णीं कृष्णनयना एक तेजें॥३॥ निर्वृत्ति साचार ज्ञानदेवीं आचार। कृष्णचि परिवार क्षरलासे॥४॥

६५१. अवघेनि मनें दोहीलिया धेनु। प्राणापानीं प्राणु जीवविला॥१॥ तें रूप परब्रह्म प्राणे प्राण सम। करुनियां नेम जपों आम्ही॥२॥ नेणो धूर्ति मूर्ति कैची हे प्रवृत्ति। कृष्णेंचि समाप्ति सर्व करूं॥३॥ निवृत्तिचें तारूं कृष्णीं कृष्णसुख। ज्ञानदेवा चोख दिधलें नाम॥४॥

६५२. निर्गुणाची छाया सगुणीं बिंबली। तत्वीं तत्त्वे गेली अनुठाया॥१॥ निश्चळीं निश्चळ नलगे आळुमाळ। तत्वता अढळ तें वेगळेची॥२॥ नातळतां

पंथी शब्दाचा सुहावा। परेसहित दोहावा भरला दिसे॥३॥ ज्ञानदेवी रम्य दिसोनि न दिसे। निराकारी भासे तदाकारें॥४॥

६५३. दिपाचेनि तेजें पैस घेती माया। जाय सांगावया द्वैतभावो॥१॥ द्वैत नाहीं अद्वैत नाहीं। ठाईंचा ठायीं एकतत्व॥२॥ तैसे रसमय तेज स्नेहार्णव बीज। छाया मोहबीज अकळ दिसे॥३॥ बापरखुमादोविवरु वोतली पैं कळा। न दिसोनि सोंविळा दिस दिसो॥४॥

६५४. सगुणीच्या रातीं निर्गुण दिवटा। सांगती चोहटा वाग्पंथें॥१॥ वागेश्वर हरि वाचेचा वाचक। आधीचाही अर्क दीपतेजें॥२॥ साकारीं निराकार बिंबीं बिंबाकार। अवघे माजघर बिंबलेंसे॥३॥ बापरखुमादेवीवरु ॐतत्सदाकार। निवृत्ति निर्धार माजीवटा॥४॥

६५५. सामता वसोनी मायेसी पर । विज्ञान हें घर जीवी वसे॥१॥ ज्ञानीं वसोनि ज्ञानी न दिसे। बिंबी बिंब रसें समता शांति॥२॥ आपी आपरस जनवनदारा। विज्ञान उभारा भावी दीसे॥३॥ बापरखुमादेवीवरु उभारण हरि। दिपु माजघरीं ठेविला असे॥४॥

६५६. वृत्तीचा उच्छेद मना निग्रह। धारण विग्रह तेजतत्वीं॥१॥ बिंबामाजि बिंब हरपलें स्वयंभ। मायेचा पैं लोभ अरता जाला॥२॥ नाहीं तेथें छाया मायेचा विलास। घरभरीं पैस दीपीं रया॥३॥ बापरखुमादेविवर ज्ञानदेवा धन। वस्तूची विवरण तेजाकारें॥४॥

६५७. ज्योतिस ज्योती मेळउनी हातीं। तव अवचिति झोंबिन्नली॥१॥ अद्वैत पाहतां न दिसे गुणमेळु। गुणा गुणीं अडळु ठाउका नोहे॥२॥ शून्याहि परता आदि अंतु नाहीं। तो असोनियां देहीं धांवो सरे॥३॥ बापरखुमादेवीवरु विसरता धांव। हरिरूपभाव दीपकळा॥४॥

६५८. कापुराची सोय कापुरीची माये। परतोनि घाये नेघे तैसी॥१॥ असोनि नसणें सर्वत्री दिसणें। हरि प्रेम घेणें पुरे आम्हां॥२॥ सुखरूप जीव असतांची शिव। हरपले भाव विज्ञानेंसी॥३॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठल सुखाचा। तरंगुही नांवाचा परतेचिना॥४॥

६५९. आदि मध्य अंत सर्वसम हरि। घटमठचारी भरला दिसे॥१॥ देखिलागे माये अलक्ष लक्षीतां। शांति पक्षवाता समबुद्धि॥२॥ भावबळें धन अलोट अभंग। चित्संगें भंग प्रपंचाचा॥३॥ ज्ञानदेव बोले नित्य नाम प्रेम। तेथेंचि विश्राम हरिचा असे॥४॥

६६०. अंतरींचा विस्तारु ब्रह्मीं पाल्हायिला। तेथें एक मनु सिद्ध साधकु भला॥१ ॥ तेणें केलें अनारिसें केलें अनारिसें। पाहों गेलें सरिसें सार पावलेंगे माये॥२॥ तेथें ऋग्यजुःसाम भुलले। तें माझ्या ठायीं फुलले ब्रह्ममय॥३॥ रखमादेविवर अंतरब्रह्मीं तरंगु जाला। ब्रह्मउदधी सामावला मज घेऊनि माये॥४॥

६६१. निर्गुणाचे हातीं व्यवहारु पडिला। दाईजपणें मुकला साभिलाषे॥१ ॥ निरंजनवनीं धरीन मुरारी। भाग अभ्यंतरीं घेईन देखा॥२॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु सोविळा। भाग मज आला हरिहरु॥३॥

६६२. एकभान गिळुं दुजें द्वैत उगळूं। कासेवी चामे गिळूं सगळा॥१ ॥ पोटभरूं येणें वैकुंठीचें पेणें। सेवासुख जाणे कृष्णसुखीं॥२॥ डोंगर सकळे मायेचे मोकळे। प्रपंचा नाकळे या हेतु॥३॥ ज्ञानदेवा साध्य ज्ञानाचे उपाध्य। येर तत्व बोध्य मुक्त कैचें॥४॥

६६३. ध्यानधारणामंत्र साधन। त्रिकाळीं जपन अजपासिद्धी॥१॥ नटकेचि अटकु ठाईचेंचि निर्गुण। मज कवणें ठाईं घेऊनि गेले॥२॥ देश वाढले देश आटले। चहूंद्वारीं कोंदलें ब्रह्मतेज॥३॥ रखुमादेविवरु अठांगी आगळा। सप्तधातूं वेगळा ब्रह्मउदधि॥४॥

६६४. विश्वाचे आर्त माझे मनीं प्रकाशलें।

अवघेचि जालें देहब्रह्म॥१॥ आवडीचें वालभ माझेनी कोंदाटलें। नवल देखिलें नभाकारगें माये॥२॥ बापरखुमादेविवरु सहज निटु जाला॥ हृदयी नटावला ब्रह्माकारें॥३॥

६६५. अनुभव जाला प्रंपच बुडाला। आपुला आपण देखिला सोहळावो माये॥१ ॥ आपण जाणतां आपण मी जालिये। आपणापैं विसरलिये नेहटीं वो माये॥२॥ आपुला म्हणोनि अवघा आलिंगिला। अवघा देखिला अवघेपणें वो माये॥३॥ ऐसे जाणोनि ठकलें ठकोनियां ठेलें। रखुमादेविवरेविठ्ठलें वो माये॥४॥

६६६. दुजेपणींचा भावो। माझिये ठाउनि जावो। येर सकळिक वावो। म्यां त्यजियेला॥१॥ माझें मी जाणें। अनु कांही नेणें। अनुभविये खुणें संतोषले॥२॥ माझा मीचि श्रोता। माझा मीचि वक्ता। मीचि एकु दाता। त्रिभुवनीं॥३॥ एकल्यानें एकला। अनंतरूपें देखिला। दुजेपणा मुकला। ज्ञानदेवो॥४॥

६६७. योगिया दुर्लभ तो म्यां देखिला साजणी। पाहातां पाहातां मना नपुरे धणी॥१॥ देखिला देखिला माये देवाचा देवो। फिटला संदेहो निमालें दुजेपण॥२॥ अनंतरुपें अनंतवेषें देखिलें म्यां त्यासी। रखुमादेविवरीं खुण बाणली कैसी॥३॥

६६८. नादबिंदकळाज्योति स्वरूपीं विलया जाती। श्रुति नेति नेति म्हणती जेथें॥१॥ नाहीं मज चाड सकळ उपाधी। एका मंगळनिधि वांचूनियां॥२॥ श्रीरामीं रमतां मनु निवडितां नये तनु। सुखश्री सांगतां सिणु हारतु असे॥३॥ पदापिंडा दाटणी रुपानिरुपा निरंजनी। विठ्ठला चरणीं ज्ञानदेवो॥४॥

६६९. अद्वैताची झडपणी ब्रह्मीं निमाली। तन्मय तत्त्वतां ब्रह्मचि मुरालीं॥१ ॥ परतोनि पाहणें परतोनि पहाणें। नाहीं त्या ठाया जाणें रूपेंवीण॥२॥ बापरखुमादेविवरु रूपेंविण देखिला। आटकु टाकला द्वैताकारे रया॥३॥

६७०. पाहातां वटाचा विस्तारू कैसा। शाखा फुटलिया कळिया तैसा॥१॥ सांगा लपणें तें काय जालें। वटीं विस्तार दोही हारपले॥२॥ विशुद्धचक्रीं मेरु हा नेडे। तेथें परदीपीं साहित्य जोडे॥३॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला। मनोमानसी तयां सामावला॥४॥

६७१. जाणों गेल्यें तंव जाणणें राहिलें। पाहो गेलिये तंव तेंचि जालेंगे माये। इंद्रियांसहित चित्त ठकलेंचि ठेलें। मी माझें विसरलें स्वयें भाव॥१॥ ऐकोनि देखोनि मन होय आंधळे। परतोनि मावळे नाहीं तेथें॥२॥ अविद्या निरसली माया तुटली। त्रिगुण साउली तेथें रूप कैचें। चांग विचारीलें विवेकें उगवलें। ज्ञान हारपलें तयामाजी॥३॥ मुकियाचे परी आनंदु भीतरी। अमृत जिव्हारीं गोड लागे। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु जाणे। संत ये खुणें संतोषलें॥४॥

६७२. माझें स्वरूप म्यांचि शृंगारिलें। निर्वाणी म्या केलें लयाकार॥१॥ आपुली सोसे वाढवावया गेलें। तव आपणचि ठेलें आपण्याठायीं॥२॥ सहजगुणाचे निर्गुण वो केलें। माझें म्या पाहिलें मन मावळुनिगे माये॥३॥ तीन चारी मिळोनि येके ठायीं घातलीं। बापरखुमादेविवरा विठ्ठलीं फावलीं॥४॥

६७३. येकी सांगे मातु येकी सांगे रेतु। तो कोण दृष्टांतु सखिये सांगे॥१॥ बाई येक सरें नाहीं पैं दुसरें। निवृत्ति दातारें सांगीतलें॥२॥ पांचांची मिळणी साही चक्रपाणी। दशमाची कहाणी येकादश॥३॥ ज्ञानदेवी सार चौवेदीं पार। येकत्वीं विचार विज्ञानेसी॥४॥

६७४. सुखादिसुख तें जालें अनमीष। पाहाणें तेंचि एक पारुषलें॥१॥ काय सांगु मातु वेगळीच धातु। जिवा हा जिवांतु व्यापुनि ठेला॥२॥ नचले नचले कांही कौटाल कामान। देहींच विंदान रचलेंगे माये॥३॥ बापरखुमादेविवरें विठ्ठलें

निटें। वायांविण विटे मिस केलें॥४॥

६७५. आस्वादु स्वादु ये दोन्ही नाहीं। तेरावें पाही साहवा ठायीं॥१॥ तेथें सातवें पंचाक्षरीं जपणें। संहार होणें तमोरूपें॥२॥ रखुमादेविवरु शुद्धसत्वेंविण। शुद्धबुद्ध मी जाण जालेंगे माये॥३॥

६७६. बारावें वरतें तेरावें हारपलें। चौदावें देखिलें चौपोळां॥१॥ चौघांची भाज मी नहोनियां गेलें॥ तंव अनारिसें महाकारण देखिलें॥२॥ रखुमादेविवरु भूतजाता वेगळें। पराहूनि परतें पर पांगुळलें॥३॥

६७७. कापुराचें भांडे म्यां ब्रह्मरसें भरिलें। प्राणीं निमालें परिमळासहित॥१॥ तेथें परिमळु नाहीं स्वादु पैं नाहीं। सुखदुःख नाहीं कांहीचि नाहीं॥२॥ रखुमादेविवरेंसि ठक पडिलें कांहीच नाहीं। चौघे स्वभावीं बोलताती॥३॥

६७८. पांचांची वाट पांचांसवे गेली। येरासि जाहली देशधडी॥१॥ अकरावें होतें धरूनियां नेलें। बारा तेरा गिळिलें धन माझें॥२॥ रखुमादेविवरु चोळु पैं घोटिला। निधन जाहाला शुद्धपणें॥३॥

६७९. आस पुरऊनि आस पुरवावी। ऐसी भूक मज लागों द्यावी॥१॥ तें अनुपम्य कैसेनी सांगावें। जीवा चोरूनि भोगिजें तें जीवें॥२॥ दृष्टि कीर होय जरि निकें। द्रष्टा हो वेडावे जयाचेनि सुखें॥३॥ ज्ञानदेवो म्हणे करुनियां निकें। विठ्ठल परमात्मा भेटेल या फावेतें॥४॥

६८०. मनाचिये वाती लाउं गेलीये ज्योती। ते अवघीच प्राप्ति ज्योतिरूपें॥१॥ तेथें ब्रह्मगर्भा आलें ब्रह्मगर्भा आलें। लयलक्ष उरलें बाईयावो॥२॥ रखुमादेविवरु अप्रमेय देखिला। तोही इच्छितां हारपला माझ्या ठायीं॥३॥

६८१.अष्टही अंगें नवही व्याकरणें। सप्तही त्वचा भेदोन गेलेगे माये॥१॥ तेथें वेदां वाट न फुटे। वेदां वाट न फूटे। येरासी कैंचे पुरपुढेगे माये॥२॥ रखुमादेविवरु मज फावला। देखोनि वोरसला पर पाहीं॥३॥

६८२. जतनेलागीं जीवन ठेविलें। विश्वरूप हारपलें ज्ञानपंथी॥१॥ माझी दोन्ही सामावली दोन्ही सामावली। निजब्रह्मीं गुंडाळिली मनेंरहित॥२॥ अवघा कोल्हाळ एकनिष्ठ जाला। ब्रह्मरसीं बुडाला निवडेचिना॥३॥ रखुमादेविवर जगाचें जीवन। त्याचेंही मीपण गेलें विठ्ठलनामें॥४॥

६८३. स्मरों कैसेनि विस्मरों कैसेनि। दोहिपरि मज अटी रया॥१॥ पाडु पडिला विषमें ठायीं। देतां घेतां नुरेचि कांही॥२॥ रखुमादेविवरु विठ्ठलु नेणिजेसी। तवं तोचि तयासि आठवी रया॥३॥

६८४. कूटाकूट अंती कूटस्थ पैं जालें। अशेष उरलें त्या वेगळे माये॥१॥ गुणा भ्यालों म्हणौनि निर्गुण पैं जालें। तें निराकार आथिलें माझ्या अंगी॥२॥ बापरखुमादेविवरु अधऊर्ध्व वेगळे। अर्धमातृका सामावलें अशेष परेसहित॥३॥

६८५. एकांतीचें गुज पुसों गेलिये सये। मी माझी नाहीं त्यासि कीजे वो काये॥१॥ ऐसी भेटी निवाडे सांगिजे कोणापुढें। मनासी सांकडें पडिलें रया॥२॥ सुलभ सुकुमारु रूपें मनोहरु। रखुमोदवीवरु परेही परता॥३॥

६८६. चातकेंविण अंतरींच ठसलें। तेथें एक वोळले ब्रह्ममेघ॥१॥ तें जीवन अमृत जीवास जालें। त्याहुनि एक आगळेंगे माये॥२॥ रखुमादेविवरू हातेंवीण स्पर्शलें। चक्षुविण देखिलें निज ब्रह्मगे माये॥३॥

६८७. तें अवघेचि नव्हें नव्हें अवघेचि होय। आवघ्याविण सोय आणिक असे॥१॥ अवघे म्हणिजे तें व्योमाकार दिसे। त्याहुनि परतें असेगे माये॥२॥ रखुमादेविवरु पाहता पाहावया गेले। पर तें पराहूनि देखिलें गे माये॥३॥

६८८. तनुमनुधनें पूजन पैं केलें। आत्मलिंग पूंजिलें बाईये वो॥१॥ तंव निराकार देखिलें निराकार देखिलें। मी पूजन लिंग तिन्हीं हारपलें॥२॥

रखुमादेविवरु निजलिंग विवळलें। आवघी आवघे ठायी सामावलें बाईये वो॥३॥

६८९. सगुणाची शेज निर्गुणाची बाज। सांवळी विराजे कृष्णमूर्ति॥१॥ मन गेलें ध्यानीं कृष्णाचि नयनीं। नित्यता पर्वणी कृष्णसुख॥२॥ हृदयपरिवारीं कृष्ण मनोमंदिरीं। आमुच्या माजघरीं कृष्ण बिंबे॥३॥ निवृत्ति निघोट ज्ञानदेवा वाट। नित्यता वैकुंठ कृष्णसुखें॥४॥

६९०. आहे तें पाही नाहीं ते कांही। ठायीच्या ठायीं हरपलें॥१॥ नाहीं आम्हां काज नाहीं आम्हां चोज। आमुचें निज गोविंदराजा॥२॥ बापरखुमादेवीवरु आनंदसोहळा। ब्रह्मानंदकळा भोगीतसे॥३॥

६९१. निर्गुणाचा पालऊ लागला। लय लक्षीं हारपला देह माझा॥१॥ वायांविण गेलें वायांवीण गेलें। अवघी बुडाले ब्रह्मेंसहित॥२॥ रखुमादेविवरु विठ्ठलु मालाथिला। निजपद पावला जिऊ शिवीं॥३॥

६९२. कोटीची भरोवरी सरोनी गेली शरीरीं। संसाराचि उरी कांही नुरेचिगे माये॥१॥ लक्षाचा लाभ मज घडलागे माय। कवणें उपायें चरण जोडले वो॥२॥ चिंतनीं चिंतिता काय चिंतावें। तें अवघेंचि मनीं रूप गिळावेंगे माये॥३॥ बाप-रखुमादेविवरु देहेंवीण आलंगिला। तो समर्थ माल्हाथिला बाईये वो॥४॥

६९३. मी बोल बोलें तो गेला कवण्या ठायां। हें पुसों आलों लवलह्यां वो। कव्हणि न सांगति मागूं धावें काह्या। आतां लाजिलें ऐशा स्नेहागे माये॥१॥ चला कांवो मज आडोनी। रूप पाहोंद्या कां माझें मजलागुनी। वेडावलें मज देखुनी। शेखीं मी माझें गेलें हारपोनिगे माये॥२॥ मी बोला आंतु कीं बोल मज आंतु। सुखें मुरालें रूप रूपांतुवो। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलासि येकांतु। आतां पुरला अंतु। दुजेपणागे माये॥३॥

६९४. आम्हीं संन्यास घेतला। देहादिकांचा त्याग केला॥१॥ आम्ही संन्यासी संन्यासी। सदा राहों एकांतेंसी॥२॥ चित्तचतुष्टया निरसिलें। अज्ञाना तिळोदक दिधलें॥३॥ ज्ञानाचें विज्ञान आलें हातां॥ आम्हां नाहीं शरीरममता॥४॥ ब्रह्माहमस्मि शुद्धज्ञान। तेथील सांडिला अभिमान॥५॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु हृदयीं। तोचि सबाह्य-अभ्यंतर ठाई असे रया॥६॥

६९५. माझी प्रकृति निष्कृति जालीं। ब्रह्मीं सामावली बाईये वो॥१॥ देहेविण ब्रह्म देखे देहेविण ब्रह्म देखे। तेणें निर्गुण राखे रोखावलें॥२॥ जाणतां म्हणौनि नेणतां पै गेलें। शेखीं आपणातें विसरलें बाईये वो॥३॥ रखुमादेविवरु नेणोनि जाणीतला। जाणपणें निमाला माझ्या ठायी॥४॥

६९६. समर्थ सोयरा बोळावा केला। परि मार्गु गमला सुखाचा बाईये॥१॥ भय आमुचें गेलें न व्हावें तें जालें। तो चोरुचि वोळखी जाला बाई ये॥२॥ लक्षाचा लाभु जोडला ठावो। रखुमादेवि-वरुविठ्ठल नाहो॥३॥

६९७. काळा लपंडाई काळेरात्री खेळे। मी स्वसवें वेधली जाय काळ्याछंदें॥१॥ काळेंनिळें हें अभ्र भासलें। ऐसे रूप देखिलें निर्गुणाचें॥२॥ ऐसा हा सांवळा माझिये दृष्टी माल्हाथिला। ऊजरूनि गेला हा विठ्ठलुगे माये॥३॥ ऐसे भुलविलें जाण काळेपणें आपणे। रखुमादेविवरु जाणे येर कांही नेणें॥४॥

६९८. अद्वैत येणें अद्वैतपणें सांडिलें। थितें होतें तें माझें लया पैं गेलें॥१॥ नाहीं तेंचि पाहावया वायांविण गेले। तव पाहाणेंचि जाळे बाईये वो॥२॥ बापरखुमादेविवरु जुनाट जुनघडा। तोहि म्यां सांडिला अरूपसंगें॥३॥

६९९. मन वाचा बंदु निर्वाणी घातलें। निर्माण होतें माझा ठायीं माल्हाथिलें॥१॥ चंचळ मन ब्रह्मीं निश्चळ जालें। अवघेंचि निमाले ब्रह्मार्पणीं॥२॥ रखुमादेविवरुविठ्ठलु उघडा। व्योम पांघुरे फुडां

देखों निघाले ॥ ३ ॥

७००. पंचबाणें माझें हृदय भेदलें। पांचेंविण पावलें च्यान्ही सांडूनिया ॥ १ ॥ सकळै माझें गोत आलें। ब्रह्मरसें जाले बाईयेवो ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरु ब्रह्मरसें विवळला। मजसहित निमाला ब्रह्मरूपीगे माये ॥ ३ ॥

७०१. साता व्योमापरतें पाहो गेलें। तव पाहणेंचि जालें ब्रह्मउदधी ॥ १ ॥ साट मोट माझी मोट बांधिली। नेऊनि टाकिली निर्गुणीगे माये ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरु पंचविसावा देखिला। तोही खुंटला तये पंथी ॥ ३ ॥

७०२. चक्राकार चक्ररूप चक्रधरू म्हणवी। पाहतां अंतरीं न दिसे कांही ॥ १ ॥ पाहातां पाहातां मी परठाया गेले। तेथें एक देखिलें महद्भूत ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु महद्भूता वेगळा। त्याहूनि आगळा तो मनीं मानलागे माये ॥ ३ ॥

७०३. कवतुक पाहावया निरंजना गेलीये। तंव निराकार जाले बाईये वो ॥ १ ॥ अकरासहित पांच पांची मावळली। आदि अंती उदयो जालीं तेजाकारें ॥ २ ॥ रखुमादेविवरु परतोनि देखे। तोही पारुषे तिये ठायीगे माये ॥ ३ ॥

## कूट.

७०४. श्रृंगार करूनि हरिनामतांबूल गुरुअंजन लेउन डोळा। भ्रातारु होता तो निःशब्दीं खिळिला परतोनि माघारि ठेलिये ॥ १ ॥ काम निदसुरा कामिनी जागे कांही के विपरित गमे। भोगत्याच्या ठाईं निशब्दीं खिळिला आपआपण्यातें रमे ॥ २ ॥ पति पद्मिणीविणें गर्भ संभवला सवेचि प्रसूति जाली। तत्त्वबोध उपजला तेणें गुढी उभविली ॥ ३ ॥ तया पुत्राचेनि सुखें सर्वहि विसरलें देहभावा पडला विसरु। बापरखुमादेविवरु विठ्ठलीं तेथें आणिकाचा नव्हे संचारुगे बाईये ॥ ४ ॥

७०५. वडाच्या पानीं एक उभविलें देउळ आधिं कळसु मग पायाहो। देव पुजों गेलों तंव देउळ उडालें पान नाहीं तेथें वडुरे ॥ १ ॥ चेत जाणा तुम्हि चेत जाणा। टिपरि वडाच्या साई हो ॥ २ ॥ पाषाणाचा देवो पाषाणाचा भक्तु पोहती मृगजळ डोहीं हो। वांझेचा पुत्र पोहों लागला तो तारी देवां भक्ता हो ॥ ३ ॥ भवाब्धिसागर नुतरवे ते पडिलें रोहिणी डोहीं हो। नसंपडे आत्मा बुडाले संदेहीं ते गुंतले मायाजळीं हो ॥ ४ ॥ विरुळा जाणें पोहते खुणें केला मायेसि उपावो हो। बापरखुमादेविवरुविठ्ठल विसावा तेणें नेलें पैल थडिये वो ॥ ५ ॥

७०६. चिंचेच्या पानि एक शिवालय उभविलें आधि कळसु मग पायारे। देव पूजों गेलों तंव देउळ उडालें प्रसिद्ध सद्गुरुराया रे ॥ १ ॥ संतजना महंतजना तेथील तें गुज गोडरे। अनुभव अनुभवितां कदांचि न सरे पुरेल मनीचें कोडरे ॥ २ ॥ उपजत नोवरी केळवली केळवला नोवरा नवरी। पितया कंकण करि माता सुंदरी विपरीतगे माय कोडियाची परी ॥ ३ ॥ विपरीत कोडे गुरुगम्य काहाणि ऐके सगुण विरुळा। बापरखुमादेविवरुविठ्ठलु पाहातां पाविजे तो सुखसोहळा ॥ ४ ॥

७०७. देहा लाजिलिये शब्दा रुसलिये। कांसवीचें दूध देऊनियां बुझाविलें माय ॥ १ ॥ काय सांगों तिचा नवलावो। महालोभेंविण कैसा येतों पान्हावो ॥ २ ॥ आवसेचे चांदिणे सांगों गेलिये। रखुमादेविवराविठ्ठलीं वरपडी जालिये ॥ ३ ॥

७०८. निशियेचे भरीं भानु प्रतिबिंबीं बिंबला। बिंबचि गिळुनि ठेला बिंबामाजी ॥ १ ॥ रात्रि सूर्य वाहे दिनु चंद्र जायें। विपरीतगे माये देखीयेले ॥ २ ॥ उदय ना अस्तु तेथें कैचेंनि त्रिगुण। आपणचि दर्पण होऊनि ठेला ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे अनुभवी तोचि जाणे। संत ये खुणें संतोषले ॥ ४ ॥

७०९. पुरुषेविण नारी संचरली शरीरी। आपण्यावरी आळु आला ॥ १ ॥ काय कोण्यासांगे सिणली अनुरागें। पडियेले पतिसंगें अवस्थाभूत ॥ २ ॥ बापरखुमादेविवरु विठ्ठलु जैसा तैसा। व्यापूनि आकाशा उरला असे ॥ ३ ॥

७१०. अचिंत बाळक सावध जालें। निशब्दी बोभाईलें मीचि मीचि॥१॥ गरोदरेंविण बाळक जालें। माया मारून गेलें निरंजना॥२॥ तेथें एक नवल पैं जालें। पेहें सूदलें निरालंब॥३॥ छत्तीस अकरा घोंट पैं घेतला। उदरेविण भरलें पोट देखा॥४॥ सहज गुण होतें निर्गुण जालें। भलत्या झोंबलें निराकारे॥५॥ बापरखुमादेविवरु शून्याशुन्याहूनि वेगळे। त्या बाळका सामाविलें आपुल्या व्योमीं॥६॥

७११. उजव्या आंगें भ्रतार व्याली। डाव्या आंगें कळवळा पाळी॥१॥ कवण जाणे कवण हे खूण। कवण जाणें काय ल्याली भूषण॥२॥ दोहीं आंगीचें लेणें आपण ल्याली। ज्ञानदेव म्हणे विठो आमुची माउली॥३॥

७१२. देउळा आधीं कळसु वाईला। पाहोनि गेलो आपुले दृष्टी॥१॥ विपरीतगे माये देखियेलें। कांसविचें दूध दोहियलें॥२॥ आधीं पुत्रपाठी वांझ व्याली। लेणें लेऊनि ठेले साडेपंधरें॥३॥ बापरखुमादेविवरु विपरीत सुपरीत जाणें। संत तिये खुणें संतोषतील॥४॥

७१३. मज स्वप्नी लेवविला श्रृंगारु। माझें उदरीं जन्मला भ्रतारु॥१॥ जागि सुति ना मी निदसुरी। चोळी सुदली तोडूनि गळसरी॥२॥ लक्षण म्हणे कीं सुलक्षण म्हणे। येके उदरींच आम्हीं दोघें जणें॥३॥ सोईरिक पडिपाडें समसाटीं। मी वो बैसलें तयाचे पाठी॥४॥ निकट कैसें आहेवपण। कैवल्या आधीं तेल कांकण॥५॥ निवृत्ति दास तेथें नाहीं। लग्नमुहूर्त बहुलाठाई॥६॥

७१४. पैलमेरुच्या शिखरीं। एक योगि निराकारी। मुद्रा लावुनि खेंचरी। तो ब्रह्मपदीं बैसला॥१॥ तेणें सांडियेली माया। त्यजियेली कंथा काया। मन गेलें विलया। ब्रह्मानंदा माझारी॥२॥ अनुहत ध्वनि नाद। तो पावला परमपद। उन्मनी तुर्याविनोदें। छंदें छंदें डोलतुसे॥३॥ ज्ञानगोदावरीच्या तीरीं। स्नान केलें पांचाळेश्वरीं। ज्ञानदेवाच्या अंतरीं। दत्तात्रेय योगिया॥४॥

७१५. सेजे सुता भूमी पालखा निजलता उसांसया। गगन पासोडा मेरु कानवडा ते सुख वाड पहुडलया॥१॥ सहज संभोगु भोगु जाणवा। विजया होई मग भोगि राणिवा॥२॥ कमळणी बाळा गुंफिती माळा घालिती गळां देव कन्या। तिचिये शेजारीं सतरावी सुंदरी चंद्रसूर्य दोन्ही चवरी ढाळिती॥३॥ येकु त्यागी दुसरा भोगी तिसरा योगी राजइंद्र। चौथे द्वारीं अतीत पै बैसले गुंफे ज्ञानदेवो॥४॥

७१६. पर्वतु गोफणिये सोकरी लेकरु। ज्याचेनि तृष्णे आटले सप्तहि सागरु। ज्याचेनि स्वेदें बुडाला मेरु। तया माजी ने तया मी काय करूं॥१॥ कैसे नवल चोज जालेंगे माये। खांदीं गंगा चोरू पळतु आहे॥२॥ जयाचिया अंगावरी वडाचीं झाडें। तो हा मुरुकुटावरि बैसला कोडें। विवळादृष्टी पाहे निवाडें। घ्या घ्या म्हणोनि ठाकितो पुढें॥३॥ मनगणिचे तंती वोविली धरणी। ते पिसाळ्यानें घेतली खांदा वाहूनि। त्यासी वोवाळिति चौघीजणी। बापरखुमादेविवराचीं करणी॥४॥

७१७. ऐसा गे माये कैसा योगी। जे ठाई जन्मला तो ठाउ भोगी॥१॥ माय कुमारि बाप ब्रह्मचारी। एकविस पुत्र तयेचे उदरी॥२॥ आचार सांडुनि जालासे भ्रष्ट। माउसिसी येणें लाविलासे पाट॥३॥ पितियाचा वेष धरुनियां वेगीं। मातेचें सुख भोगावया लागीं॥४॥ आणि मी सांगो नवल काई। येणें बहिणी भोगिली एकेचि ठाई॥५॥ ज्ञानदेव म्हणे अनुभवी जाणे। अनुभवावांचुनि कोण्हीच नेणें॥६॥

७१८. सुकलिये गंगे वऱ्हाड आलें। उतार नाहीं म्हणोन मुरडोनी गेलें। मनगुणीचा तंतीं ओंविली धरणी। पिसोळिया ओझें वाईलें रया॥१॥ तुं ते कवण मी ते कवण। कवण बांधावें तोरण। योगी दिगंबर संन्यासिजे काय। वरमाये हातीं कांकण रया॥२॥ आप तेज पृथ्वी वायो आकाश। या

भासास उटणें केलें। वांझेचिया पुत्रा चोखणी मार्दिलें। ऐसें नवल ज्ञान जालें रया॥३॥ वरबाप वोहबाप जन्मलेचि नाहीं। तंव नवरा नवरी कवणची काई। बापरखुमादेवीवर चिंतिता। तरि तें सुख निवृत्तिपायीं॥४॥

७१९. माते आधि कन्या जन्म पावली तिच्या वऱ्हाडा आईति केली। पाहों गेलों तये चरण ना तुम्ही नेत्र संपूर्ण लक्षणें वोळखिलीं। नवरा गर्भवासि पहिले नामरसी घटित आहे दोघांसीं। अर्थ याचा सांगा श्रोते हो लग्नेंविण आणिली घरासिरेरे॥१॥ कवण कवणाचा विचारु करा उपजत पुत्र म्हातारा युगें गेली तया जाहालिया जन्म ऐसें एक अवधारा॥२॥ पुत्रें मातेसि पय पाजिलें कीं पितयासी कडे वाहिलें। तुम्ही म्हणाला शास्त्रें काय देखिलें तरी उजुचि आहे बोंलिलें। साही शास्त्रें अठरा पुराणें यामध्यें नाहीं बोलिलें। शास्त्र गूढ अध्यात्म गूढ वज्र गुढी पाहे म्हणितलेरेरे॥३॥ साहिशास्त्रें शिणलीं भारी परि अर्थ नकळे कवण्यापरी। सुजाण श्रोते कविजन अपार कवित्व करिती लक्षवरी। एक एक अक्षमाची जाणिव पाहताती सुजाण श्रोतें। कवित्वा कवित्वीं हें काय नवल ज्ञानदेवीं पाहिलें निरुतेंरेरे॥४॥

### संसारतापानें तप्त झालेले प्राणी खरें सिध्द नसता बाह्य वेषधारी साधूचा आश्रय करीतात त्याचा परिणाम.

७२०. पति जन्मला माझे उदरीं। मी जालें तयाचि नोवरी॥१॥ पतिव्रता धर्म पाहाहो माझा। सर्वांपरि पति भोंगिजे वोजा॥२॥ निर्गुण पति आवडे मज आधीं माय। पाठीं झालीये भाज॥३॥ मी मायराणी पतिव्रताशिरोमणि। ज्ञानदेवो निरंजनीं क्रीडा करी॥४॥

७२१. तापत्रयीं तापलीं गुरुतें गिवसिती भगवे देखोनि म्हणती तारा स्वामी। तंव ते नेणोनि उपदेशाची रीति आना न उपदेशिती। ठकलें निश्चिती तैसें जालें॥१॥ संत ते कोण संत ते कोण। हे जाणवि खुण केशवराजा॥२॥ कोण्हीं एक प्राणी क्षुधेंने पिडिले। म्हणोनि दोडे तोडूं गेले। खावों बैसे तों नुसधि रुयी उडे। ठकले बापुडें तैसें झालें॥३॥ कोण्ही एक प्राणी प्रवासें पीडिला। स्नेहाळु देखिला बिबवा तो। तयाचें स्नेह लावितां अंगी। सुजला सर्वांगीं तैसें जालें॥४॥ कोण्ही एक प्राणी पीडिला झडीं। म्हणोनि गेला पैल तो झाडी। खा खात अस्वली उठली लवडसवडीं। नाक कान तोडी तैसें जालें॥५॥ ऐशा सकळ कळा जाणसी। नंदरायाचा कुमर म्हणविसी। बापरखुमादेवीवर विठ्ठलीं भेटी। पडलि ते न सुटे जिवेंसी॥६॥

७२२. धर्म अर्थकाम मोक्ष दान मागे श्रीगुरु। हस्त पाद शरीर व्यथा पंगु जालों मी पुढारु। तिमिर आलें पुढें मायामोहो उदारु। तेणें मी जात होतों। मग सहज भेटला सद्गुरु धर्म जागो सद्गुरु महिमा जेणें तुटें भवव्यथा॥१॥ हाचि धर्म अर्थ काम येर तें मी नेघे वृथा॥२॥ एकनाम राम कष्ण याचें दान देई सद्गुरु। वेदशास्त्र मंथनकेले परि नव्हेचि पुढारु। शरण आलों निवृत्तिराया तोडी माया संसारु। पाहतां इये त्रिभुवनी तुजहूनि नाहीं उदारु॥३॥ ज्ञानेसहित विज्ञान गिळी मी माझें पागुळ। वृत्ति हें माझें ठायीं हृदयी बुझे गोपाळ। शंख चक्र पद्म गदा तुष्टे ऐंसा तूं दयाळ। बापरखमादोविवरें। दान देउनि केले अढळ॥४॥

७२३. देवा तुज चुकलों गा। तेणें दृष्टि आलें पडळ विषयग्रंथीं गुंतलोंसे। तेणें होतसे विव्हळ। अंध मंद दृष्टि झाली। गिळूं पाहे हा काळ। अवचितें दैवयोगें। निवृत्ति भेटला कृपाळ॥१॥ धर्म जागो निवृत्तिचा। तेणें फेडिलें पडळ। ज्ञानाचा निजबोधु। विज्ञानरूप सकळ॥२॥ तिहीं लोकीं विश्वरूप। दिव्य दृष्टी दिधली। द्वैत हें हरपलें अद्वैतपणें माउली। उपदेशु निजब्रह्म। ज्ञानांजन साउली। चिद्रूप दीप पाहे। तेथें तनुमनु

निवाली ॥ ३ ॥ दान हेंचि आम्हा गोड। देहीं दृष्टी मुराली। देह हें हरपलें। विदेह वृत्ति स्फुरली। विज्ञान हें प्रगटलें। ज्ञेय ज्ञाता निमाली। दृश्य तें तदाकार। ममता तेथें बुडाली ॥ ४ ॥ प्रपंचु हा नाहीं जाणा। एकाकर वृत्ति जाली। मी माझे हारपलें। विषयांधया बोली। उपरती सद्गुरु बोधु। तेथें प्रकृति संचली। धर्ममार्गे शुद्ध पंथ हातीं काठी दिधली ॥ ५ ॥ वेद मार्गे मुनी गेले त्याच मार्गे चालिलों। न कळेचि विषयअंध म्हणोनी उघड बोलिलों। चालतां धनुर्धरा। तरंगाकारी हरलों। ज्ञानदेवो निवृत्तिचा। द्वैत निसरलों॥ ६ ॥

## वासुदेव.

७२४. बाबा ममतानिशि अहंकार दाट। रामनामें वासुदेवीं वाट। गुरु कृपा वोळलें वैकुंठ। तेणें वासुदेवो दिसे प्रगटगा ॥ १ ॥ वासुदेवा हरि वासुदेवा हरि। रामकृष्ण हरि वासुदेवा ॥ २ ॥ आला पुंडलिक भक्तराज। तेणें केशव वोळला सहज। दिधलें विठ्ठलमंत्र बीज। तेणें जालें सर्व काजगा ॥ ३ ॥ रामकृष्णवासुदेवें। वासुदेवीं मन सामावेगा ॥ ४ ॥ शांतिक्षमादयापुरीं। वासुदेवो घरोघरीं। आनंदे वोसंडे अंबरीं प्रेमे डुलें त्रिपुरारिगा ॥ ५ ॥ वासुदेवीं ज्ञेय ज्ञान। ध्यानी मनी नारायण। वासुदेवो परिपूर्ण। कैसे क्षरलेंसे चैतन्यगा ॥ ६ ॥ वासुदेवीं वाहूनि टाळी। पातकें गेलीं अंतराळीं। वासुदेवो वनमाळी। कीर्तन करूं ब्रह्ममेळींगा ॥ ७ ॥ ज्ञानदेवा वासुदेवीं। प्रीति पान्हा उजळी दिवी। टाळ चिपळी धरूनि जिवीं। ध्यान मुद्रा महादेवींगा ॥ ८ ॥

७२५. घुळघुळा वाजती टाळ। झणझाणां नाद रसाळ। उदो जाला पाहाली वेळ। उठा वाचे वदा गोपाळरे ॥ १ ॥ कैसा वासुदेव बोलतो बोल। बाळापोटीं माय रिघेल। मेलें माणूस जीत उठविल। वेळ काळांतें ग्रासीरे ॥ २ ॥ आतां ऐसेंची अवघे जन। तें येतें जातें तयापासून। जगीं जग झालें जनार्दन। उदो प्रगटला बिंबलें भानरे ॥ ३ ॥ टाळटाळीं लोपला नाद। अंगोअंगींची मुराला छंद। भोग भोगितांचि आटला भोग। ज्ञान गिळूनि गावा तो गोविंदरे ॥ ४ ॥ गांवा आंत बाहेरी हिंडे आळी। देवो देविची केली चिपळी। चरण नसतां वाजे धुमाळी। ज्ञानदेवाची कांति सांवळी ॥ ५ ॥

## बाळछंद.

७२६. बाळछंदो प्रेमडोहीं मन। जालें मनाचें उन्मन। उपरती धरिलें ध्यान। झालें ज्ञानपरब्रह्मीं ॥ १ ॥ निमिषा निमिष छंद माझा। बाळछंदो हा तुझा। वेगि येई गरुडध्वजा। पसरूनीया भूजा देई क्षेम ॥ २ ॥ तुटली आशेची सांगडी। ध्यानें नेली पैल तडी। सुटली संसाराची बेडी। क्षणु घडी रिती नाहीं ॥ ३ ॥ नाठवे द्वैताची भावना। अद्वैती न बैसें ध्याना। दिननिशींची रचना। काळगणना छंदे गिळीं ॥ ४ ॥ जप तप वृत्ति सहित। निवृत्ति होईन निश्चिति। समाधी बैसेन एकतत्व। मुखीं मात नामाची ॥ ५ ॥ ज्ञानदेवीं छंद ऐसा। बाळछंद झाला पिसा। दान मागतसे महेशा। दिशादिशा न घली मन ॥ ६ ॥

७२७. अलक्षलक्षीं मी लक्षीं। तेथें दिसती दोहीं पक्षी। वेदां शास्त्रां हेची साक्षी। चंद्रसूर्या सहित। मागेन स्वानुभवअंगुले। पांचा तत्वांचे सानुलें। व्यर्थ इंद्रिये भोगीलें। नाहीं रंगले संताचरणीं ॥ १ ॥ बाळछंदो बाबा बाळ छंदो। रामकृष्ण नित्य उदो। हृदयकळिके भावभेदो। वृत्तिसहित शरीर निंदो। नित्य उदो तुझाची ॥ २ ॥ क्षीरसिंधुही दुहिला। चतुर्दशरत्नीं भरला। नेघे तेथील साउला। मज अबोला प्रपंचेंसी। दानदेगा उदारश्रेष्ठा। परब्रह्म तूं वैकुंठा। मुक्ति मार्गीचा चोहटा। फुकटा नेघे तया ॥ ३ ॥ पृथ्वीतळ राज्यमद। मी नेघे नेणें हेंही पद। रामकृष्ण वाचे गोविंद। हाची छंद तुझ्या पंथे। मंत्र तीर्थयज्ञयाग। या न करि भागा भाग। तूंचि होऊनि सर्वांग। सर्वासंग मज देई ॥ ४ ॥ वृत्ति सहित मज लपवी। माझें मन चरणीं ठेवी। निवृत्ति पदोंपदीं गोवीं तूं गोसावी

दीनोद्धरण॥ सात पांच तीन मेळा। या नेघे तत्वांचा सोहळा। रज तमाचा कंटाळा। हृदयीं जिव्हाळा हरि वसो॥५॥ श्वेत पीत नेघे वस्त्र। ज्ञानविज्ञान नेघे शास्त्र। स्वर्ग मृत्यु पाताळपात्र। नित्य वस्त्र हरी देई। चंद्रसूर्य महेन्द्र पदें। ध्रुवादिकांची आनंदें। तें मी नेघे गा आल्हादें। तुझ्या ब्रिदें करीन घोष॥६॥ करचरणेंसे इंद्रियवृत्ति। तुझ्या ठायीं तूंचि होती। मी माझी उरो नेदी कीर्ति। हें दान श्रीपति मज द्यावें। शांती दया क्षमा ऋद्धी। हेहि पाहातां मज उपाधी। तुझी या नामांची समाधी। कृपानिधी मज द्यावी॥७॥ बापरखुमादेविवरु तुष्टला। दान घे घे म्हणोनि वोळला। अजानवृक्ष पाल्हाईला। मग बोलिला विठ्ठल हरी। पुंडलिके केलेरे कोडें। तें तुवां मागीतलेंरे निवाडें। मीं तुज हृदयी सांपडे। हे त्वां केलें ज्ञानदेवा॥८॥ ज्ञानदेवें घेतलें दान। हृदयीं धरुनीया ध्यान। समाधी बैसला निर्वाण। कथा कीर्तन करीतु॥ बाळछंदो बावीस जन्में। तोडिलीं भवाब्धीचीं कर्मे चंद्रार्कतारांगणें। रश्में दान घेतला हरी॥९॥

## कापड़ी.

७२८. आम्हीं कापडीरे आम्ही कापडीरे। पापें बारा ताटा पळती बापडिरे॥१॥ पंढरपुरीचे कापडिरे। उत्तरपंथीचे कापडिरे॥२॥ आणि पाहालेंरे। संतसंगति सुख जालेरे॥३॥ समता कावडिरे समता कावडिरे। माजि नामामृत भरिलें आवडिरे॥४॥ येणें न घडेरे जाणे न घडेरे निजसुख कोंदलें पाहातां चहूंकडेरे॥५॥ नलगे दंडणेरे नलगे मुंडणेरे। नाम म्हणोनि कर्माकर्मखंडणेरे॥६॥ दुःख फिटलेरे। दुःख फिटलेरे बापरखुमादेविवर विठ्ठलरे॥७॥

७२९. ॐ नमो शिवा आदि। कावडि घेतली खांदी मिळाली संतमांदी। त्याचे रज रेणु वंदी॥ ध्रु०॥ शिवनाम शीतळ मुखीं। सेविं पां कापडियारे दडदडदडदड दुडुदुडुदुडुदुडु। पळ सुटला कळिकाळा बापुडीयारे॥१॥ गुरुलिंग जंगम। त्यानें दाविला आगम। आधिव्याधि झाली सम। तेणें पावलों विश्रामरे॥२॥ जवळी असतां जगजीवन। कां धांडोळिसी वन। एकाग्र करी मन। तेणें होईल समाधानरे॥३॥ देहभाव जेथं विरे। ते साधन दिधलें पुरे। बापरखुमादेविवरे विठ्ठलुरे विठ्ठलुरे विठ्ठलुरे॥४॥

## मदालसा.

७३०. उपदेश उपरति ज्ञान ध्यानएकनिष्ठ। विज्ञान तें आटलेंरे दृश्यादृश्य तेथे दृष्ट। आदिअंत हरपला सर्व ब्रह्म एक वाट। नित्य नेम चालतारे होय वैकुंठ प्रगट॥१॥ जे जो जे जो निजानंदे आत्माराम प्रसिद्ध। उपदेश ऐसें बाळा मदालसा प्रबोध। उपजोनि संसारीरे एकतत्व तेंचि सिद्ध॥ द्वैतअद्वैत खोडी निःशेष आटली आस। कल्पना हो बुडालीरे सर्वदिसे हृषिकेश। ममता हे समूळ माया हेही न दिसे उद्धस। हरपली स्वयंज्योति ऐसा होईरे उदास॥२॥ विकृतिभान गाढें तेथें न दिसे बिरडें। इंद्रिय रसना दृढ याचें निरसलें कोडें। मिथ्या हे मोहपाश तोडी व्यसन सांकडे। मानस परिकर हेही शोधी निवाडे॥३॥ प्रपंच झोंबो नेदी यांचे उठवी धरणें। शरीरजन्म मरण याचें करी कारे पारणें। निवटूनि सांडी बापा सर्वभरी नारायण॥४॥ मी माझें दुजेपण तेथें वायां घेसी लाहो। निरशी ममता बापा करि हरिनामें टाहो। शून्य हें भेदि कारे जन्ममरण निर्वाहो॥५॥ धारणा धीट करी ध्येय पणरे हें सांडी। अखंडता निजसुख कामधामरे मांडी। स्मरता नामावळी विषय हे शरीर सांडी। क्रूररे नव्हे बापा सदां आत्मा ने ब्रह्मांडीं॥६॥ त्रिकाळज्ञान गुज अखंड आत्मारे चेतवी। नित्यता हरिकथा विष्णु कृष्ण मनरंजवी। सकळ परिपूर्ण होशी जीव शिवरे भावी। मन ध्यान एकरूप सर्वदा हरि हा गोसावी॥७॥ शांति निवृत्ति क्षमा दया सर्वभूती भजन। आचरण एकपक्षें सर्वरूपी जनार्दन। अलक्षसंकल्प भावी सर्व होई नारायण। विसरे कामनारे सेवी ब्रह्मसनातन॥८॥

एकट मन करी निवृत्ति धरी निर्वाहो। चेतवितां इन्द्रियांसी आत्मारामें नित्य टाहो। सेवा सुख करी बापा प्रसन्न लक्ष्मीचा नाहो॥९॥ सुति मांडी नाममात्रें सेवी तत्पर रसना। उपरति तितिक्षारे लय लक्षि ध्यासि ध्याना। हारपेल मी माझें होशील ब्रह्मांडयेसणा। जिव्हा हें मन चक्षु करि श्रीगुरु निरोपण॥१०॥ तुझा तूंचि विदेहि पां आत्मनाथ एकतत्त्वीं। हरपति इंद्रियेरे जिवशिव एकेपंक्ती। नाहीं नाहीं अन्य रूप स्वयें परात्माज्योती। सुटेल जन्ममरण उपजेल प्रत्यक्ष दीप्ती॥११॥ आकाश तुज माजी हरपसि परब्रह्मीं। न भजतां इंद्रियांसी हरपति यया उर्मी। बीज तें निरुपिलें सहज राहेंरे तूं समी। दमशम रिगु निगु याचा दाहारे संगमीं॥१२॥ तटाक देहभूमीरेचक कुंभक आगमी। चंद्रसूर्य ऐसे जाणा पूर्ण परिपूर्णरे रमी। लोलुंगता रिद्धिसिद्धि धारणाते मनोरमी। होसील तूंचि सिद्ध गुरुशिष्य सर्वसमी॥१३॥ राहो नेदी विषयसुख वायां उद्वेग विस्तार। प्रेमामृत हरिनाम हेंचि सेविरे तूं सार। भजतां नित्यकाळ तुटे विषयाचार॥१४॥ उद्भट सुख साधी जेणें दिसे आत्मनाथ। बिंबामाजी बिंब पाहे सर्व होतुं सनाथ। निश्चित निराळेरे निगम साधी परमार्थ। धिटिव ऐशी आहे सर्व पुरति मनोरथ॥१५॥ उष्णाते घोटी बापासम चांदिणें धरी। तेथील अमृतमय होई झडकरी। लक्ष हें परब्रह्मीं सदा पूर्णिमा ते सारी। निवतील अष्टही अंगें वोल्हावति शरीरीं॥१६॥ त्रिकाळज्ञानकळा येणें साधलेरे निज। तितिक्षा मनोवेगें नित्य प्रत्यक्ष ब्रह्मबीज। साकार निजघटीं तो प्रगटे अधोक्षज। पर्वकाळ ऐसा आहे गुरुमुखेंरे चोज॥१७॥ हें ऐकोनिया पुत्र मातें विनविता पैं जाला। उपदेश ब्रह्म लक्षी सर्वत्र केला वो काला। सांडिले संप्रधार आत्मा एकत्र वो केला। कैसे हें उपदेशणें वेदांसि अबोला॥१८॥ ऐके तूं मदलसे मज आत्मरामीं। ऐकतां वो उपदेश बहुत संताषलो उर्मी। प्रेमामृतजीवनकळा वोल्हावतु असे धर्मी। निःशेष विषये वोते समर्पीलें परब्रह्मीं॥१९॥ विपरीत माते आप आपामाजि थोर। चैतन्य हें क्षरलेंसे हाचि धरिला वो विचार॥२०॥ माझा मी गुरु केला मातेचा उपदेश। न दिसे जनवन सर्वरूप महेश। निराकारि एक वस्तु अवघा दिसे जगदीश। हारपले चंद्रसूर्यो त्याचिमाजि रहिवास॥२१॥ अनंत नाम ज्याचें त्याचा बोध प्रगट। गुरुखुण ऐसी आहे नित्य सेवी वैकुंठ। नेणें हें शरीर माया रामकृष्ण नीट वाट। उच्चारु वो एकतत्व सेवा सुख वो धीट॥२२॥ हें ऐकोनि मदलसा म्हणे भला भला भला पुत्रराया। उपजोनि संसारी रे तोडि तोडि विषया। मुक्त तूं अससी सहज शरण जाय सद्‌गुरु पाया। अदिनाथ गुरु माझा त्या निवृत्तिसी भेटावया॥२३॥ तेथूनि ब्रह्मज्ञान उपदेश अपार। समरसें जनींवनीं राज्य टाकी असार। यामाजि हिंसा तुज द्वेषितारे चराचर। चैतन्य ब्रह्म साचे एकरूपें श्रीधर॥२४॥ ज्ञानदेव निवृत्तीसी शरण गेला लवलाही। हरपली निज काया मन गेले ब्रह्मा डोहीं। निरसली माया मोहो द्वैत न दिसे कांही। अद्वैत बिंबलेसें जनवन ब्रह्म पाही॥२५॥

७३१. उपदेश अगोचर उपदेशी अगोचर मदलसा पुत्रालागीं रहीवासु। ध्यानरूप येक करी सर्वांघटीं महेशु। जातिधर्म लोपि बा न करी तूं आळसू। उठि जाय योगपंथें जेथें वैकुंठ निवासु॥१॥ जे जो जे जो नित्य हरि जनीं वनीं जो अहे। त्याचें तूं ध्यान करी नित्य तेथेंची राहें। परतोनी येवों नको प्रपंच न पाहे। जठराग्नीं पचों नको वेगीं तूं योगिया होय॥२॥ जपतप वाचे एक अखंड श्रीराम उच्चार। नित्य धर्म संताचारे हाचि करीरे विचार। संगदोष बोधिती तुज म्हणोनि होई खेचर। अतळों नको द्वैतबुद्धि सदा अद्वैत निरंतर॥३॥ एक लक्ष एक पक्ष एक तत्व हृदयीं। एक ध्यान एक मन याचे लागे तू सोयी। एक हरि हाचि खरा एक नेम तूं राही।

अणिक जपों नको देवोदेवीं काहींबाहीं ॥ ४ ॥ देव तो वैकुंठींचा निरालंबीरे आहे। निराळा सर्व जीवां म्हणोनी ध्यातु आहे। जीव हा शिव करी ऐसे करुनियां राहे। रामनाम मंत्र ध्वनि कळिकाळ वास न पाहे॥५॥ कोहं हे उपजतां टाकिलें तुवां सोहं। गर्भीं होतासि सावध आतां म्हणतासि हूंहूं। अहंकार जपों नको मन मुंडि संमोहे। एकट मन करि रामनामीं धरी भाव॥६॥ शांति करी जीवशिवी सर्व क्षरलासे हरि। क्षमा दया बहिणीं तुझ्या माया सांडी भीतरीं। बंधु पिता सखि जेंणें टाकि तूं दुरिच्या दुरी। मत्सर हा घेवों नकों मद टाकी हा बाहेरी॥७॥ हरिरूप निखळ आहे योगी जाणती यासि। अंतर तें दुरांतर हें तूं जप मानसीं। कर्म हें ब्रह्म जाण ऐसा होई समरसीं। तत्काळ होशी योगी संदेह नाहीं त्यासी॥८॥ सत्व रज तमीं गुंफो नको एकतत्वीं आहे भाव। नानातत्वीं धरिसी व्यर्थ मग तुज न पवे देव। मी माझे वाहों नको व्यर्थ करिशी उपाव। शिणलासि येतां जातां हा तुज नाहीं आठव॥९॥ शरीर हें नव्हें तुझें तरुण बाळरे वृद्ध। जंववरी सावध आहे तंववरी करी प्रबोध। एकनामीं विष्णुचेरे जाणती तेचि सिद्ध॥१०॥ निःशंक मार्ग चाली आडकाठी नाहीं तेथें। विहंगमी चाड धरी पिपीलिका नेघे हीत। अजप तेथें जपे सदापूर्ण अनंत। न धरी विकल्प कांही उद्धरसि त्वरित॥११॥ कामना चित्तवृत्ति अनुग्रह हे उपदेश। ग्रहभूतपिशाचरे याचा नव्हे तुज त्रास। कळिकाळ पडेल तेथे पावसि परमपरेश। झणें हे पावसी शरीर न करी न करी आळस॥१२॥ अंतीं अंत ऊर्ध्व अध दश दिशां नांदे एक। हरिविण न दिसे कांहीं संत जाणती विवेक। निरसली त्यांची माया हरि भरला दिसे एक। नयनीं दृष्टि चोख जैसा अमृता चा मयंक॥१३॥ योगिया तूंचि जाण योगयाग तयें हरि। न भजे हरिविण उगा नसे क्षणभरी। रामकृष्ण वाचे सदां नित्य जपे निरंतरी। हरि ध्यान ऐसें आहे पुत्रा हेंचि तूं स्वीकारी॥१४॥ लोपतील मन संग संग भंग सांगडी। अवचिती पडेल कव जन्ममरणाची उडी न गिळे आयुष्य तुज मनुष्य जन्मअर्ध घडी उठिचि उठोनिया जाय तूं तांतडी॥१५॥ विवेक करि बाळा पुराणप्रसिद्ध पाहे। वेदशास्त्रें बोलिले हरि हें पाहोनि उगा राहे। योगिये विसावले तेथें दिव्यचक्षू करूनि पाहे। सत्रावी हे संजीवनी उलट करी लवलाहे॥१६॥ मातृका भेदुनियां षट्चक्रे टाकी वेगी। तेथें तूं गुफों नको चाल विहंगममार्गीं। अनंत सिद्ध गेले ऋषिमुनीच्या संगीं। नारदादि अवधुत ते प्रपंची निःसंगीं॥१७॥ हनुमंत कपिराज भीष्मादिक उत्तम। परिक्षित प्रल्हाद ते पैं जालें आत्मराम। ध्रुव आणि अंबऋषी पावले वैकुंठ धाम। यांचा तूं संग करी। होईकारे निःकाम॥१८॥ मदलसा म्हणे पुत्रा ऐसा आहे उपदेश। भाव गर्भीचारे तुज विचरे पृथ्वी निःशेष। सरता होई संतामाजी चित्तीं ध्याई हृषीकेश। परब्रह्म तूंचि होसी ऐसें बोलियेले व्यास॥१९॥ शुकादिक पुत्र ज्याचे तो साक्षत् नारायण। अवतरले मनुष्यवेषें तारियेले अवघे जन। ऐसाचि होई तूरे विसरे मीतूं पण। उठी जाये उर्ध्व पंथे करिल कृपा हरि आपण॥२०॥ नाम हें अमृतसिंधु हृदयीं जपे सदाकाळ। नाहीं तुज रोगराई तुज देखोनी पळेल काळ। हरिसि जो विनटला तया नाहीं काळ वेळ। नामधारकाचें तीर्थ वंदी तीर्थकल्लोळ॥२१॥ पुत्र म्हणो अवो माते गुरु तूंची जालीसी। नसवे क्षणभरी जपतप मानसीं। हरि हा श्रेष्ठ राणा तूंची तारक जीवासी। भवार्णवीं तारियेले म्यां दृढ धरिलें मानसीं॥२२॥ खेचर बुद्धि केली खेळिनलों चौऱ्याशीं। खुंटल्या जन्मयोनी पावलों मोक्षसुखासी। खेचराखेचर माये मी तुझा वो उपदेशी। गुरुगम्यउपदेशिलें शिष्य निवाला मानसीं॥२३॥

७३२. उपदेश ब्रह्मज्ञान पुत्रा ऐकरे बीज। सांडि सांडि मायामोहो मुक्त विचरेरे सहज। आशा मनसा गुंफो नको सोहं धरिकारे नीज। अखंड

गुरुचरणीं मोन्य धरिकारे काज॥१॥ उपदेशी मदलसा निजकारे आधीं। पूर्णबोधें उमजेरे हेंचि साधी समाधी। लटिका हा मायामोह लक्ष लावा गोविंदीं। सांडि मांडि कोहंवेगीं लीन होई परमानंदीं। जे जो जे जो जे जो बाळा॥२॥ चौऱ्यांशीलक्ष जीव जंतु शिणले योनी येतां जातां। विरळा देखों परतला जो पारुषला संपूर्णता। मनबुद्धि एकचित्तें दृढधरी अनंता। उपरति चित्तें करी सावध होई त्वरिता॥३॥ जन्म हें दुर्लभ जाणा मनुष्यजन्म अगाध। ज्ञानध्यान बुझिजे आधीं वरी गुरूचा प्रबोध। तरीच साधेल तुज नाहीं तरी होसी मूढ अंध। नेमिलें आयुष्य वेचे कोण कोण तोडी भवबंधकंद॥४॥ नवमास होतासि गर्भी अधोवदनें दुःखित। तैं होता उमजुतुज कारें येथें निश्चित। परतोनि पाहे वेगीं मनीं धरी अच्युत। तुटेल योनिपंथू मग तूं सर्वातीत॥५॥ जंववरी माझें माझें मन न संडी तुझें। तंववरी मोहोपाश व्यर्थ धरणिये ओझें। विष्ठामूत्र जंतगर्भीं म्यां वाहिलें तुझें ओझें॥६॥ उठीं पुत्रा सावध होई मी माझे सांडि धरी। कोशकिटके जन्मलासि तैसें तूं बा न करी। आपण्या आपण होसी तुझा तूंचिरे वैरी। जंव नाहीं आलें काळचक्र वेगी स्मरे मुरारी॥७॥ इंद्रियें सावध अहाति तव करी धांवा धांवी। मग विस्मृति पडेल बुद्धि मगन साधे हरि गोसांवी। सर्वघटी हरि ध्याय मनचक्षु एक भावी नारायणनामपाठ वेदशास्त्र अनुभवी॥८॥ दिननिशीं शरीर तुझें बाळतरुणवृद्ध होय। काया हे नव्हे तुझी सांडी सांडी ममता माया। निर्गुणरूप हरिहरू त्यासि तूं शरण जाय। सगुणीं झोंबों नको हरिरूपीं तल्लीन राहे॥९॥ मृगजळ मायपूर व्यर्थ इंद्रियांचि झोंबी। कामना लपवी आधीं लय लावी हरिच्या बिंबीं। चक्षें पक्षें मन गोवी बिरडें घाली निरालंबी। शुद्धबुद्ध तत्व हरि एकतत्व नितंबी॥ गुरुगम्य आगमाचे हेंचि तत्त्व उत्तम। सत्त्व रज तमीं गुंफो नको मा मार्ग धरी उत्तम। प्राण लपवी प्राणामाजी वासनाकरी निःष्काम॥१०॥ हेंची साधन योगियांचें शिवाचें मनोगत। उठोनियां प्रातकाळीं तनुमनध्यान नित्य। जागरणिं हरिकीर्तनी उद्धरसी त्वरित। नाशिवंत शरीर जाण मग तुज न घडे हित॥११॥ क्षणां एका शरीर नासे हें तुझें तुज न कळे। अवचिता येईल काळ झांकतील देखणे डोळे। मग हें नाठवे तुज करि गुरुमेळीं निर्मळ। सांडी मांडी करूं नको टाकिं टाकी मनीचे सकळ॥१२॥ व्यर्थरे राहासी येथें पडशील मोहोफांसा। दशदिशा हरि आहे ऊर्ध्व अध महेशा। मही हे अंथरुण आकाश करी अवकाश। या परि विचिरें रे राहवें प्रमाण सरिसा॥१३॥ तत्व हें एकरूप हरिविण नाहीं कोठें। द्वैतभाव न धरी मनीं नीटजाय वैकुंठ॥ हा मार्ग योगियांचा संत गेले नीट वाटे॥१४॥ सनकादिकां पंथ हाचि सेविला उपजंता। नारदें विचार केला मग न राहे तो निवांता। गोरक्ष बुझला वेगी दृढ कास हनुमंता। अवधूत याचि परि दत्तामाजी पूर्णता॥१५॥ उन्मनि साधी बाळा रूप न्याहाळी नयनीं। नासिक्रीं ठेऊनि दृष्टि खेंचरी मुद्रा निर्वाणी। शरीर हें असों जावों याची न करी तूं करणी। रामकृष्ण वाचा पाठ हेंचि धरी निर्वाणी॥१६॥ अष्टदळ हृदयी आहे तोचि आत्मा ये करी। मन बुद्धि वित्त चित्त दिसों नेदी वोहरी। मातापिता प्राण तुझे तो दाखविल शरीरीं। स्त्रीपुत्र इंद्रियद्वारा सांडी परति माघारी मन हें कोंडी पिंडीं तंतू तुटो नेदी याचा। मार्ग हे जिव्हे पारुषरे हरिरामकृष्ण वाचा। रिकामा क्षणभरी पंथ धरी प्रेमाचा। आदि मध्य हरि एकु तोचि ध्यायीं हृदयींचा॥१७॥ श्रवण स्मरण करि काळ घाली आंकणा। भीष्में साधिलें हरि तो पावला नारायणा। लक्ष्मणें धरिली वृद्धि वोळगिला रामराणा। निमिष्य एक न भरतां शरीर सांडिले प्राणा॥१८॥ हित तेंचि करी बाळा हरि प्रेमें मन करी। सावधान चित्त आहें तंव सर्व हे दृष्ट

निवारी। भुली पडेल अंतीं तुज मग नाहीं कैवारी। ममतेचें बिरडें फेडी उठे चाले योगरीतीं॥१९॥ म्हणे माते परियेसी कैसे उपदेशिलें ज्ञान। गुरु हा कोण करूं अवघे दिसें विज्ञान। मज याचें स्मरण झालें सोहं होतें मज ध्यान। कोहं हें विसरलों जालें संसारमौन्य॥२०॥ परतले प्रेमभाव उब्दोध आला धांवया। कळिकाळ न दिसे दृष्टि पापपुण्य राहावया। सभराभरित हरि दिसेमाझें कैचें उरावया। तूं तव विदेही माया मदलासा मज राखावया॥२१॥ मदलसा म्हणे पुत्रा जो उपदेश करूणा। ब्रह्म हे जीवी शिवीं भोगि योनी नारायणा। शांति क्षमा बाणली तुज कैचें उमटलें गुज॥२२॥ हे स्थिति बाणली ज्यासी तो मी परिपूर्ण योगी। दया मुक्ति जाली दासी नित्य उन्मनी भोग भोगी। त्याचिया दर्शनें जीव तरतील वेगीं। उठि पुत्रा जाय पंथे जेथें जेथें सत्रावी उगी॥२३॥ मुक्तामुक्ता अभयदान मुक्त जाला अनुभवी। राहिली निरलंबी रातलासे सतरावी। मुक्ताई मुक्त ज्ञाने मदलासा नांवानांवी। मुक्तलग उपदेश चांगयास दिधला पाही॥२४॥

७३३. उपदेश मदलसा देहो निर्मिला कैसा आलासी कवण्या वाटां मातेचिया गर्भवासा। जो पंथ वोखटारे पचलासि कर्मकोठा। अविचार बुद्धि तुझी पुत्रराया अदटा॥१॥ पर्ये दे मदलसा सोहं जोजोरे बाळा। निजध्यानीं निजपारे लक्ष लागों दें डोळा। निज तें तूं विसरलासि होसि वरपडा काळा॥२॥ नवामास कष्टलासी दहाव्याने प्रसूत जाली। येतांचि कर्मजाड तुझीं मान अडकली। आकांतु ते जननी दुःखें धाय मोकली। स्मरे त्या हरिहरा ध्यायीं कृष्णमाउली॥३॥ उपजोनि दुर्लभुरे मायबापा जालासी। वाढविती थोर आशा थोर कष्टी सायासी। माझें माझें म्हणोनियां झणीवायां भुलसी। होणार जाणार रे जाण नको गुंफों भव पाशीं॥४॥ हा देहो नाशिवंत मळमूत्राचा बांधा। वरि चर्म घातलेंरे कर्मकीटकाचा सांदा। रवरव दुर्गंधारे अमंगळ तिचा बांधा। स्मरे त्या हरिहरा शरण जाई गोविंदा॥५॥ या देहाचा भरंवसा पुत्रा न धरावा ऐसा। माझें माझें म्हणौनियां बहु दुःखाचा वळसा। बहुत ठकियेले मृगजळाच्या आशा। तृष्णा सांडुनियां योगी गेले वनवासा॥६॥ या पोटाकरणेंरे काय न करिजे एक। यालागि सोय धरीरे तिहीं भुलविलें लोक। ठाईचें नेमियलें त्याचें आयुष्य भविष्य। लल्लाटीं ब्रह्मरेखा नेणती ते ब्रह्मादिक॥७॥ जळींचीं जळचरेंरे जळींचियारे रमती। भुललीं तीं बापुडीरे ते कांही नेणती। जंव नाहीं पुरलीरे त्याचि आयुष्यप्राप्ति। वरि घालुनि भोंवरजाळ बापा तयातें गिवसिती॥८॥ पक्षणी पक्षीयारे निरंजनीं ये वनीं। पिलिया कारणेरे गेलि चारया दोन्ही। अवचिती सांपडली पारधिया लागुनी। गुंतोनि मोहोपाशीं प्राण त्यजिती दोन्ही॥९॥ मृग हा चारियारे अतिमानें सोकला। अविचार बुद्धि त्याची परतोनि मागुता आला। तंव त्या पारधियानें गुणीं बाणु लाविला। आशारे त्यजूनियां थिता प्राण मुकला॥१०॥ अठराभार वनस्पती फुलीं फळीं वोळती। बावित्या पोखरणी नदी गंगा वाहती। ज्या घरीं कुलस्त्रीया राज्य राणीव संपत्ती। हें सुख सांडूनिया कासया योग सेविती॥११॥ हें सुख सांडूनिया कोण फळ तयासी। कपाट लंघूनियां योगी ध्याती कवणासी। योग तो सांग मज कवण ध्यान मानसीं। सर्वत्र गोविंदुरे हृदयीं ध्याई हृषिकेशी॥१२॥ इतुकिया उपरि रे पुत्रा घेई उपदेशु। नको भुलों येणे भ्रमें जिवित्वाचा होईल नाशु। क्षीरा निरा पारखीरे परमात्मा राजहंसु। निर्गुण निर्विकार पुत्र सेवी ब्रह्मरसु॥१३॥ इतुकिया उपरीरे मातें विनविता जाला। संसार सोहळा हा थोरा कष्टीं जोडला। पंच भूतें निवती येथें म्हणौनि विश्रामु केला। वोखटा गर्भवासु कवणा कार्या रचिला॥१४॥ गर्भाची यातनारे पुत्रा ऐके आपल्या कानी। येतां जातां येणें पंथे सांगाति नाहिरे कोण्ही। अहंभावो प्रपंचु पुत्र सांडीरे दोन्ही। चौऱ्यांशी जीवयोनी पर्तले मुनिजन

तत्क्षणीं॥१५॥ वाहतां महापुरी रे पुत्रा काढिलें तुज। रक्षिलासी प्रसिद्ध सांपडले ब्रह्मबीज। मग तुज वोळखी नाहीं कारें नेणसि निज। आपेआप सद्गुरु कृपा करील सहज॥१६॥ उपजत रंगणारे पुत्रा तुवा जावें वना बैसोनि आसनीरे पाहे निर्वाणीच्या खुणा। प्राणासी भय नाहीं तापत्रये चारणा। मग तुज सौरसू पाहारे परब्रह्मींच्या खुणा॥१७॥ बैसोनि आसनीरे पुत्रा दृढ होई मनीं। चेतवी तूं आपणापे चेतविते कुंडलिनी। चालतां पश्चिमपंथें जाई चक्रें भेदुनी। सतरावी जिवनकळा पाहे आत्मा हा चिंतुनी॥१८॥ मग तूं देखसी त्रिभुवन स्वर्ग पाताळ। नको भुलों येणें भ्रमें सांडीं विषय पाल्हाळ। आपणापे देखपारे स्वरूप नाहीं वेगळें। परमात्मा व्यापकुरे पाहा परब्रह्म सांवळें॥१९॥ इतुकिया उपरीरे पुत्रा विनवीतें जननी परियेसि माउलिये संतोषलों तत्क्षणीं। इंद्रायणी महातटीं विलासलों श्रीगुरुचरणीं। बोलियेले ज्ञानदेवो संतोषलों वो मनीं॥२०॥

७३४. श्रीगुरु देवराया प्रणिपातु जो माझा। मनादि मूळ तूंचि विश्वव्यापक बीजा। समाधि घेइ पुत्रा स्वानंदाचिया भोजा। पालखी पौढलिया नाशिवंतरे माया॥१॥ जागरे पुत्रराया जाई श्रीगुरुशरण। देह तूं व्यापिलासि चुकवी जन्ममरण। गर्भवासु वोखटारे तेथें दुःख दारुण। सावध होईकारे गुरुपुत्र तूं सुजाण॥२॥ मदलसा म्हणे पुत्रा ऐक बोलणें माझें। चौऱ्यांशी घरामाजी मन व्याकुळ तुझें। बहुत सिणतोसी पाहातां या विषयासी। जाण हें स्वप्नरूप येथें नाहीं बा दुजें॥३॥ सांडिरे सांडि बाळा सांडि संसारछंदु। माशिया मोहळरे रचियेलारे कंदु। झाडूनि आणिकी नेला तया फुकटचि वेधु। तैसी परी होईल तुज उपदेशे आनंदु॥४॥ सत्व हें रज तम तुज लाविती चाळा। काम क्रोध मद मत्सर तुज गोंविती खेळा। यासवें झणें जासी सुकुमारारे बाळा। अपभ्रंशीं घालतील मुकसिल सर्वस्वाला॥५॥ कोसलियानें घर सुदृढ पैं केलें। निर्गुण न विचारितां तेणें सुख मानियेलें। जालेंरे तुज तैसें यातायाति भोगविले। मोक्षद्वार चुकलासि दृढ कर्म जोडलें॥६॥ सर्पे पै दर्दुर धरियेलारे मुखी। तेणेंहिरे माशी धरियेली पक्षी। तैसा नव्हे ज्ञानयोगु आपआपणातें भक्षी। इंद्रियां घाली पाणी संसारी होईरे सुखी॥७॥ पक्षिया पक्षिणीरे निरंजनीं ये वनीं। पिलिया कारणेंरे गेली चारया दोन्ही। मोहोजाळे गुंतलीरे प्राण दिधले टाकुनी। संसार दुर्घट हा विचारु पाहे परतुनी॥८॥ जाणत्या उपदेशु नेणता भ्रांती पडिला। तैसा नव्हें ज्ञानप्रकाशु ज्ञानदेवो अनुवादला। अनुभवीं गुरुपुत्र तोचि स्वयं बुझाला। ऐके त्या उद्धरणा गायक सहज उद्धरला॥९॥

७३५. मदलसा म्हणे पुत्रा तूं मुक्त होतासी। संसारमायामोहें कारे बद्ध जालासी। सिद्ध तें विचारी पां जेणें सुखिया होसी॥१॥ चेईतूरे तानुलिया जाई श्रीगुरु शरण। देहभावीं व्यापिलासी मग तुज शिकविल कवण। अज्ञानपण सांडूनियां तूं चुकवी जन्ममरण। गर्भवास वोखटारे गर्भी दुःख दारुण॥२॥ जागृति आणि निद्रा तुज स्वप्नीं भरु। सुषुप्ति वेळोवेळां तुज पडिला विसरु। तें जव नेणसिरे तव तुज नाहीं निर्धारु॥३॥ देह तव नाशिवंत तूं कारे भुललासी। अखंड तें विचारी पां जेणें सुखिया होसी। दुःख तें आठवीरे गर्भी काय भोगिसी। जठराग्नी कृमीकुंडी वेळोवेळा पडसी॥४॥ कोसलियानें घररे सदृढ पैं केलें। रिगुनिगु न विचारीतां तेणें सुख मानिलें। जाहालें बाळा तुज तैसें यातायाति भोगविलें। मोक्षद्वार चुकलासी सकळही कर्मे संचिलें॥५॥ सर्पे दुर्दुर धरियेलारे मुखीं तंव तेणें माशी तोंडीं धरियेली शेखीं। तैसा हा मायामोहो तुज कारे नुपेक्षी। इंद्रियें व्यापुनियां संसारी सुखि दुःखी॥६॥ मृगरे जळ जैसें हेलावत पैं दिसे। तैसें हे भ्रांति माया। तुज नाथिली आभासें। उत्पत्ति प्रळय दोन्ही ये तरी तुज सरिसे। स्थिर होऊनि विचारी पां आणिक नाहीं बा

तैसें ॥७॥ मृग पक्षी कीटकु पतंग होसी। आक्षेपी संचरेरे नाना योनी पावसी। पूर्ण ज्ञानसुख जेणें तें तूं कारे नेणसी। अविनाश तेंचि तूरें वायां सबळ कां करिसी ॥८॥ परब्रह्म बाप तुझा इच्छा माया हे तुझी। अंशरे तूं तयाचा सबळ कारे बुद्धि तुझी। अज्ञान तुज व्याली ते नव्हे कारे वांझी बा नव्हेचि कां वांझी। तेणें तूं भुललासी ऐक शिकवण माझीं ॥९॥ परतत्वा आणि तुज बाळा नाहींरे भिन्न। अनादि तूं आहेसिरे परि हें न देखें मन। अकर्म कर्म केलें तेणें जालें अज्ञान। निष्कर्म होय जेणे तें तूं करी कारे ज्ञान ॥१०॥ पुत्र म्हणे वो माते मी अनादि कैसा। मी माझें जाणता वो मी अज्ञान कैसा। उकलु केवि होय तुज कैसा भरंवसा जीवनन्मुक्त होय दृष्टि दाखवी तैसा ॥११॥ पापपुण्य दोन्ही मजसवेंचि असती। करणी माते थोर त्याची ते आहे चालती। उकलु केंवि होये होय तें सांग मजप्रती। बुझावि वो माझे माते ऐसी करी विनंति ॥१२॥ केली कर्मे जरि तुवां न संडिवो पाठी। कवणतें प्रकासील हे विपरीत गोष्टी। उकलु केवि होय ते सांग मजप्रती। जेणें मी दृढ होय ते बुद्धि देई वो लाठी ॥१३॥ अनंत कर्मे मातें घडलीं वो मज। तीं तंव न संडिती ऐसें ज्ञान पैं तुज। तरी म्या काय कीजे केविं पावणें सहज। दुर्घट वाट आहे कैशानि निफजेल काज ॥१४॥ उठी पुत्रा जाई बाळा तीर्थेरे हिंड। साधु आणि संत जेथें असती बा उदंड। तयामाजी आत्मज्ञानी जो कां न बोले वितंड। तो तूं गुरु करि तो तुज बुझवील प्रचंड ॥१५॥ ज्ञानविज्ञानेरे गुरु मुखे बुझसी। विचारूनि अनुभउ आपेंआप जाणसी। जेणें जालें अनंत सिद्ध तें तूं कारे नेणसी। हरिहर ब्रह्मादिक तेहि ध्याती तयासी ॥१६॥ नव्हतां बाळा नादबिंद तैं तूंरे सहज। तेंथेचि तूं होतासि ऐसें ज्ञान पैं तुज। तेथे तूं लीन होई करी आपुलें काज। संसार साभिमानें घेई तेथीचें व्याज ॥१७॥ उपजतां गर्भ अंधु जया नाहीं प्रकाशु। पूर्वी तो योगभ्रष्ट चुकवि गर्भवासु। गुरुवचनी भजे पुत्रा परब्रह्मी करि वासु। अमृत सेवि पारे झणी होसी उदासु ॥१८॥ तुज ऐसें रत्नबाळा कवणेरे केलें। आणिक अनंत जीव चराचर भुतले। तेणेरे इच्छामात्रें क्षणामाजी रचीलें। तें तूरे नेणसीच येवढें कैसे चुकविलें ॥१९॥ सांडि बाळा काम क्रोधु हा दुजेन विचारु। जिहीं तुज अंतरविलें त्याचा करि का संहारु । गुरुचरणीं भजे पुत्रा तो तुज देईल विचारू। अविनाशपद पावशी मग तुज होईल निर्धारु ॥२०॥ सहज यम नेम गुरुकृपारे करी। आसनें प्राणायाम प्रत्यहार उदरी। धारणा होईल तुज मग ध्यान विचारीं। समाधी होई पुत्रा तूं जाण निरंतरी ॥२१॥ षडचक्रा वेगळेरे तें जाणिजे कैसे। अनुभवें जाणसीरे तुज सहजे प्रकाशें। तैसा हा ज्ञानयोगु गुरुकृपारे दिसे। अज्ञान निरसूनियां ज्ञान पैं समरसें ॥२२॥ अव्यक्त तिहीं लोकीचें तुजमाजिरे असे। त्रैलोक्य जयामाजि तैं तुज पैं दिसे। अविनाशपद होंसी मग अज्ञान नासे। तुजमाजि अमूर्तरे आपेंआप प्रकाशे ॥२३॥ अव्यक्त अगोचर मज होईल निरंतर। इंद्रियें स्थिर होती हे तुझे अंकुर। अविनाशपद होसी मग नहीं येरझार। अष्टमहासिद्धि जया वोळगती तुझें द्वार ॥२४॥ ऋद्धिसिद्धि मायासिद्धि यासि दिधली। तुर्याचिया उपरिरे ज्ञान उन्मनी देखिली। आशापाश सबळ माया जीवबुद्धि निमाली। गर्भवास चुकलारे कैसी बुद्धि स्फुरली ॥२५॥ संतोषोनि कृपादृष्टी ज्ञान पैं लाधविला। आत्मतत्त्व बोधु तुज प्रकाशुरे जाला। समरसिं सोहंसिद्धि प्रबोधु निमाला। निवृत्ति प्रसादेंरे ज्ञानदेवो बोलिला ॥२६॥

७३६. ॐकार अक्षरबीजरे। अमित्य भुवनीं प्रकाशुनि गेलेरे। तें मकराचे पोटीं आहेरे ॥१॥ उकाराचा शेंडा पाहीरे। एकविसा मंदराचळा भेदुनि गेलेरे। मा वेद बीज वेगळें परात्पर पाहेंरे ॥२॥ मागें बोलिलों तें ज्ञानरे। चोविसा अक्षरी संध्यावळी सोंगरे। परी त्या अक्षराचें अमित्य

आहेरे॥३॥ चारि म्हणों तरी नव्हेरे। साही म्हणों तरी भूललीं बापुडी। मा अठरांची दशा ते काईरे॥४॥ दाहा श्रुती शिऊ बोलरे। आठरा श्रुति विष्णुचें वचन परि कल्पांती अक्षर न सरेरे॥५॥ पूर्णापूर्ण ऐसें ब्रह्म बोलतीरे। तेथें पूर्ण अपूर्ण दोन्ही नाहीं। मातें कांही बाहीं अक्षररे। तया रूप ना रेखा आहेरे॥६॥ तेथें त्रिकाळ जतिगति नाहीरे। नाहीं इंद्र चंद्र नाहीं आकाश भूमीरे। नाहीं आप तेज वायो तेथेरे॥७॥ तरी वेद अक्षर गिवसावें कैसेरे नगणित गुण गेलेरे॥ सिद्धि ना साधक मंत्र ना तंत्र। मा तेथें जटा क्रम पद कैचेरे॥८॥ स्थूळ न सूक्ष्म नव्हेरे धातु नव्हे मातु नव्हेरे। मा कांही नव्हे तें अक्षर होयेरे॥९॥ पर नव्हें परतर नव्हेरे। जाति नव्हें अजाति नव्हे। मा कांही नहोनियां एक होयरे॥१०॥ बुद्धि नव्हे शुद्धि नव्हेरे। वाट नव्हे घाट नव्हे मा घटाटीत नव्हें। मवाळा मवाळ नव्हे नव्हेरे॥११॥ साच ना दृश्य नव्हेरे। दृश्य नव्हे मा अदृश्य नव्हेरे। वेदीं बोलिलें तें होयरे॥१२॥ सप्तपाताळा तळ नव्हेरे। एकवीस स्वर्गाहूनी आगळेंचि आहेरे। बाविसांहुनी परतें पाहीरे॥१३॥ तेथें नादु बिंदु नाहीरे। चक्षु पाद नाहीं कर देहरे। दिहादिक चतुर नाहीरे॥१४॥ भ्रमु नाहीं भुली नाहीरे। ते सतराव्याचे कळे प्रकाशलेरे। परि तेथें मन होये ठायीरे॥१५॥ आतां सातवें पांचवें बोलें ज्ञानरे। तेथें पांचही नाहीं मा सातही नाहीं। मा तें अक्षर शतसहस्त्रां वेगळे आहेरे॥१६॥ मागें चौदा बोलियलीं साचरे। ज्ञानासि विज्ञान जाहालें मा शेखीं बुडाला तो वायारे॥१७॥ मागें अक्षरें बोलिलीं बहुतेरे। पिंड ब्रह्मांड जयापासून जाहालें। परगुणीं व्यापिलें ज्ञान सुखरे॥१८॥ सुखादि सुख तें म्हणोरे। तरि अमित्य वेदाची वाणी खुंटली। मा परीलक्षालक्ष नये परिमाणारे॥१९॥ त्रिदशा त्रिदश पंचदशा पंचदश नेणतेरे तें शतसहस्त्रांचे शेवटीं आहे नाहीं ऐसे दिसेरे॥२०॥ आत्मा परमात्मा दोन्ही सखेरे। ऐसें चतुरी बोलतां लोक भुलविलेरे। परि अनुमाना नये वेगळा आहेरे॥२१॥ पासष्टि पुढें अद्वैत नेमूरे। द्वैत ना अद्वैत भेद ना अभेद अक्षरझेंपकु तोचि भला रे॥२२॥ बुझों गेला पाहों गेलारे। तेथें दुसनावना तयासि जाहालें। त्या ठकाठक मौन्या मौन्य पडिलेरे॥२३॥ तेथें जाणोनी नेणे पै जाहालेरे। मन इंद्रियां लयो जाहाला। अमित्य तेज ध्वनी उमटलेरे॥२४॥ गगना परतें अक्षर दिसेरे। दिसोन न दिसे तें वेदांचें देखणें। तेथें साहांसी शुद्धबुद्ध परतेरे॥२५॥ नव्या नऊव्यासि शून्यरे। ऐसें राधा जंत्र भेदावें कवणें। तें कृष्णावतारी भेदियेलें पुरुषोत्तमेरे॥२६॥ आता नव्या नउ भाग करीरे। ते अर्जुनामुखीं घालता भागला। तें अक्षर निराक्षर। आकार उकार मकार माते वळलेरे॥२७॥ सात बेचाळीस घालीरे। पांच विसा तेथें गुणाकारी आटलें निरालंब ना पावलें घटाघटीरे॥२८॥ तें व्योमाकार रूप नव्हेरे। तेज नव्हे त्रिकुट नव्हेरे। मा गोल्हाट नव्हे। मंडळा मंडळी मंडळा परतेरे॥२९॥ अमित भुवनें चाकें त्यासिरे। निरालंब आंख घालूनिया बैसे। ते तुरंगेंविण अक्षर कैसें चालेरे॥३०॥ तें नित्य नव्हें अनित्य नव्हेरे। आकारा खूण गुढारु गुढारीलें। परि त्या विवरीं न दिसे अक्षररे॥३१॥ बारावें भेदूनिया जायेरे। तेराव्याचें अग्राअग्रीं दिसे। तें परेहूनि परतें आहेरे॥३२॥ आठ कोटी लक्षी पाहेरे। तें मुक्त नव्हेरे अमुक्त नव्हे मा अक्षरही नव्हे सिद्ध आहेरे॥३३॥ पिवळे नव्हे पांढरें नव्हे काळे नव्हेरे। रंग रंगाकार नव्हे अनंतध्वनि नव्हे। अक्षर नि:शब्द निरंजन नव्हेरे॥३४॥ षष्ठ नव्हे सप्त नव्हेरे। मन नव्हे पर नव्हेरे। तें बुडालें बुडोनी नव्हेरे॥३५॥ सत्ताविसें एकतिसें दाटूनि पाहेरे। छत्तिसांचा चौभागीं भागों तरी अप्रमिता। अप्रमीत जाहालारे॥३६॥ सहस्त्र शून्य सहस्त्रां ठायीरे। बावन अक्षरीं गुण निवडति। ते कूटस्थ कुटाकुटीं नाहींरे॥३७॥ मागें बोलिलासि भु:भुकारुरे। स्वर ना भेद सत्य वेद रूप बोलियेले तूं आपणयाते

नेणतां। नेणोनि म्हणविसी ब्रह्मरे॥३८॥ विकासलें व्योमाकारे। तिन्ही देव तिन्ही वेद जाहाले। मा तरी खुण चुकोनियां माघारे मागूति मुरडलेरे॥३९॥ हा अनुवाद नको बोलोरे। नष्टा हातीं निजपद दिधले। ब्रह्मअन्वयें सोडून नको बोलोरे॥४०॥ वाडा परिस वाड आहेरे। एकुणासवे अक्षरी मंत्रा साधु गेलासी परि तें काहीं। नाहीं ऐसे जालेरे॥४१॥ रकारीं बोध बोलसीरे। तेथे घटीतेविघटीतें के न पडेची। त्या मंडळामंडळीं गुंतलासीरे॥४२॥ नकारु रूप शून्यरे। सहस्त्रचिये वाटे एक फांळले। माते अक्षरासि भेदु नाहीरे॥४३॥ यम नेम काय करिसीरे। गुरुमुखें सांगतां वाया भ्रमलें। आपणपा नाहीं शुद्धिरे॥४४॥ भांबाविले मन बुडविलेरे। मार्गू ठावा न पडता उगलें। मध्येंचि बुडोनि आलेरे॥४५॥ गति मति वेदु बोलेरे। सातवी मातृका सहस्त्रीं वाटियेली। तेथें गुणलयो जाहालारे॥४६॥ दिधलें मन पांचा ठायींरे पांचे पांच भागु विभागु जाहाला। तेथें ब्रह्मरसु रसीं मुरालारे॥४७॥ वासुकीमणी मंथन केलेरे। तिहीं देव तेथें संध्यावळी ठायीं बुडाले। मातरि सहस्त्रमुखीं लेखा कायसारे॥४८॥ साहाव्याचि गोठी वळून पाहेरे। अगाध ब्रह्माच्या गोष्टी। करिती सत्य ब्रह्म त्याच्या पोटीरे॥४९॥ ध्याना कल्पितां न पाविजेरे। आपुला आत्मा शुद्ध चैतन्य देखिल्या तेंचि तें। ब्रह्म ब्रह्माकार होयरे॥५०॥ मधुर मधुर अनुभव रसुरे। येथें संवादु ना गोडि तिखट ना पैत्यतें अंबर अंबराकाररे॥५१॥ हरि म्हणिजे ठकार शून्यरे। पांचवे पूढें बिंदुलें दिधलें। तें नववें पुसूनि जायरे॥५२॥ विधि म्हणसि ध्याना अगोचररे। जयाचा एक्याण्णउ मातृका भेदिल्या तें त्रिपुटी फुटोनि जायरे॥५३॥ योगि मंत्र येकु साधूरे। आटि जनीं तेथें उभें राहूनियां। अकराव्याचें तोंड मारीरे॥५४॥ येणें जाणें परि नाहीरे। सिद्ध साकार भाविसी काय। मा अयोगायोगु तें नव्हेरे॥५५॥ नाटटा भाविसि कायरे। नकारशब्दें नामात्मक नाहीं। तें नहोनि जायरे॥५६॥ पराहूनि परता आहेरे। अमित व्योममंडळें भेदूनि तें मातृकेचें नांव कायरे॥५७॥ चेउ आलिया निजसुदा नव्हेरे। निज चेतविलें जागें निजविलें। दगदगी फुटीं घालीरे॥५८॥ तेथें बावन्न त्रेपन्न सक म्हणतीलरे। त्यासि लावावया मा आणिक बंधु नाही रे॥५९॥ यासीं उपावो नाहीं अपावो नाहीं रे। नाहीं नाहीं तेथें कांही तें घेऊनि राहीरे॥६०॥ तत्त्वातत्त्वा भेदु नाहींरे। महातत्त्वाचे सामर्थ्ये जाशील तेथे आपण नाहीं कांही रे॥६१॥ एका शेंडा येका डिरिरे। एकतत्वें महत्तत्व ते तळातळ भेदियेले। वोंकारें भेदियेले परात्पररे॥६२॥ सत्य व्योमा शून्य देई रे। चौदावें बुडवूनि घालूनि पाहे। मा पुढें वेद बीज सांगेनरे॥६३॥ जटि ब्रह्मऋषि बोलतिरे। पदपदार्थ कर्म खंडी विखंड। मा त्यासि नकळे त्या अक्षराचे पारूरे॥६४॥ कर्मकांडीं एक बीज आहेरे। संकल्पीं विकल्पीं एको विष्णु बोले। परि ब्रह्मार्पण नाहीं ठायी रे॥६५॥ एकुपदार्थ बोलेरे। तें चोविसाक्षरी संध्यावळी बीज मिरवलें। एकु आपो नारायण म्हणेरे॥६६॥ एक ध्रुव ध्रुव म्हणति यजुरिरे। यजन याजन अध्ययन अध्यापन। दान प्रतिग्रहो नाहींरे॥६७॥ रुकारू म्हणती मूळरे। आब्रह्म म्हणती परतल्या दृष्टि मा साम मागति फळरे॥६८॥ सत्यलोकीं विरिंचि विचरेरे। शंकरें विश्वाचि प्राहुति केली। हरि करि ठेवा ठेवींरे॥६९॥ बोध्य म्हणती निज रूप जाणेरे। गण म्हणति सिध्धु पातलियां। शक्तु म्हणे शक्ति पोटींरे॥७०॥ कमळें घेऊनि उभेंरे। उदयो अस्तु नमस्कारु करिती। मातें असक्यासी न पडे अक्षर ठावेंरे॥७१॥ एक शैव म्हणति शिवज्योतिर्लींग पाहोरे। भगता भागवता न पडेचि ठायीं। माते पावलें निवृत्तिचे पाय प्रसादीरे॥७२॥ निवृत्ति म्हणे सोपाना भलारे। अक्षराचें वर्म अवघे पूर्णपक्ष जाहाले। तें अक्षर तुम्हांसि भेदलेरे॥७३॥ मूळ सांडि शेंडा सांडि

रे। न घडतां घटण घटाघटीं केली। तरी ब्रह्मब्रह्मीं चोखाळलेरे॥७४॥ अचिंतन चिंतन प्यालीरे। ज्ञान सोपानाचा निवृत्ति चोढळी। तें अक्षर त्रिपन्नी तिन्ही मोडलीरे॥७५॥ ब्रह्मसमुद्र घोंटिलारे। तृषेक्षुधेवीण पंचप्राण पै खादलेरे। तिसाव्यासि मारिलें तुम्हींरे॥७६॥ धगधगीत ब्रह्मशस्त्र आहेरे। अमित ब्रह्माचे तेज प्रकाशित। तेज तेजाठायीं विरेरे॥७७॥ एक रोप कूपीं उगवलारे। त्याचे अनंत गुण मा अनंत पार मा। तो विष्णु भला भलाभलारे॥७८॥ ते दोघे कर्मधर्म साधक भलेरे। ते अमित्य भुवनें धांडोळितां भागले। परी ते निर्गुण अक्षराचि नलगे सोयरे॥७९॥ आदिदेवी माया जालीरे। एक वैष्णवी म्हणती अद्भुती। म्हणती चौथी तिघांसि खायरे॥८०॥ निरंजनीं एकी उभीरे। सिद्ध साधक मा वेदांत बोलिजे। ते रंजना संध्यावळी मायारे॥८१॥ अठरावर्ण अठरा न्यातिरे। चहूंची वेदीं सांगितली संमति। ते निरालंबी नाहीं स्थितिरे॥८२॥ सुयीच्या अग्रीं दाभण ठेवावेरे। अमित्य ब्रह्मांडे तयावरी जालीं। ऐसी निज ब्रह्माक्षरीची नकळे मायारे॥८३॥ मायाकोश आड जालेरे ते तेजी तेज फोडुनी गेले। साते संस्वरूप अक्षर कवणे ठायीरे॥८४॥ चौदा चारि चौदा घालीरे चौदा चौके चौदा वांटूनि गेले। माते ब्रह्मांडाची वाट कोणरे॥८५॥ अक्षरा मागें अक्षरसहस्त्र जालेरे। लक्षलक्षाची क्रोडी क्रोडीची अनंत वाटाघाटी। निघंटीं पाहिल्यारे॥८६॥ चतुर बुद्धि सांगवलेरे। चतुराननु चौमुखीं खांचावला। पंचमुख सहस्त्र मुख खुंटावलेरे॥८७॥ तळवा घोंटी जानु नाभि वक्षस्थळी कंठ शेंडे गेलेरे। शेंडिच्या आग्रीं चौदा भुवनें मावळलीं। ते विराट लया लक्ष गेलारे॥८८॥ अटत घाटत घटिलीरे। तेथे नादु नाहीं स्पर्श नाहीं। कांही नाहीं ते अवघी लया पाहिरे॥८९॥ ऐसा उत्पत्ति गोळकु। पिंड ब्रह्मांड गोळकु सांगितलारे। ठाऊकें नव्हे म्हणोनि बुडालें। त्या अवताराचा काय ठावोरे॥९०॥ देवऋषि मुनि शुकादिकारे। साही अंगें बोलोनि गेले। मा त्या चहूंचा गड संदेह पडलारे॥९१॥ तेथें सत्तावन्ने सहस्त्र धातूरे। एक ज्यापासूनि मोवितां भागले। अमिता मुखीं वर्णितां गेलेरे॥९२॥ शून्य वोढिलें निरशून्य भेदिलें पाहारे। देवादेवो दैवतें बोलती। तें ब्रह्मज्ञान सोपाना कर्णपुटीं पेरियेलें ब्रह्मरे॥९३॥ श्रवणेंविण ऐकिलेंरे। मनेंविण मन बुडालेरे। मागें गिवसितां गिवसितां स्वस्वरूपीं आहेरे॥९४॥ निवृत्ति म्हणे ज्ञानसोपाना दोन्ही भागीं राहें। संध्यावळी अजपा मंत्रु साधन। त्याणें उपदेशें तें तें ब्रह्म पाहेरे॥९५॥ म्हणती मनासी नयन आहेरे। ते मनचि नाहीं मा अवघे ब्रह्मचि पाहीं। मा माझा हस्तातळीं उभें राहारे॥९६॥ अचिंतन चिंतूं नये। संध्या रागु मंत्र पंचकरणें मथिला। त्या अक्षरासि नाहीं भेदुरे॥९७॥ तें ब्रह्माब्रह्म साररे। त्रिकुटा वेगळें गोल्हाटा वेगळें। न चुकत चुकलें पाहिरे॥९८॥ रविसोममाथीं माथा बैसले ते आधारेवीण उदरेवीण सामावले आहेरे॥९९॥ चिदप्रचिद तेजा तेज नव्हेरे। अमित भुवनें जयाचेनि आहारळलीं। तेथुनि निःशब्दापासुनी वेद जाहालारे॥१००॥ ब्रह्मवृक्षव्योमीं फुललारे। त्यासि शाखा ना मूळ ना बीज ना अंकूर। तें अक्षर फळलें बीण फळ देखारे॥१०१॥ सहस्त्र खांदियांचें एक झाडरें। जयाचीं विश्वपत्रें विश्वशाखा। मा त्याचें अंगकूपीं एक ब्रह्म फळरे॥१०२॥ यजुरि ऐशा ऐशा शाखा जाहाल्यारे। ऋगीं सप्त शाखा जाण बोलियेले। ते अथर्वण राहें श्याम फळरे॥१०३॥ ऐसें बोलता अनंत फळरे। परि त्या अक्षरासि नलगे फूल फळ ज्याचि ते निष्कामीं निष्कर्मी फळेंविण कैसें फळेंरे॥१०४॥ आणिक एक सांगेन गूढरे। त्यासि सोळा ना बारा। नवासि शून्य देतां दहा अकराही शून्य मिळेरे॥१०५॥ ऐसें छत्तिसा गुणांचें बत्तिसावें वाटारे। मिळाले पंचीकरणीं मिळाले संध्यावळी परि त्या नकळे अक्षराचा भेदुरे॥१०६॥ एकावन्नें

बावन्ने मिळालें सत्तावन्नेरे। परि तें अक्षर निरंजन निराकार निर्गुण। ऐसे गुणिती पैं ते शाहाणेरे॥१०७॥ अडतीस पंचविशी पांच मारीरे। निरशून्याकार भृंगा भेदून गेले। मा परि निःशब्दीं परा वाट पाहेरे॥१०८॥ धगधगित एक सुरि होतीरे। ते व्योमाचे पोटीं फोडूनि भेदली। ते अक्षरासि वाहे वाटरे॥१०९॥ एक आप एक परेरे। पिंडब्रह्मांडाचे अक्षरीं निवडलें। सातवें गोल्हाट भेदिलेरे॥११०॥ तेथें विजया एक राणीरे। काळातें खाउनी महाकाळ गिळिला। ब्रह्मवोवरीं तिचें नांवरे॥१११॥ तेथें एक होता अक्षर सिद्धावळीरे। अंत काळ तम मुख जाला। शब्द ने देखे फिरोनी आलारे॥११२॥ आतां एक सांगेन अमित व्योमावरि फुललेरे। त्या अक्षरा बांधूनि वदेंविण धरिलेरे। ज्ञान सोपानासि म्यां दिधलेंरे॥११३॥ ज्ञानज्ञानें भला म्हणवीरे। सोपान सिद्धि निधि ब्रह्म पावलारे। तेणे ज्ञाना ब्रह्मबोध जालारे॥११४॥ अद्वैत पंथ कैसारे। ऐक्यवादु वेद बोल बोलतीं वचनें। ते मिळणी ब्रह्मीचे सांगेन त्रिसंध्याकाळीरे॥११५॥ ते वर्ण कवणा नेघेपवेरे। अनुभविया अटक कुठले। मग ते ज्ञानी म्हणती वांयारे॥११६॥ जेथें मौन्यामौन्य साध्य नव्हेरे। पांच माळनि सस्वरूप होतें। मा तेचि ते अनुभवची खुणरे॥११७॥ मनीं शंका धरूं नको कांहींरे। चतुर्देहांसहित मन मावळी। मा तरि ब्रह्मबीज तूंचि होशीरे॥११८॥ सा सा सा चौदावरि ठेवीरे। हां भेद कोणी जाणितला म्हणती। तरी त्यासी मानु मी देईन म्हणति निवृत्तीरे॥११९॥ आतां एक गुह्य परम गुह्यरे। तें अक्षरां शेवटीं दाही दिशे नाहीं। तें सहस्त्र लक्षीं गुणी ते आहेरे॥१२०॥ हें गुणीता शास्त्र जालें ज्योतिषीरे। ते वेदाच्या पोटीं धांडोळित अहाती। त्या अक्षराचा न कळे अंतीं अंतूरे॥१२१॥ भडस्त्रिंग भडभिंग भयानक जालेरे। परि त्यासि सहस्त्रसिद्धि सहस्त्रमुखीं बुद्धि। मा बावन्नअक्षरा वेगळे तें वाटेरे॥११२॥ ऐसे अमित्य भुवनाचे साटे मावळलेरे। चंडाहुनि प्रचंड थोटावलें। तें अक्षराचे नकळे पारुरे॥१२३॥ जै निःशब्द अंकुर फुटेरे। वायुसी मोवणी आपासि भिजवणी। व्योमाची ठेवणी कवण ठेवीरे॥१२४॥ मनासि नाहीं मारणीरे। तेजासि नाहीं धरणी। धरूं गेला तो वांयाविण श्रमलारे॥१२५॥ परि एक निर्वाण सांगेनरे। आम्ही तिघी मा जेथुनी तुषाकारलो। ते जीवनीं जीवन जैसें मिळोनि गेलें। मा तैसी परि जाली आम्हा तुम्हारे॥१२६॥

## हरिपाठ.

७३७. देवाचिया द्वारीं उभा क्षणभरी। तेणें मुक्ति चारी साधियेल्या॥१॥ हरि मुखें म्हणा हरिमुखें म्हणा॥२॥ पुण्याची गणना कोण करि॥३॥ असोनि संसारी जिव्हे वेगु करी। वेदशास्त्र उभारी बाह्या सदां॥४॥ ज्ञानदेव म्हणे व्यासाचिये खुणें। द्वारकेचे राणे पांडवां घरीं॥५॥

७३८. चंहूं वेदीं जाण साहिशास्त्री कारण अठराहीं पुराणें हरिसी गाती॥१॥ मंथुनि नवनीता तैसें घे अनंता। वायां व्यर्थ कथा सांडी मार्गु॥२॥ एक हरि आत्मा जीवशिवसमा। वायां तूं दुर्गमा न घाली मन॥३॥ ज्ञानदेवा पाठ हरि हा वैकुंठ। भरला घनदाट हरि दिसे॥४॥

७३९. त्रिगुण असार निर्गुण हें सार। सारासार विचार हरिपाठ॥१॥ सगुण निर्गुण गुणाचें अगुण। हरिवीण मन व्यर्थ जाय॥२॥ अव्यक्त निराकार नाहीं त्या आकार। जेथोनि चराचर हरिसी भजे॥३॥ ज्ञानदेवा ध्यानीं रामकृष्ण मनीं। अनंत जन्मोनि पुण्य होय॥४॥

७४०. भावेवीण भक्ति भक्तिवीण मुक्ति। बळेंवीण शक्ति बोलूं नये॥१॥ कैसेनि दैवत प्रसन्न त्वरीत। उगा राहे निवांत शिणसी वाया॥२॥ सायास करिसी प्रपंच दिननिशीं। हरीसी न भजती कोण्या गुणें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे हरि जप करणें। तुटेल धरणें प्रपंचाचें॥४॥

७४१. योग याग विधी येणें नव्हे सिद्धि।

वायाचि उपाधि दंभ धर्म॥१॥ भावेंवीण देव नकळे नि:संदेह। गुरुविण अनुभव कैसा कळे॥२॥ तपेविण दैवत दिधल्यावीण प्राप्त। गुजेवीण हीत कोण सांगे॥३॥ ज्ञानदेव सांगे दृष्टांताची मात। साधुंचे संगती तरुणोपाय॥४॥

७४२. साधु बोध झाला तो निरोनिया ठेला। ठायींच मुराला अनुभव॥१॥ कापुराची वाती उजळली ज्योति। ठायीच समाप्ती झाली जैशी॥२॥ मोक्ष रेखें आला भाग्यें विनटला। साधूंचा अंकिला हरिभक्त॥३॥ ज्ञानदेवा गोडी संगती सज्जनीं। हरि दिसे जनीं वनीं आत्मतत्वीं॥४॥

७४३. पर्वताप्रमाणे पातक करणें। वज्रलेप होणें अभक्तांसी॥१॥ नाहीं ज्यासी भक्ति तो पतित अभक्त। हरिसी न भजत दैवहत॥२॥ अनंत वाचाळ बरळती बरळ। त्यां कैसेनि गोपाळ पावे हरि॥३॥ ज्ञानदेवा प्रमाण आत्मा हा निधान। सर्वांघटीं पूर्ण एक नांदे॥४॥

७४४. संताचे संगती मनोमार्गगती। आकळावा श्रीपती येणें पंथे॥१॥ राकृष्ण वाचा भाव हा जिवाचा। आत्मा जो शिवाचा रामजप॥२॥ एकतत्वनाम साधिती साधन। द्वैताचें बंधन न बाधिजे॥३॥ नामामृत गोडी वैष्णवां लाधली। योगियां साधली जीवनकळा॥४॥ सत्वर उच्चार प्रह्लादीं बिंबला। उद्धवा लाधला कृष्णदाता॥५॥ ज्ञानदेव म्हणे नाम हें सुलभ। सर्वत्र दुर्लभ विरळा जाणे॥६॥

७४५. विष्णुवीण जप व्यर्थ त्याचें ज्ञान। रामकृष्णीं मन नाहीं ज्याचें॥१॥ उपजोनी करंटा नेणे अद्वैत वाटा। रामकृष्णी पैठा कैसेनि होय॥२॥ द्वैताची झाडणी गुरुविण ज्ञान। तया कैचें कीर्तन घडेल नामीं॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे सगुण हें ध्यान। नामपाठ मौन प्रंपचाचें॥४॥

७४६. त्रिवेणी संगमी नाना तीर्थे भ्रमी। चित्त नाहीं नामीं तरि तें व्यर्थ॥१॥ नामासि विन्मुख तो नर पापीया। हरिविण धावया नपवे कोणी॥२॥ पुराणप्रसिद्धि बोलिले वाल्मीक। नामें तिन्ही लोक उद्धरती॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे नाम जपा हरीचें। परंपरा त्याचें कुळ शुद्ध॥४॥

७४७. हरि उच्चारणीं अनंत पापराशी। जातील लयासी क्षणमात्रें॥१॥ तृण अग्निमेळें समरस झालें। तैसे नामें केलें जपतां हरि॥२॥ हरि उच्चारण मंत्र हा अगाध। पळे भूतबाधा भेणें तेथें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे हरि माझा समर्थ। न करवे अर्थ उपनिषदां॥४॥

७४८. तीर्थ व्रत नेम भावेंविण सिद्धि। वायांचि उपाधी करिसी जना॥१॥ भावबळे आकळे येऱ्हवीं नाकळे। करतळीं आंवळे तैसा हरि॥२॥ पारियाचा रवा घेतां भूमीवरी। यत्न परोपरी साधन तैसें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्ति निर्गुण। दिधलें संपूर्ण माझ्यां हातीं॥४॥

७४९. समाधी हरीची समसुखेंवीण। न साधेल जाण द्वैतबुद्धी॥१॥ बुद्धिचें वैभव अन्य नाहीं दुजें। एक्या केशीराजें सकळ सिद्धि॥२॥ ऋद्धि सिद्धि निधी अवघीच उपाधी। जंव त्या परमानंदी मन नाहीं॥३॥ ज्ञानदेवीं रम्य रमलें समाधान। हरीचें चिंतन सर्वकाळ॥४॥

७५०.नित्य सत्यमित हरिपाठ ज्यासी। कळिकाळ त्यासी न पाहे दृष्टि॥१॥ रामकृष्ण उच्चार अनंत राशी तप। पापाचे कळप पळती पुढें॥२॥ हरि हरि हरि हा मंत्र शिवाचा। म्हणती जे वाचा तयां मोक्ष॥३॥ ज्ञानदेवा पाठ नारायण नाम। पावीजे उत्तम निजस्थान॥४॥

७५१. एक नाम हरी द्वैत नाम दुरी। अद्वैत कुसरीं विरळा जाणे॥१॥ समबुद्धि घेता समान श्रीहरि। शम दमा वैरी हरि झाला॥२॥ सर्वांघटीं राम देहादेहीं एक। सूर्य प्रकाशक सहस्त्ररश्मीं॥३॥ ज्ञानदेवा चित्तीं हरिपाठ नेमा। मागिलिया जन्मा मुक्त झालो॥४॥

७५२. हरि बुद्धि जपे तो नर दुर्लभ। वाचेसि सुलभ रामकृष्ण॥१॥ रामकृष्ण नामीं उन्मनी

साधिली। तयासी लाधली सकळ सिद्धी॥२॥ सिद्धी बुद्धि धर्म हरिपाठीं आले। प्रपंचीं निवाले सांधुसंगें॥३॥ ज्ञानदेवी नाम रामकृष्ण ठसा। येणें दशदिशा आत्माराम॥४॥

७५३. हरिपाठ कीर्ति मुखें जरी गाय। पवित्रचि होय देह त्याचा॥१॥ तपाचे सामर्थ्यें तपिन्नला अमुप। चिरंजीव कल्प वैकुंठी नांदे॥२॥ मातृ पितृ भ्राता सगोत्र अपार। चतुर्भुज नर होऊनि ठेले॥२॥ ज्ञान गूढ गम्य ज्ञानदेवा लाधलें। निवृत्तीनें दिलें माझ्या हातीं॥४॥

७५४. हरिवंश पुराण हरिनाम संकीर्तन। हरिवीण सौजन्य नेणें कांही॥१॥ तया नरा लाधलें वैकुंठ जोडलें। सकळही घडलें तीर्थाटन॥२॥ मनोमार्गे गेला तो तेथें मुकला। हरिपाठीं स्थिरावला तोचि धन्य॥३॥ ज्ञानदेवा गोडी हरिनामाची जोडी। रामकृष्णीं आवडी सर्व काळ॥४॥

७५५. वेदशास्त्र प्रमाण श्रुतीचें वचन एक नारायण सार जप॥१॥ जप तप कर्म हरिविण धर्म। वाऊगाचि श्रम व्यर्थ जाय॥२॥ हरिपाठें गेलें ते निवांतचि ठेले। भ्रमर गुंतले सुमन-कळिके॥३॥ ज्ञानदेवी मंत्र हरिनामाचें शस्त्र। यमे कुळ गोत्र वर्जियेलें॥४॥

७५६. नाम संकीर्तन वैष्णवांची जोडी। पापें अनंत कोडी गेलीं त्याचीं॥१॥ अनंत जन्माचें तप एक नाम। सर्व मार्ग सुगम हरिपाठ॥२॥ योग याग क्रिया धर्माधर्म माया। गेले ते विलया हरिपाठें॥३॥ ज्ञानदेवीं यज्ञ याग क्रिया धर्म। हरिविण नेम नाहीं दुजा॥४॥

७५७. काळ केळ नाम उच्चारितां नाहीं। दोन्ही पक्ष पाही उद्धरती॥१॥ रामकृष्ण नाम सर्व दोषा हरण। जड जीवां तारण हरि एक॥२॥ हरि नाम सार जिव्हा या नामाची। उपमा त्या दैवाची कोण वानी॥३॥ ज्ञानदेवा सांग झाला नामपाठ। पूर्वजां वैकुंठ मार्ग सोपा॥४॥

७५८. नित्य नेम नामीं ते प्राणी दुर्लभ। लक्ष्मीवल्लभ तयां जवळी॥१॥ नारायणहरि नारायणहरि। भक्ति मुक्ति चारी घरीं त्यांच्या॥२॥ हरिवीण जन्म नरकचि पै जाणा। यमाचा पाहुणा प्राणी होय॥३॥ ज्ञानदेव पुसे निवृत्तिसी चाड। गगनाहूनि वाड नाम आहे॥४॥

७५९. सात पांच तीन दशकांचा मेळा। एक-तत्वीं कळा दावी हरी॥१॥ तैसें नव्हे नाम सर्वमार्गा वरिष्ठ। तेथें कांहीं कष्ट नलगती॥२॥ अजपाजपणें उलट प्राणाचा। तेथे ही मनाचा निर्धारु असे॥३॥ ज्ञानदेवा जिणें नामेंविण व्यर्थ। रामकृष्णी पंथ क्रमीयेला॥४॥

७६०. जप तप कर्म क्रिया नेम धर्म। सर्वाघटीं राम भावशुद्ध॥१॥ न सोडी रे भावो टाकीरे संदेहो। रामकृष्णीं टाहो नित्य फोडी॥२॥ जाती वित्त गोत कुळ शीळ मात। भजे कां त्वरित भावना युक्त॥३॥ ज्ञानदेवा ध्यानीं रामकृष्ण मनीं। तेणें वैकुंठभुवनीं घर केलें॥४॥

७६१. जाणीव नेणीव भगवंती नाहीं। हरि उच्चारणीं पाही मोक्ष सदां॥१॥ नारायणहरी उच्चार नामाचा। तेथें कळिकाळाचा रीघ नाहीं॥२॥ तेथील प्रमाण नेणवे वेदांसी। तें जीव जंतूंसी केंवि कळे। ज्ञानदेवा फळ नारायण पाठ सर्वत्र वैकुंठ केलें असे॥३॥

७६२. एकतत्त्व नाम दृढ धरी मना। हरिसि करुणा येइल तुझी॥१॥ तें नाम सोपेरे राम-कृष्णगोविंद। वाचेशी सद्गद जपे आधीं॥२॥ नामापरतें तत्त्व नाहीरे अन्यथा। वायां आणिका पंथा जाशी झणी॥३॥ ज्ञानदेवा मौन जपमाळ अंतरी। धरोनी श्रीहरि जपे सदां॥४॥

७६३. सर्व सुख गोडी सर्व शास्त्र निवडी। रिकामा अर्धघडी राहूं नको॥१॥ लटिका व्यवहार सर्व हा संसार। वायां येरझार हरिवीण॥२॥ नाम मंत्र जप कोटी जाइल पाप। कृष्णनामी संकल्प धरुनि राहे॥३॥ निजवृत्ति काढी सर्व माया तोडीं। इंद्रिया सवडी लपु नको॥४॥ तीर्थव्रतीं भाव धरी

ते करुणा। शांति दया पाहुणा हरि करी॥५॥ ज्ञानदेवा प्रमाण निवृत्तिदेवी ज्ञान। समाधि संजीवन हरिपाठ॥६॥

## जीर्ण हस्तलिखित प्रतींतील अभंग.

७६४. पांडुरंगकांती दिव्य तेज झळकती। रत्नकीळ फांकती प्रभा। अगणित लावण्य तेज पुंजाळलें। न वर्णवे तेथींची शोभा॥१॥ कानडा हो विठ्ठलु कर्नाटकु। त्यानें मज लाविलें वेधी। खोळ बुंथी घेऊनी खुणेची पालवी। आळविल्या साधुनेदी॥२॥ शब्देंवीण संवादु दुजेवीण अनुवादु हें तव कैसेनि गमे। परेहि परते बोलणे खुंटलें। वैखरी कैसेनि सांगे॥३॥ पायां पडू गेलों तंव पाउलचि न दिसे। उभाची स्वयंभु असे। समोर कीं पाठीमोरा न कळे। ठकचि पडिले कैसें॥४॥ क्षेमालागीं जीव उतावीळ माझा। म्हणवुनि स्फुरताती बाहो। क्षेम देऊं गेलें तव मीची मी एकली। आसवला जीव राहो॥५॥ बापरखुमादेविवरु हृदयींचा जाणुनी अनुभवु सौरसु केला। दृष्टीचा डोळा पाहूं गेलें। तंव भीतरी पालटु झाला॥६॥

७६५. अनुपम्य मनोहर। कांसे शोभे पितांबर। चरणीं ब्रिदाचा तोडर। देखिला देवो॥१॥ योगियाची कसवटी। दावितसे नेत्रपुटीं। उभा भीवरेच्या तटी। देखिला देवो॥२॥ बापरखुमादेविवरु। पुंडलिका अभयकरू। परब्रह्म साहाकारू देखिला देवो॥३॥

७६६. नाहीं जाती कूळ तुझें म्या पुसिले। परि मन मावळलें देखोनिया॥१॥ तुझेंचि कुवाडें संगिन तुजपुढें। तेणें मुक्तीची कवाडे उघडती॥२॥ दुजापाशी सांगतां वाटे लाजिरवाणें। हांसतील पिसुणें प्रपंचाची॥३॥ आतां उगवितांचि भले नुगवितां सापंडलें। ज्ञानदेव बोले निवृत्तीशीं॥४॥

७६७. नित्य धर्म नाम पाठ। तोचि वैकुंठीची वाट। गुरु भजनी जो विनट। तोचि हरिभक्तु जाणावा॥१॥ धन्य धन्य त्याचा वंश। धन्य तो आला जन्मास। तयाजवळी हृषीकेश। सर्वकाळ नांदतु असे॥२॥ रामकृष्ण स्मरण जप। तेंचि तयाचें अमुप तप। तो वास करील कोटी कल्प। वैकुंठ पीठ नगरीशी॥३॥ ज्ञानदेवी जप केला। हरि समाधीसी साधिला। हरिमंत्रें प्रोक्षिला। सर्व संसार निर्धारें॥४॥

७६८. उपजोनी नरदेहीं। जयाशी हरिभक्ति नाहीं। तोचि भूमिभारू पाही। व्यर्थ जन्म त्याचा गेला॥१॥ पशुप्राणी तया जोडी। नेघेचि हरिनाम कावडी। तो कैसेनि परथडी। नामेवीण पावेल॥२॥ जिव्हा बेडुकी चावट। विसरली हरिनाम पाठ। ते चुकले चुकले वाट। वैकुंठीची जाण रया॥३॥ बापरखुमादेवी निर्धार। नामें तरले सचराचर। जो रामकृष्णीं निरंतर। जिवें जपु करील रया॥४॥

७६९. रामकृष्ण जप सोपा। येणें हरती जन्म खेपा। संसारू तुटेल महा पापा। धन्य भक्त तो धरातळीं॥१॥ जया हरीची जपमाळी। तोचिं पडिला सर्व सुकाळी। तया भय नाहीं कदा काळीं। ऐसें ब्रह्मा बोलियला॥२॥ बापरखुमादेवी हरी। नामें भक्ताशीं अंगीकारी। नित्य सेवन श्रीहरि। तोचि हरीचा भक्त जाणावा॥३॥

७७०. अवघाचि श्रृंगारू डोईचे दुरडी। डोळेचि मुरडी परतोनिया॥१॥ देखिलें स्वरूप विठ्ठल नामरूप। पारुषेना चित्त त्याचे चरणाहुनी॥२॥ बापरखुमादेवीवरु विठ्ठल सुखनिधी। अवघीची उपाधी तुटली माझी॥३॥

७७१. कासवीचें तूप जेवी। आकाश घालीपां पेवीं। वांजेंचें बाळ खेळवी। रुदना करी रया॥१॥ पाहे पा नवल चोज। म्या देखिलें पा मज। गुह्यांचे गुज। जाणरे मना॥२॥ मृगजळ सागर भला। डोंगरें ओणवा विझविला। समुद्र तान्हेला। जीवनालागी॥३॥ ज्ञानदेव ऐसें म्हणे। कापुराची मैस घेणें। दुधावीण सांजवणें। भरलें दिसे॥४॥

७७२. जीवन कैसें तान्हेजत आहे। मन धाले

परि न धाये ॥ १ ॥ पुढती पुढती राजा विठ्ठल पाहे। निरंजनी अंजन लेईजत आहे ॥ २ ॥ आपुलें निधान आपण पाहे। निवृत्ति गाऱ्हाणें मांडले आहे ॥ ३ ॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठलाचे पाये। विसंबला क्षण माझा जीव जाऊं पाहे ॥ ४ ॥

७७३. अवचित वरपडी जालिये अंबुलिया। लाजिले आपुलिया सकळ गोता ॥ १ ॥ एकांतीचें सुख भोगी आपुलिया सरीसी। दोहीचि सरसी गती झाली ॥ २ ॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठल लाधला। मज घेऊनि गेला बाईये वो ॥ ३ ॥

७७४. अंबुला विकुनी पवित्र झाली। पोटीचीं बाळें कौतुकीं मारिलीं ॥ १ ॥ पापा वेगळी मी जाले वो नारी। विठ्ठला घरीं नादंतसे ॥ २ ॥ आशा तृष्णा नणंदा मारिल्या। शेजारीं राहविल्या संतसंगें ॥ ३ ॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठल भोगिला। मज पैं लाधला गुणेविण ॥ ४ ॥

७७५. पांचही वऱ्हाडी पांच ठायीं बोळविली। येरा दिधली मिठी देखा ॥ १ ॥ आंबुलियाचें सुख माझें मी भोगी। सेवेशीं रिघे अंगोअंगी ॥ २ ॥ बापरखुमादेवीवरु विठ्ठल जोडला। वेव्हारा मुकला बाईये वो ॥ ३ ॥

७७६. गरुवार जाली अंबुला व्याली। व्येउनिया मेली माझ्या ठाई ॥ १ ॥ जेथें ठाव ना ठेवणी निघाली कोनी। तेथें सुईणी हात नाहीं ॥ २ ॥ बापरखुमादेवीवरा विठ्ठली शेजबाज। सहज सहजाकार अंबुला देखा ॥ ३ ॥

७७७. ऐशिया माजी तो निज एकांती राहिला। विठ्ठल अनुसरला भावें एके ॥ १ ॥ नित्य प्रळय निद्रिस्त नित्य पळय मृत्यु। कल्पांती जीव जात मायाही नाहीं तेथ ॥ २ ॥ तेचि तूं होउनि राहे विश्वासी। ठायींच्या ठायीं निवशी अरे जना ॥ ३ ॥ तेथें नाहीं दुःख नाहीं तहान भूक। विवेका विवेक नाहीं तेथें ॥ ४ ॥ ऐसें तें पाहोनी तये तृप्ति राहोनी। तेंचि तूं जाणोनी होई बापा ॥ ५ ॥ बापरखुमादेवीवरु विठ्ठलुगे माये। स्वस्वरूपीं राहे तये कृपा ॥ ६ ॥

७७८. सखीप्रती सखी आदरे करी प्रश्न। जीव शिव पूर्ण कैसा दिसे ॥ १ ॥ सखी सांगे मात उभयतां ब्रह्म। नाहीं हो विषम हरीवीण ॥ २ ॥ सूर्य प्रकाश मही घटमठीं समता। तैसा हा उभयतां बिंब एका ॥ ३ ॥ बापरखुमादेवीवर विठ्ठल जिवाचा। व्यापक शिवाचा शिवपणें ॥ ४ ॥

७७९. सांग सखिये बाई मज हें न कळे। कैसा हा अकळे सम तेजें ॥ १ ॥ भाव दृढ धरी चित्ताची लहरी। प्रकृती कामारी सत्रावीची ॥ २ ॥ येरी म्हणे वाजट झाली हो पुराणें। समरस जाणे कोणे घरीं ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे आदिमध्य समता। सुखें पहातां चढे हातां ॥ ४ ॥

७८०. पूर्वप्रामी दैवयोगें पंगु जालो मी अज्ञान। विषय बुंथी घेउनिया त्याचें केलें पोषण। चालतां धर्म बापा विसरलों गुह्य ज्ञान। अवचटें गुरुमार्गे प्रगट ब्रह्मज्ञान ॥ १ ॥ दाते हो वेग करा कृपाळुवा श्रीहरि। समता सर्व भावीं शांति क्षमा निर्धारी। सुटेल विषयग्रंथी विहंगम आचारी ॥ २ ॥ शरण रिघे सद्गुरु पाया पांग फिटेल पांचाचा। पांगुळलें आपेआप हा निर्धारु पै साचा। मनामाजी रूप घाली मी माजी तेथें कैचा। हरपली देहबुद्धि एकाकार शिवाचा ॥ ३ ॥ निजबोध धवळा शुद्ध यावरी आरूढ पै गा। क्षीराब्धि वोघ वाहे तेथें जायपा वेगा। वासना माझी ऐसी करी परिपूर्ण गंगा। नित्य हें ज्ञान घेई अद्वैत रूपलिंगा ॥ ४ ॥ पावन होशी आधीं पांग फिटेल जन्माचा। अंधपंग विषयग्रंथीं पावन होशील साचा। पाडुरंग होसी आधी फळ पीक जन्माचा। दुष्ट बुद्धि टाकी वेगी टाहो करी नामाचा ॥ ५ ॥ ज्ञानदेव पंगपणें पांगुळली वासना। मुरालें ब्रह्मीं मन ज्ञेय ज्ञाता पुरातना। दृश्य हें लोपलें बापा परती नारायणा। निवृत्ती गुरु माझा लागो त्याच्या चरणा ॥ ६ ॥

७८१. संसार वो ग्रामीं गेला सांडुनी। माझे अंतःकरणीं माहियेर ॥ १ ॥ सासुरवासिनी मी वो परदेशिनी। कां नये अझुनी मूळ मज ॥ २ ॥ आणिक

एक अवधारा। मज दिधलें हीनवरा। माझें कांहीं सर्वेश्वरा न विचारिशी॥३॥ व्याली वेदना जाणे वांझ कांही नेणें। बालक काय जाणे तहान भूक॥४॥ तैसी ते नव्हे लेकुराची माये। कृष्ण माझी धाये मोकलिते॥५॥ आशा मनशा तृष्णा कल्पना चौघी नणंदा। पापीण रे चिंता सासू माझी॥६॥ सासुरा हा स्वार्थ कांही न विचारी परमार्थ। आतां करीन घात तयावरी॥७॥ दुरळ हा प्रपंच दुष्ट भावे आणि दीर। इहीं मज थोर कष्टविले॥८॥ काम क्रोध थोर बोलती बडिवार। मज म्हणती पोर निदैवाचे॥९॥ नैश्वर गहिवरु दाटतसे गळा। आसुवें ढळढळा गळताती॥१०॥ सासुरयाचे घरीं करित होते काम। अवचित विंदान मांडियेलें॥११॥ घरा सोळा सांधी बहात्तर कोठे। नवही दारवंटे झाडीत होते॥१२॥ चोळी व साउले हिरोनि घेतलें। उघडे पाठविलें माहेराशी॥१३॥ समर्थाची लेकी परि मी संताची पोसणी। विमानीं बैसोनि जाते देखा॥१४॥ बाप चक्रधरा रुक्मादेवीवरा। उबगला संसारा येऊं नेदी॥१५॥

७८२. पृथ:कारे कर्म आचरितां। विधि जिज्ञाशीं काय सत्ता। अष्टादश पुराणें नानामतें आचरतां। परि तयासी विधि विवेक न कळे तत्वता। कर्म कळा जयाची वाचा उच्चारिता। ऐशी नाना द्वंद्वें उपाधिकें जल्पती परि एकही नेणे तेथींची वार्ता रया॥ १॥ ऐशी भ्रांती साम्य बोलती सकळे। परि नकळे नकळे पूर्ण सत्ता रया॥२॥ निजब्रह्म बुद्धि नेणसी। गव्हारा वाउगा का शिणशी। या साठीं भ्रमुनिया बरळशी। पहिलें नव्हे तुजसंकल्पें करिशी। नाना गोष्ठी रया॥३॥ आतां अथातो धर्मजिज्ञासा ब्रह्म जिज्ञासिक वचन। हें तंव वेदीचें प्रमाण। तरी वेदे जें वदवितें नकळे वेद कळा लय लक्ष धारण। पूजा समाधीचेनि यज्ञ यागादिके कर्मे। जपतप अनुष्ठान नाना उपासना मंत्रयंत्रादि साधनें। धांडोळितां परि ते एकही न घडे ब्रह्म जिज्ञासिक वचन। येणें सुखासाठीं बापा होशी पै हिंपुष्टी स्वानंद जीवन सुख आहे अन रया॥४॥ नाना अर्थवाद उपाधि शब्दज्ञानें तेणें। केविं शुद्ध होती याचीं मनें। नाना मुद्रा संकल्पाचिया वाढविंता तेणें। केंवि पाविजे ब्रह्मस्नानें। मी ब्रह्म ऐसें शब्दें वाखाणु जाशी तरी तेणे। ब्रह्म ऐसें केंवि होणें। ब्रह्माहमस्मि बोध वाचे उच्चारितां हेहीं अहंकाराचें लेणें। आतां परतें सकळही वाव जाणोनिया कांही आपलें स्वहित करणे। बापरखुमादेवीवर विठ्ठल चिंतिता निजसुखाशीं येऊं नेदी उणें॥५॥

७८३. आठवितों तूंचि जवळिके। नाठवशी तरी निजसुखें। आठऊं ना विसरू पाहे। तंव सगुणचि हृदयी एक रया॥१॥ तुझ्या नामाचा आठऊ रूपाचा आठऊ। ध्यानांचा आठऊ। असे मना रया॥२॥ विसर पडावा संसाराचा। आठऊ हो तुझिया रूपाचा। येथें नाम रूप ठसा हृदयीं राहो। जिवाचिया जिवलगा। माझिया श्रीरंगा। गोडी घेऊनियां। द्वैत नाहीं पाहो रया॥३॥ बापरखुमा-देविवरा विठ्ठला। सगुणी सुमन गुंफिली प्रीति। आवडे तो कोंदाटलें सुमन हें विरालें। जाली नामरूपीं ऐक्य भेटी। नाम रूप सार जाणोनि जीवन। संसारा जालिसे तुटी रया॥४॥

७८४. परमानंद आजि मानसिरे। भेंटि जाली संतासिरे॥१॥ पूर्वजन्मीं सुकृते केलीं। तीं मज आजि फळासी आलीरे॥२॥ मायबाप सकळ सोयरे यातें। भेटावया मन न धरेरे॥३॥ एक तीर्थहूनि आगळे। त्यामाजि परब्रह्म सांवळेरे॥४॥ निर्धनासी धनलाभ जालारे। जैसा अचेतनीं प्रगटलारे॥५॥ वत्स विघडलिया धेनु भेटलीरे। जैसी कुरंगिणी पाडसा मिनलीरे॥६॥ पियूशापरतें गोड वाटतेरे। पंढरीरायाचे भक्त भेटतारे॥७॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठलेरे। संत भेटता भवदुःख तुटलेरे॥८॥

७८५. आतां आपणया आपण विचरी। सेखी प्रकृती ना पुरुष निर्धारी रया॥१॥ आता प्रेतांचे

अलंकार सोहोळले। कीं शब्दज्ञानें जे डौरले। दीप न देखतीं कांही केले। ऐसें जाणेनियां सिण न मानिती प्रतिष्ठा भोगिती भले रया॥२॥ बापरखुमादेविवरा विठ्ठला देखतांचि जे बोधले। तेणें सुखें होउनि सर्वात्मक जे असतांचि देहीं विस्तारलें। येणें निवृत्तीरायें खुणा दाउनि सकळ बोलतां सिण झणें होईल रया॥३॥

७८६. अकराव्या खणावरी मंदीर धुपविलें। तेथें एक देखिले रुपेंविण॥१॥ न बोले यासि बोलावया गेलें। मीहि न बोलती झालें गे माये॥२॥ बापरखुमादेविवरेंसि ठक पडिलें। मी चित्त ठसावलें ब्रह्माकारें॥३॥

७८७. पदत्रयादि विलक्षण नातळे वर्णावर्ण। पंचभूतिकपण नातळे ज्यासि॥१॥ ते स्वयंभ प्रमाणें घनावलेन पणें। द्वैताद्वैत नेणें तैसें आहे॥२॥ नामरूपाचा भेद तुटलासें संबंध। स्वयें निजानंद भोगी बापा॥३॥ सारुनि लक्ष लक्षणा शास्त्राचा उगाणा। तेथ वेदादि षड्दर्शना नुमगे पाही॥४॥ तयामाजि तें असतसे निरुतें। न चोजवें पंथें नवल ज्याचें॥५॥ म्हणौनिया परिसा चौंचीचि उजरीं। तेंचि निर्विकारी प्रकाशले॥६॥ निवृत्तिदास म्हणे हा निजभाव। बोलो नये ठाव तैसे जाले॥७॥

७८८. साखरेचा ऊंस जरी होय पुढती। मथितां घृतीं काय क्षीर निवडे॥१॥ माघारे जीवन जरी वाहे सरिता। तरिच जन्मां येती हरिचे दास॥२॥ विविधा मति भक्ति जे करिती। ते अंती नव्हती संसार बापा॥३॥ कापुराचे मसि जरी लिहिजे लिखित। जरि छाये पडे हात प्रकृतीचे॥४॥ पवना पाठीं पांगुळें लागती। तैं जन्मा येति हरिचे दास॥५॥ संत वैष्णव हरिदासा जे नर निंदिती। आणि नमनिती ते वरपडे होती प्रेम किंकर॥६॥ निवृत्तिदास म्हणे विव्हळी जे भजती। ते जन्मा न येती भाक माझी॥७॥

७८९. अमृताची कुंडी निद्रिस्तां मरण। झणे त्या दुषण बोलसी रया॥१॥ वासना संग धीट प्रकृति कनिष्ठ। भोगुनि वैकुंठ जन्म घेती॥२॥ तैसें नव्हे सारासार तत्व निवृत्ती। बुडउनि प्रवृत्ति आपण नांदे॥३॥ ज्ञानदेव बोले अमृत सरिता सर्वाघटीं पुरता हरि नांदे॥४॥

७९०. सत्य ज्ञानानंद गगनाचें प्रावर्ण। नाहीं रूप वर्ण गुण जेथे॥१॥ तो हारे श्रीहरी पाहिला डोळेभरी। पाहते पाहणें दुरी सारोनिया॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे ज्योतिची निजज्योती। ते हे उभी मूर्ती विटेवरी॥३॥

७९१. निर्गुणाचे रंगीं रंगले हें मन। सांवळे सगुण ब्रह्म तेंची॥१॥ मताभिमानी ऐसा विश्वास न धरिती। वचनीं निर्गुण सगुण दोन्ही भिन्न असती॥२॥ असिपदीं जैसें तत्पद तें नाहीं। सांवळे ब्रह्म पाही तैसें असे॥३॥ निवृत्तिदास म्हणे चांगया ब्रह्म तेंचि खरें। सांवळें निर्धारें जाण रया॥४॥

७९२. डोळांची पाहा डोळां शून्याची शेवट। निळबिंदु नीट लखलखीत॥१॥ विसावों आलें पातलें चैतन्य तेथें। पाहे पा निरुतें अनुभवे॥२॥ पार्वतिलागीं आदीनाथें दाविलें। ज्ञानदेवा फावलें निवृत्तिकृपा॥३॥

७९३. शून्याचा शेवट डोळा पाहा निराळा। निळबिंदु सावळा प्रकाशला॥१॥ ब्रह्म ज्योतिरूप विसावले जेथ। अनुभव साद्यंत पहा तुम्ही॥२॥ ऐसे कैलासनाथें सांगितलें पार्वती। ज्ञानदेवा निवृत्ति तेंचि सांगे॥३॥

७९४. चहूं शुन्याचा भेद कैसा पहावा देहीं। ब्रह्मरंध्री निसंदेहीं निजवस्तु॥१॥ साकळें सकुमार बिंदूचे अंतरीं। अर्धमात्रेवरी विस्तारलें॥२॥ त्रिकूट श्रीहाट गोल्हाट तिसरें। औठपिठादी सारे ब्रह्मांडासी॥३॥ स्थूळ सूक्ष्म कारणी माया। महाकारणाच्या ठायां रिघ करा॥४॥ निवृत्ति ज्ञानदेव उभयतांचे बोल। आकाश बुबुळीं पाहा असे॥५॥

७९५. आकाश जें दिसे दृष्टिचिया पोटीं। शून्यत्वासी घोटी चैतन्यांत ॥ १ ॥ अर्थ पाहतां सांकडें ऐकतां। कैसें करूं आतां निवृत्ति सांगे ॥ २ ॥ सांगतांची गुज देखिलें नयनीं। हिंडताती मौनी याची लागी ॥ ३ ॥ ज्ञानदेवाचा अर्थ कूटस्थ परिपूर्ण। पूर्णही अपूर्ण होय जेथें ॥ ४ ॥

७९६. सहस्त्रदळ ब्रह्मरंध्र ज्याचें घर। सत्रावी निरंतर वसे जेथें ॥ १ ॥ रक्त शुभ्रवर्ण निळा पीत दिसे। दृष्टी शुद्ध असे त्यामध्यें ॥ २ ॥ फार किती सांगों सज्ञान तुम्ही जन। अर्थ हा समजोन मौन्य धरा ॥ ३ ॥ गुह्याचें ही गुह्य निवृत्तिनें दाविलें। मीच याचाहो बोलें बोलतसे ॥ ४ ॥

७९७. आकाशाचा शेंडा कमळ निराळें। त्यासी चार दळें शोभताती ॥ १ ॥ औट हात एक अंगुष्ठ दुसरें। पर्वार्ध मसुरे प्रमाण हें ॥ २ ॥ रक्त श्वेत शाम निळवर्ण आहे। पीत केशर हे माजी तेथें ॥ ३ ॥ तयाचा मकरंद स्वरूप तें शुद्ध। ब्रह्मादिका बोध हाची जाहला ॥ ४ ॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्तीप्रसादें। निजरूप गोविंदें जनीं पाहतां ॥ ५ ॥

७९८. ब्रह्मांडाचे भुवनीं कमळ तें सुंदर। पाकोळ्या साचार चार तेथें ॥ १ ॥ औट हात स्थूळ अंगुष्ठ। सूक्ष्म पर्वार्ध कारण जाण रया ॥ २ ॥ महाकारण मसुरामात्र सदोदित। ब्रह्मरंध्र साद्यंत वसतसे ॥ ३ ॥ चहूं शून्यवर्ण देह चार पहा। कृष्ण निळ शोभा विकासली ॥ ४ ॥ ज्ञानदेव म्हणे आतां फार म्हणो काय। सहस्त्रदळीं निश्चय आत्मा असे ॥ ५ ॥

७९९. त्रिगुणाचें मूळ सत्रावीचें सार। उन्मनीचें बीज जाण रया ॥ १ ॥ शून्य ब्रह्म पूर्ण चक्षूचे अंतरीं। निर्विकार निरंजन तोची तें गा ॥ २ ॥ सूर्य चंद्र दोनी प्रकाशले साजिरे। त्रिकूट संचरे आत्मठसा ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्तिप्रसादें। राहा रे निजबोधें निरंतर ॥ ४ ॥

८००. मन मुरुऊनी करी राज रया। प्रणवासी सखया साक्ष होई ॥ १ ॥ देहीं स्थानमान विवरण करीं आधीं। पिंडींची ही शुद्धि प्रथम करी ॥ २ ॥ औट हात हा देह ब्रह्मांड सगळें यांत। तयाचा निश्चित शोध करा ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे विवरण करी वेगे। निवृत्तिच्या संगे साधिलें हेंचि ॥ ४ ॥

८०१. चहूं शून्याआरुतें महाशून्यापरुतें। सर्वांसी पहातें तेंची तें गा ॥ १ ॥ दिसे तेंही शून्य पहा तेही शून्य देहामजी निरंतर भिन्न रूप ॥ २ ॥ शून्य निरशून्य दोन्ही हारपलीं। तेथूनी पाहिली निजवस्तु ॥ ३ ॥ ध्येय ध्यान ध्याता निरसुनी तिन्ही। झालों निरंजनी अति लीन ॥ ४ ॥ ज्ञानदेव म्हणे अनुभवी तो जाणें। गुरुमुखें खुण सांगितली ॥ ५ ॥

८०२. शून्य शोधिलें नाहीं जेणें। काय विवरण केले तेणें। अज्ञानपणें फुगणें। गाढव जीणें पशूचें ॥ १ ॥ वर्णाकृति शून्याचार। हा नाहीं ज्या विचार। न घडे न घडे साक्षात्कार। जाण सर्वथा तया नरा ॥ २ ॥ आधीं शून्याची शोधणी केली। मग सदवस्तू प्राप्ति झाली। अमृत वेळाची बोली। बोलतां नये ॥ ३ ॥ आधीं शून्य तें शुभ्रवर्ण। मध्यें श्वेत रचिलें जाण। अर्ध्य शून्य तें ताम्रवर्ण प्रत्यक्ष जाण दिसतसे ॥ ४ ॥ महाशुन्याचा वर्ण निळा। अव्यक्त तेजाचा ओतिला गोळा। ग्रासूनी ठेला भूगोळा। योगी डोळा पाहती ॥ ५ ॥ ऐसें शून्याचें नाहीं ज्ञान। तंववरी अवघेंच अज्ञान जनीं अवघा जनार्दन। अज्ञान सज्ञान काय बोलूं ॥ ६ ॥ ब्रह्म ज्ञानाची किल्ली। सांगितली एकेच बोली। निवृत्तिराजें बोलविली बोली। तेंची बोलीं बोलिलों ॥ ७ ॥

८०३. अव्यक्त मसुराकार पूर्वार्ध संचलें। लक्षा सरीसें झालें लक्षासी पैं ॥ १ ॥ अव्यक्त रेखणें देखण्या आलें व्यक्त। पहातां व्यक्तअव्यक्त दोनी नाहीं ॥ २ ॥ जागृतीच्या ठायी निजतो सहस्त्रदळीं बिंदुच्या समेळीं उच्चार होतो ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव शरण निवृत्तीच्या चरणा। समजुनी खुणा तटस्थ झालें ॥ ४ ॥

८०४. सत्रावीचा खेळ लक्षवेना कवणा। ब्रह्मादिकां जाणा अगम्य तें॥१॥ रात्रंदिवस मन चपळत्वें धांवतें। तेंही सत्रावीतें नपवेची॥२॥ सत्रावी अगम्य विधि हरिहरां। लक्षूं पहातां वरा गोविंदु गे॥३॥ ज्ञानदेव दर्शन सत्रावीचें घेतां। उन्मनी ठसवी निवृत्तिराज॥४॥

८०५. आकाशासी गुंफा अंत नाहीं जिचा। शोध करा तिचा सर्वभावें॥१॥ अनंत ब्रह्मांडाचा खेळ जिच्या योगें चाले। चांग्यासी मिनलें तयां ठायीं॥२॥ गुंफेच्या आधारें चंद्र सूर्य चालती। विश्रांतिसी येती तये जवळी॥३॥ ज्ञानदेव नयन धरितां समभावें। सोहं स्वरूप भावें लाधलेंसें॥४॥

८०६. षट्चक्रें बंद निघूनियां गेली। पाहों जो लागलीं तयां गांवा॥१॥ निरंजन सभराभरीत वस्तू कोंदली। साक्षत्वासी आली आत्मदशा॥२॥ वृत्ति झेंपावली आनंद झाला सैरा। सत्रावी येरझारा करी जेथं॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे लक्ष लावीं आकाशीं। ब्रह्म पावसि लौकरी तूं॥४॥

८०७. नयनाचे शेजारीं दशवें द्वार बापा। एक मार्ग सोपा बोलतसें॥१॥ आधारीं पवन अपान विराजे। आंगुळें चार साजे तयां ठायीं॥२॥ मणीपुर चक्र नाभिस्थान कमळ। सहा अंगुळांचा खेळ असे तेथें॥३॥ वायुचक्र अनुहात हृदय असे एक। प्राणासी निःशंक जेथे नेई॥४॥ अग्नीचक्र भ्रुवांग शोभतें प्रकाशत्व। प्राणासी उलथावें तयावरी॥५॥ सहस्त्रदळीं ब्रह्मरंध्र शोभतसे निळें। प्रकाशाचे उमाळे जेथें असती॥६॥ ज्ञानदेव म्हणे ऐका प्राणायाम। या अभंगीं निःसीम अर्थ झाला॥७॥

८०८. औटपीठ डोंगरीं गाय एक वसे। क्षीर सेवितसे निजयोगी॥१॥ धाले पूर्णपदीं समान लक्षिती। क्षुधा चाड चित्तीं नाहीं नाहीं॥२॥ भ्रुवांतरीं लक्ष लाऊनी बैसा ध्यानीं। ऐक्यासी उन्मनी होऊनी रहा॥३॥ ज्ञानदेव नमितो आदी देवी प्रति। नेत्रीं पाहे ज्योती शुद्धरूप॥४॥

८०९. सोहंकारीं माया लक्ष आणीं देहीं। निरंजनीं पाहीं मायाकार॥१॥ निर्गुण सगुण माया तेची खरी। प्रसऊनी निर्धारी वांझ असे॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे मज माया कृपाळु झाली। तिणें उजळली माझी काया॥३॥

८१०. आकाशीं मळा लाविला बा एक। वांझेचें बाळक शिंपीतसे॥१॥ अग्नीकुंड मनें बाळकें निर्मिले। प्रत्ययासी देखिलें मीया लागीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे उफराटें पहातां। सर्व सौख्यदाता निवृत्ति एक॥३॥

८११. पहा त्रिभुवनीं न दिसे बाइये। नयनांजनीं पाहें आत्मरूप॥१॥ मन बुद्धि चित्त अंतःकरण जाण। या वेगळें निर्वाण ब्रह्म तेंचि॥२॥ ज्ञानदेवा ब्रह्म लाधलें अवचटें। उन्मनीचा घांट चढतांची॥३॥

८१२. आत्मज्ञान जया न देखा निजदृष्टी। तया नरा गोष्टी करूं नये॥१॥ तूर्यारूपें जाण प्रभा हे निःसिम। तया परत राम असे बापा॥२॥ ज्ञानदेवा गुज दाविलें गुरूनें। मनें अनन्यें कल्पीतांची॥३॥

८१३. आत्मा एक बाई स्थिरचरव्यापक। सृष्टी तैसी देख एकलीच॥१॥ पंचमहाभूतें व्यापूनी निराळा। सौंदर्य पुतळा काळाबाई॥२॥ ज्ञानदेव ध्यान धरिले पुढती। त्रैलोक्याची वस्ती असे जेथें॥३॥

८१४. अकारी अर्धमात्रा कवण रीति दिसे। उकारीही घसे कवणे परी॥१॥ मकारी संयुक्त झाली कैशापरी। अर्धमात्रेवरी अर्धमात्रा॥२॥ अर्धमात्रेचा अर्थ अवचटची दिसे। गुरुगम्य सोय जाणती पैं॥३॥ ज्ञानदेवें अर्थ शोधुनी घेतला। महाशून्यीं संचला निवृत्तीराज॥४॥

८१५. शून्य हे चार महा शून्य दिसतसें। निजरंग वसे सर्व त्यांत॥१॥ ऐसा रंग जया लाधतांचि पाही। मनाची ही सोइ हारपली॥२॥

ज्ञानदेवाचा बोल बोलण्याचें रूप। निवृत्तिस्वरूप सर्वत्र हें॥३॥

८१६. शून्याचें जें बीज योगीयांचें गुज। स्वानंदाचें निज ब्रह्म रया॥१॥ त्रिगुण त्रिविध तो सच्चिदानंद। शब्दाचा अनुवाद नसे जेथें॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे सद्गुरु जाणती। इतरांची वृत्ति चालेचीना॥३॥

८१७. ऐसा योगीराज देखिता अवचट। उन्मनी लंपट रात्रंदिवस॥१॥ सत्रावीची शिव टाकुनी राहिला। पहाण्यातीत झाला सर्वाठायीं॥२॥ असिपदीं आनंद प्रियरूप जाण। ध्यानाचें कारण जेथें नाहीं॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे ऐसा योगीराणा। तयाचीया चरणा प्रणिपात॥४॥

८१८. एका एक गुज बोलतों निर्वाण। निवृत्ति चरण आठऊनी॥१॥ अर्धमात्राक्षरीं अक्षरें पाहाती। अनाक्षरा परती बाईयानो॥२॥ रज तम सत्व याहुनी निराळी। लक्षाही वेगळी निवृत्ति जाणे॥३॥ ध्येय ध्याता ध्यान परता जिचा खेळ। ज्ञेय ज्ञाता ज्ञान याची साक्ष॥४॥ सत्‌चित्‌आनंद ब्रह्मा हरी हर। तेही जिचा पार नेणविती॥५॥ सलोकता मुक्ती आदी तिन्ही वर। वसतें जें घर योगीयांचें॥६॥ त्वंपद तत्पद असिपदाचा रंग। त्याचा अंतरंग देखा बाईयानो॥७॥ निवृत्ति सोपान मुक्ताबाईची खुण। ज्ञानदेव साधन बोलीले हे॥८॥

८१९. उन्मनी संयोगें गोसावी विराजे। चहूं देहाचें ओझें निवारोनी॥१॥ सोहमस्मीचे छंदे परिपूर्ण। विज्ञान हे खुण जेथें नाहीं॥२॥ चंद्रसूर्याहुनी तेज तें आगळें। अव्यक्तें व्यापिलें अनुभवें॥३॥ अनुभवाची खुण गुरुगम्य जाणती। ज्ञानदेवें विनंति हेचि केली॥४॥

८२०. नयनाचें अंजन मनाचें रंजन। ठसा हा साधन बाईयानो॥१॥ ॐकार अक्षर अक्षरीं हारपे। अनुभवाच्या मापें मोजूं बापा॥२॥ बिंदूचें जें मूळ प्रणवाचें फळ। योगियाचें खेळ तेच ठायीं॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्तिप्रसादें। स्वरूपाच्या विनोदें बोलिलें हें॥४॥

८२१. गगनमंडळीं नारी सुकुमार दिसे। तिन्ही लोक वसे तिचे उदरीं॥१॥ परादी वाचा तन्मय ते झाली। साक्षीत्वासी आली ब्रह्मरंध्री॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे नयनांतील ज्योती। पाहातां वृत्ति हरे विषयांचीं॥३॥

८२२. वर मुळें शेंडा खालीं दिसे बानो। प्रपंची रानोरान वृक्ष बारे॥१॥ त्रिगुणाच्या शाखा उपशाखा बहुत। नाना याती येत पत्रें ज्यास॥२॥ पक्व फळ अहं सोहं गोडी त्याची। सेवितां जीवाची आस पुरे॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे वृक्ष परिपूर्ण झाला। बीज रूढला जाणीवेचा॥४॥

८२३. धांवत धांवत आलों नयनांजनीं। प्रकाश दिनमणी उणा वाटे॥१॥ निशी दिवस दोन्हीं नाहीं जेथ बारे। अर्धमात्रेवरी लक्ष ठेवीं॥२॥ अक्षय अक्षर क्षरविरंहीत साजे। ज्ञानाचें जें ओझें चालेचीना॥३॥ ज्ञानदेव चक्षु झाला परेवरी। यापरती बरोबरी नाहीं बापा॥४॥

८२४. अंजनाचें अंजन सदोदीत पाहिलें। पाहाणें होऊनी ठेलें सर्वाठायीं॥१॥ आतां बोलाबोली नको बा आणिक। बिंदु तो निःशंक ब्रह्म रया॥२॥ अनुहात उन्मनी म्हणोनी व्यर्थ काय। मुखीं धरी सोय ब्रह्मरंध्री॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे न बोले आणिक। डोळीयांची वाल पाहतांची॥४॥

८२५. अकार उकार मकार ओंकार। प्रणव हा साकार सुरेख रे॥१॥ सुरामात्र मसार योगी ध्याती देहीं। निरंजन पाहीं ब्रह्म तेची॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे देह झालें देव। प्रणवची शिव अनुभवें॥३॥

८२६. पाणियाचें मोतीं ज्योती वसे जेथ। महाकारण साद्यंत पाहा तुह्मीं॥१॥ जागृति स्वप्न सुषुप्ति जेथें उद्भव तीचा। योगी सम ज्याचा अधिकारी॥२॥ गोल्हाटाचे मुळीं ज्ञानदेव

बैसला। सहस्त्रदळीं शोभला काळा बाई॥३॥

८२७. सकार हकारीं नाडी दिसती कैशा। उलटल्या दशदिशा अमुपचि॥१॥ सूक्ष्म मूळ सर्व बीजाचा उद्भव। हाची अनुभव देहामध्यें॥२॥ समान जैसा अर्क स्थिरचर एकला। आत्मा हा संचला तैशा परि॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे याहुनी आणिक। बोलाचें कवतुक जेथ नाहीं॥४॥

८२८. दिव्यरूप चक्षु कैशापरि झाला। ठसा हा उमटला कवण्यापरी॥१॥ चहुं देहांचा वर्ण अवर्ण देखिलें। विश्व म्यां पाहिलें तयामध्यें॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे सर्वांचे जें मूळ। सत्रावी केवळ शुद्धरूप॥३॥

८२९. काळा पुरुष तो हा गगनांत जो नांदे। अनुभवाच्या भेदें भेदला जो॥१॥ भेदून अभेद अभेदूनी भेद। सच्चिदानंद जेथ नाहीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे तेथें अक्षय राहिला। आत्मा म्यां पाहिला या दृष्टिसी॥३॥

८३०. विश्व ब्रह्म भासे ऐक्य येतां देहीं। अनुहातीं पाहीं अपार नाद॥१॥ देखिला परी संयोगें व्यापला। विश्व तरीच झाला बाईयानो॥२॥ पिंड ब्रह्मांडाचा विस्तार विस्तारला। माझा मीच झाला कोणपरी॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे या अर्थाची सोय। धरी माझी माय मुक्ताबाई॥४॥

८३१. गुजगुजीत रूप सावळे सगुण। अनुभवितां मन वेडें होय॥१॥ भ्रमर गुंफा ब्रह्मरंध्र तें सुरेख। पाहतां कवतुक त्रैलोकीं॥२॥ आनंद स्वरूप प्रसिद्ध देखिलें। निजरूप संचलें सर्वा ठायीं॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे या सुखाची गोडी। अनुभवाची आवडी सेवीं रया॥४॥

८३२. सहस्त्र दळ बिंदु त्यांत तेज दिसे। तें हो काय ऐसें सांगा मज॥१॥ जेथ नाम रूप वर्ण नाहीं बारे। तें हें रूप बारे चैतन्य बा॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे अनुभवाची खूण। जाणे तो सुजाण अनुभविया॥३॥

८३३. कोणाचे हें रूप देह हा कोणाचा। आत्माराम साचा सर्व जाणे॥१॥ मीतूं हा विचार विवेकें शोधावा। गोविंद हा ध्यावा याच देहीं॥२॥ ध्येये ध्याता ध्यान त्रिपुटीं वेगळां। सहस्त्रदळीं उगवला सूर्य जैसा॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे नयनांतील रूप। या नांव चित्पद तुम्ही जाणा॥४॥

८३४. डोळियांत डोळा काळियांत काळा। देखण्या निराळा निळारूप॥१॥ ब्रह्म तत्व जाणे ज्योतिरूपें सगळा। ज्योतीही वेगळा ज्योती वसे॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे देवा ऐसी ज्योती। अर्थमात्रा उत्पत्ति सर्वाजीवां॥३॥

८३५. सद्गुरु निवृत्ति दिसतो घनदाट। सुषुप्तीचा घांट वेधतांची॥१॥ आत्मामाया शिव शक्तीचे हें रूप। दिसतें चिद्रुप अविनाश॥२॥ ज्ञानदेव चढे ऐसी वाट देख। आकाशीं असे मुख तिचें कैसें॥३॥

८३६. परेचे शिखरावरी वस्ती माझी झाली। समरसें विराली मज माजी॥१॥ आत्मदशे योगी लक्ष लाविती देहीं। ब्रह्मरंध्रु पाहीं सत्पद तें॥२॥ अणुरेणु शून्य गगना तेजें दिसे। निरंतर वसे निरंतर॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे वृत्ति सहस्त्रदळीं लावा। मसुरा मात्रा बरवा ध्यायी जाई॥४॥

८३७. नासिकाचा प्राण कोणीं मार्गी येत। नाद दुमदुमित अनुहातीं॥१॥ इडे पिंगळेचा ओघ सैरां दिसतसे। त्यावरी प्रकाशे आत्मतेज॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे अष्टांग योगीया। साधितो उपाया याची मार्गे॥३॥

८३८. प्रणवाचे भेद उकलावे देहांत। चंद्राची मी मात सांगतसें॥१॥ सहस्त्र दळावरी तेज शुद्ध असे। त्या तेजे प्रकाशे चंद्र बापा॥२॥ उन्मनीचे ध्यासें सहस्त्रदळ गाजे। पश्चिम मार्गी बीजें दोन असती॥३॥ लक्ष लावी ज्ञानदेव एकलाची। शुद्ध ज्योती तोचि जाणे एक॥४॥

८३९. मन हें लावा हें सालयीं निरुतें। सहस्त्रदळा वरुतें परे जवळी॥१॥ अनुहात नाद ब्रह्मस्थानीं असे। तेथें रूप कैसें सांगा मज॥२॥

ज्ञानदेव म्हणे स्वरूप जो जाणे। त्यासी शरण होणें अनन्य भावें॥३॥

८४०. महावाक्यार्थ तें शून्य कैसें बापा। सत्वर नयनीं पहा आत्मप्रभा॥१॥ प्रभा शीत उष्ण देहीचेही सार। प्रणव हा सारासार आरुता रया॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे सोपानातें ऐसें। निराकार असे अकारेसी॥३॥

८४१. दशमद्वार अग्रशून्य सूक्ष्म गगनीं। जेथ आसे उन्मनी निखिल रूपे॥१॥ द्विविध भाग पिंडी द्विविध ब्रह्मांडी। या तीं पडीपाड़ीं ब्रह्मरंध्रीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे शून्यांतील रूप। अनंत ब्रह्मांणे जेथ आहाती॥३॥

८४२. जडांतील शुद्धांश कौतुकें रिघाला। निवृत्तीने दाविला कृपा करूनी॥१॥ अनुहात भेद दाविला कृपनें । सर्व हें चैतन्य गमलें तेव्हां॥२॥ ज्ञानदेव नमनीं निवृत्तीचे पदीं। आनंद ब्रह्मपदीं एक झाला॥३॥

८४३. नवा आंत ओवरी औठपिठा जवळी। शून्यातीत काळी सुकुमार॥१॥ अंगुष्ट पर्वार्ध मसुरा मात्र दीर्घ। उन्मनीचा मार्ग तेच ठायीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे पर्वार्धांतील नीर। सर्व हें साचार विश्व दिसे॥३॥

८४४. भ्रुवामध्यें तेज चंद्रसूर्यविरहित। आदी मध्य अंत संचलेंसे॥१॥ तुर्यारुपें ते सुषुम्ना प्रकाशली। नवविध अमृतजळीं तया तेजा॥२॥ ज्ञानदेव वदे अष्टांग योग साध। पावाल ब्रह्मपद याचा भेद॥३॥

८४५. पश्चिम मार्गी खूण बीजें दोन साजिरीं। अविनाश ओवरी योगीयांची॥१॥ त्रिकूट श्रीहाट चंद्रसूर्य जाणा। पश्चिम मार्गीं खूण याची की रे॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे बीजे दोन बापा। पाहें आत्मरूपा तेथे बा रे॥३॥

८४६. इडा वाम दक्षिणे पिंगला। दोहींत या कळा ब्रह्मस्थानीं॥१॥ प्रणव सैरा बापा धांवे अवघड वाटे। रीघा नवपाटे जीव जीवना॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे हाची कीं रे प्रणव। यापरता अनुभव नाहीं नाहीं॥३॥

८४७. प्रणवासी रूप नाहीं कांही छाया। दशवे द्वारीं मूळमाया असे कीं रे॥१॥ सहस्त्रदळीं वृत्ति लावितां निःशंक। मनासीं भवासी ऐक्यता तेथें॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे या परतें नाहीं। बोलण्याची सोयी अनुभव जाणे॥३॥

८४८. प्रणवच देह देह हा प्रणव। कल्पनेचा भाव कल्पूं नये॥१॥ अंजनाचें सार तेंच देह बा रे। आत्मा परिपूर्ण सारे पाहती ज्ञानी॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे प्रणव माझा पिता। अक्षर तेच माता याच भेदें॥३॥

८४९. पश्चिममार्ग बापा प्रणव कीं दे सांग। जेथें असे महालिंग तेजोमय॥१॥ चंद्रांतील जल ते सत्रावी केवळ। नादबिंदा कल्होळ गर्भी झाला॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे देह हा दुर्लभ। त्रैलोकीं सुलभ भजनाचा ही॥३॥

८५०. प्रणवाचें आकाश असे सर्वावरी। आकाशीं भरोवरी प्रणवाची॥१॥ प्रणव जें गुह्य ऋषि योगीयांचे। सर्वावरिष्ठा साचें वेद आज्ञा॥२॥ एका वेदांत सिद्धांती प्रणव तो तत्वता। ज्ञानदेव वक्ता सांगतसे॥३॥

८५१. प्रणवाचें रूप कोणें देहें देखिलें। निवृत्तिनें दाविले याच देहीं॥१॥ सकार हकार तुर्या उन्मनी भेद। अभेदुनी भेद केले मज॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे प्रणवाची खोली। अक्षरीची बोली देह सार॥३॥

८५२. अमृताची क्षीर ब्रह्मांडभुवनीं। पाहाती त्रिभुवनीं नवल झालें॥१॥ नाद विंदा भेटी झाली कवण्या रीती। शुद्ध ब्रह्म ज्योती संचलीसे॥२॥ प्रकृति पुरुष शिव शक्ती भेद। त्याचे शरीरीं द्वंद देह जाणा॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे पिंडीं शोध घ्यावा। ब्रह्मांडीं पाहावा ब्रह्म ठसा॥४॥

८५३. प्रणवाची शक्ती शिव प्रणवची। क्षर अक्षर साची प्रणव ते॥१॥ त्रिकूट श्रीहाट गोल्हाट

ब्रह्मरंध्र। प्रणव निरंतर ऐक्य झाला॥२॥ ज्ञानदेव आपण प्रणव झाला आधीं। ध्याता ब्रह्मपदीं प्रणवची॥३॥

८५४. स्थावर जंगम प्रणव प्रसवला। आत्मा स्वय संचला प्रणवा ठायीं॥१॥ अवस्था भुक्ती मुक्ती प्रणवची जन्मता। अर्धमातृके परता प्रणवची॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे प्रणवाचे ठायीं। प्रणवीं प्रणव पाहीं निराळा तो॥३॥

८५५. शिवशक्तीचा भेद अर्धनारी पुरुष। याचा हा सौरस आणा चित्ता॥१॥ जागृति स्थूळ तुर्या महाकारण। हेचि कीर खुण तुझे ठायीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे कैसे हें जाणिजे। देही नाद गाजे परेवरी॥३॥

८५६. निळावर्ण ब्रह्मरंध्र येकनिकें। पहा माझे सखे भाविक हो॥१॥ उन्मनि सदैव वसे अक्षय पंथें। लाउनियां चित्त तया ठायीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे यापरती खूण। नाहीं ऐसी आण वाहातसें॥३॥

८५७. आकाश हें असें माझें शिर बापा। कर्ण दिशा चिद्रूपा नाद उठती॥१॥ आधारापासूनी सहस्त्रदळावरी। निःशब्द निरंतरी नारी एक॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे अनुभव ऐसा जेथें। तोचि जीवन्मुक्त संत योगी॥३॥

८५८. अग्नीचे पोटीं पुरुष उद्भवला अवचट। सत्रावी लंपट निशिदिनीं॥१॥ आधार नाहीं जेथ निराधार वर्तती। निराधार न म्हणती आपणा लागीं॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृतीने दाविलें। या नयनीं पाहिलें अविनाश॥३॥

८५९. सत्रावीचे गांवी शून्याचा विस्तार। प्रणव निराकार सदैव असे॥१॥ पश्चिम पूर्व असे शुक्ल कृष्ण नारी। दैवी आणि आसुरी वेगें शोधा॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे अर्धमात्र कोणती। मसुरा मात्रा आहे ती दोन्ही भाव॥३॥

८६०. सहस्त्रदळ साजिरें नयनाचे शेजारी। अर्ध मातृका अंतरी चिन्मय वस्तू॥१॥ ॐकार नादीं कीं नाद ॐकारीं। दैवीं निरंतर प्रणवीं पहा॥२॥ मकार अर्धमात्रा शून्याचा निश्चय। आत्मा एक असे स्वयें रया॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे कैवल्याचा दाता। कोण पत्री हे कविता नाहीं ऐसी॥४॥

८६१. स्थूलदेह सूक्ष्म कारण तिसरा देह। चौथा महाकारण देह ऐक बापा॥१॥ औट पीठाचे दरीं कर्पूर वर्णावरी। शामाचे अंतरी महाकारण॥२॥ महाकारणीं आतुला लक्षाचा पुतळा। उन्मनी हे कळा दैवी वरी॥३॥ सहस्त्रदळ तेंच कीं आन नाहीं ऐसें। महा तेज वसे ज्याचे आंत॥४॥ पश्चिम मार्ग तेथुनी ऊर्ध्व उंच गगनी। जेथें एक कामिनी एकलीच॥५॥ मार्ग नहीं तेथ कोणे रीती जावें। सुषम्नेवरी वळघावें सामर्थेसी॥६॥ तेथूनी ऊर्ध्व छिद्र मुंगी नेत्रातुल्य। त्यांतून उडणें भले चपलत्वेंसी॥७॥ जडतां वळंघितां बरी नारी आपण एक। रनानारी नपुंसक एक रूप॥८॥ ज्ञानदेव म्हणे जो उडनी जाय तेथ। परब्रह्मीचि मात तोचि जाणे॥९॥

८६२. सहस्त्रदळ ब्रह्मरंध्र एके नेत्री देखे। देखणा पारुखे ते ठायीं बा॥१॥ नादीं नाद भेद भेदुनी अभेद। पश्चिम मार्गी आनंद देखुनी राहें॥२॥ मन पवन निगम आगम सुरेख। आधार सहस्त्रदळ देख देहीं नयनीं॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे डोळां हा प्रणव। निवृत्तीनें अनुभव मज दिधला॥४॥

८६३. सगुण देह बापा निर्गुण माझें शीर। हा तो भेदाकार कैशापरी॥१॥ दैवी आसुरी पूर्व पश्चिम मार्ग किरे। शून्यांतील सारे चराचर हें॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे भेद ऐक गुरुपुत्रा। नयनीं अर्धमात्रा सर्व जन॥३॥

८६४. अनुहत ध्वनी वरि चंद्रमा वर्तुळ। तेजाचे उमाळे अनंत तेथें॥१॥ ब्रह्मशिखरीं निराळ्या मार्गावरी। अविनाश कर्णकुमारी एकलीच॥२॥ तेथुनी महाद्वार उन्मनीचें वर्ता। त्यावरी चढता रीग नसें॥३॥ अणुचें जैं अग्र ऐसा तेथ मार्ग। औटपीठीं सवेग जावें वरी॥४॥ पंचदेव

तेथें एकरूपां देखती। औटपीठीं वसती आरुते तेही॥५॥ तयाचेही वर रश्मिअग्रामधुनी। शुद्ध ब्रह्म निर्वाण असे तेथ॥६॥ ज्ञानदेव म्हणे ब्रह्मांडींचा अंत। नाही ऐसी मात बोलतसे॥७॥

८६५. आत्माराम देखे सहस्त्रदळावरी। उन्मनी हे पाहीं आरुते तेहीं॥१॥ चक्षुचे अंतरी चक्षु देखे पूर्ण। हेचि कीरे खुण तुझें ठायीं॥२॥ मी ब्रह्म सोई ज्ञानपद तें साजिरें। ते ठायीं निर्धारें तुझा तूंचि॥३॥ बाप रखुमादेवीवरा तुझा तूं आपण। सर्व हें चैतन्य तुझे ठायीं॥४॥

८६६. औटपीठातळीं तेज गुजगुजीत। चारी देह तेथ साक्ष पाहा॥१॥ अवस्था हे चारी संयोगची एक। शून्य जें निःशंक आत्मज्योती॥२॥ ज्ञानदेवा बाई निवृत्ति वदविता। त्याचे चरणीं हीताहींत झालें॥३॥

८६७. शून्याचें भुवनीं स्वरूप अविनाश। प्रणवीं पुरुष दिसतसे॥१॥ निळा रंग देखें सर्वांचे देखणीं। चैतन्य भुवनीं समरस॥२॥ ज्ञानदेवा ध्यान सच्चिदानंदाचें। सर्व ब्रह्म साचे येणें येथें॥३॥

८६८. सत्व रज तम शुद्ध सत्व चौथा। निर्गुणी गुणापरता बाईयानो॥१॥ स्थूळ देह सूक्ष्म कारणाचे वरी। महाकारण सरी चौथा देह॥२॥ कैवल्य देह तो ज्ञानदेवें पाहिला। पहाणें होऊनी ठेला चराचरी॥३॥

८६९. आत्मा पूर्णपणीं लक्ष सोहं स्मरणीं। लक्षासी उन्मनी आणा बारे॥१॥ नरदेहाचें सार्थक सद्गुरुचरणीं। महाकारणासरी चौथा देह॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे सद्गुरुकृपेचें। नित्यानित्य कृपें शोध करा॥३॥

८७०. स्वरूपाचें ध्यानीं निरंजन पाहिलें। डोळ्यानें दाविलें चराचर॥१॥ आतां माझें नयन नयनीं रिघों पाहे। नयना नयनीं राहे नयनची॥२॥ ज्ञानदेवा नयन निवृत्तिने दाविला। सर्वा ठायीं झाला डोळा एक॥३॥

८७१. नयनांतील रूप जो हें देखे पुरुष। त्याचे चरणीं वास असे माझा॥१॥ नयनांतील ज्योती देखे गुह्यभावें। त्याचें स्वरूप भावें वंदावें गा॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे नयनांतील शून्य। देखे तोची धन्य भाग्यवंत॥३॥

८७२. डोळा माझा बाप त्रिभुवना परता। जो देखे मुक्तता तोचि लाहे॥१॥ जीव जंतु कृमी मुंगी नेत्रामध्यें। वास्तव्य गोविंदे केलें पाहा॥२॥ ज्ञानदेवाचें बोल उघड निर्मळ। जान्हवीचें जळ स्थिर वाहे॥३॥

८७३. नयनाचे आंगणीं तुर्येचा प्रकाश। उन्मनी उल्हास तयावरी॥१॥ श्वेत शाम कळा प्रकाश आगळा। स्वयंज्योति बाळा लक्ष लांवी॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे कैसे हे नयन। चैतन्याची शून्य आन नाहीं॥३॥

८७४. रक्तवर्ण स्थूळ श्वेत हें सूक्ष्म। कारण तें श्याम ऐसें देखा॥१॥ निळावर्ण देह महाकारण साजिरा। ज्योतीचा मोहरा अलक्ष लक्ष्मी॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे सर्व हें चैतन्य। मन हेंची धन्य धन्याचेनी॥३॥

८७५. औट पिठावरी निरंतर देश। तेथ मी जगदीश असे बाई॥१॥ त्रिकुटाचा फेरा टाकीला माघारा। अर्धमात्रेवरा वरी गेलों॥२॥ अर्धनारी पुरुष एकरूप दीसे। तेची ब्रह्म ऐसें जाण बाई॥३॥ ज्ञानदेवी शून्य नयनी देखिलें। सर्वत्रीं संचलें शून्य एक॥४॥

८७६. ब्रह्मज्ञानी पुरुष तोचि ओळखावा। नयनांजनीं पाहावा ब्रह्मठसा॥१॥ देखतसे देहीं द्वैत भेदातीत। तोची धन्य संत माझे मनीं॥२॥ त्याचे चरणोदकीं जान्हवी पवित्र। सहस्त्रदळावर लक्ष ज्याचें॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे ऐशा योगीयाला। देखतां तयाला नमन माझें॥४॥

८७७. निशी दिवस दोघे लोपले तें ठायीं। निरंजन ते ठायीं लक्षुनी पाहा॥१॥ रवी शशी ज्याचें तेजें प्रकाशले। नवल म्यां देखिलें एक

तेथें ॥ २ ॥ नारी पुरुष दोघे एक रूपें दिसती। देखणें पारुखे तया ठायी ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे शिव तेचि शक्ती। पाहातां व्यक्तीं व्यक्त नाहीं ॥ ४ ॥

८७८. चैतन्य तें दिसें उघडेया डोळां। नयनाचा सोहळा निवृत्ति जाणे ॥ १ ॥ मसुरांतील सूक्ष्म अनुभवें दिसे। तेथ तेज असे कवण्या रीती ॥ २ ॥ ज्ञानदेव म्हणे ऐसे तेथे तेज। असे गुजगुजीत निर्मळ तें ॥ ३ ॥

८७९. आकाशाचे ठायीं चंद्र सूर्य तारा। सूक्ष्माचा फेरा सर्वा ठायीं ॥ १ ॥ बिंदुस्थान तेथें ब्रह्मरंध्र ज्योती। तेथे योगी वसती दिवस रात्र ॥ २ ॥ ज्ञानदेव म्हणे सर्वची हें शून्य। वस्तु परी पूर्ण सर्वाठायीं ॥ ३ ॥

८८०. अखंड तमासा डोळा देख निका। काळा निळा परिवा बाईयानो ॥ १ ॥ सदोदीत नयनीं नयन हारपे। निळ्याचे स्वरूपें मनीं वसो ॥ २ ॥ अकरा वेगळें नाहीं बा आणिक। माझे नेत्रीं देख शुद्ध ज्योती ॥ ३ ॥ ज्ञानोबाची वाणी पूर्ण रूपी घ्यावी। देहींच पाहावी आत्मज्योती ॥ ४ ॥

८८१. शून्याचा उद्भव सांगतों या बोला। औटपिठीं वहिला सूक्ष्म मार्ग ॥ १ ॥ मनपुराचे वरी द्वादश आंगुळें। तयावरी गेले अव्हाटेने ॥ २ ॥ आतां तया सदनीं उफराटें मार्गे। वळंघिता सवेग पश्चिम पंथीं ॥ ३ ॥ पश्चिमपंथीं नाडी घोष वाहे जीचा। तेथुन ध्वनीचा विस्तार गा ॥ ४ ॥ ध्वनीचेंही वरी शुद्ध तेज असे। चंद्रमा प्रकाशे तेच ठायीं ॥ ५ ॥ चंद्राचे वरी एक निराळाच मध्य। स्त्रियेचें निजबोधें निजरूप ॥ ६ ॥ निखिल जें तेज ज्याचेनी अमृत। जीववी देहींत देह दैव ॥ ७ ॥ औटापिठातळीं सर्व तें दीसे। सूर्य हा प्रकाशे तेच ठायीं ॥ ८ ॥ ज्ञानदेव म्हणे मज त्रिकुटाची गोडी। धरितां आवडी ब्रह्म लाभे ॥ ९ ॥

८८२. आतां औटपिठींचा मार्ग एक बाई। निशिदिनीं पाहीं शोध करा ॥ १ ॥ औटहात प्रमाण सत्य कीं हें जाण। त्यांतील जें स्थान ऐकें एक ॥ २ ॥ महालिंग स्थान टाळू एके संधीं। तेथें एक सिद्धि तेजोमय ॥ ३ ॥ मार्ग तेथ परतले दोहीं भागीं। पश्चिमीं महालिंगी मार्ग ऐसा ॥ ४ ॥ सत्रावीचे शिखरीं मार्ग एक गेला। तो म्यां देखियेला याच देहीं ॥ ५ ॥ महालिंगीं मार्ग अंत नाहीं ज्याचा। शोध करितां वाचा कुंठीतची ॥ ६ ॥ ज्ञानदेव म्हणे हा विचार पाहा। जाणता दाविता विरळा एक ॥ ७ ॥

८८३. आकाशाचें अंतीं प्रणवाचें गुज। निरंजन बीज साधूं पाहाती ॥ १ ॥ सद्रूप चिद्रूप अद्वय एक कळा। संसारीं वाहिला निर्विकार ॥ २ ॥ प्रणवीं बीज अणुरेणु आंत। दशमद्वाराची मात अपूर्व बा रे ॥ ३ ॥ बापरखुमादेवी प्रणव निखिळ। शब्दाचें पाल्हाळ प्रणवीं रीघे ॥ ४ ॥

८८४. आत्माराम नयनीं निरखुनी देखिला। निळा रंग ओतीला आदी अंती ॥ १ ॥ गोल्हाट त्रिकूट ब्रह्मरंध्रीं वस्तु। तुर्येची ऐसी मातु याच ज्ञानें ॥ २ ॥ ज्ञानदेव म्हणे सर्वा अंतरीं तुर्या। निवृत्ती योगी वेगीं गुज बोले ॥ ३ ॥

८८५. तुर्येमध्यें माझा अखंड रहीवास। निवृत्ति म्हणे अविनाश तूर्या करी ॥ १ ॥ स्थुळदेह निमतां सूक्ष्म उरतां। कारणीं हारपतां कैसें झाले ॥ २ ॥ ज्ञानदेव म्हणे महाकारणीं नांदे। निवृत्तीने आनंदे दाखविलें तें ॥ ३ ॥

८८६. शास्त्रार्थाची वाणी निरंजनी दीसे। औटपिठीं वसे निर्विकार ॥ १ ॥ अहं सोहं मग ॐकाराचे देठीं। अहंतेचे शेवटीं सोहं वस्तू ॥ २ ॥ सोहं वस्तु निळी अहं गेलीया। आनंद झालीया महाकरणीं ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे निवृत्तीची आण। या वेगळी खूण आणिक नाहीं ॥ ४ ॥

८८७. मीच माझा डोळा मीच शून्यांत निळा। माझा मी वेगळा तयामध्यें ॥ १ ॥ उफराटी दृष्टी लावितां नयनीं। ते दृष्टीची वाणी किंचित ऐका ॥ २ ॥ उफराटी दृष्टि देखे उन्मनीवरी। तेव्हां निर्विकारी मीच मग ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव म्हणे देहा डोळां

दिठी। पाहातां सर्व सृष्टि निवृत्ती एका॥४॥

८८८. सत्व रज तम त्रिगुण तें ब्रह्म। अर्धमात्रा निःसीम ॐकार हा॥१॥ सहज हा प्रणव सर्वातीत साजे॥ मीपणास तेथ ठाव नाहीं॥२॥ अक्षर कूटस्थ सर्वातीत असे। अक्षर अविनाश ऐसें जाणा॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे सर्वांचे शेवटीं। अविनाश दृष्टी असे कीं रे॥४॥

८८९. तूर्या तें महाकारण नाहीं नाहीं जेथें। दर्शनाचे मतें माझा मीच॥१॥ गोल्हाट त्रिकूट श्रीहाटातीत। महाकारणाची मात जेथ नाहीं॥२॥ क्षर अक्षर अनाक्षर नाहीं। कूटस्थ सर्वही प्रसवला॥३॥ ज्ञानदेव म्हणे ऐसे हें पाहातां। निवृत्तीनें तत्वता कथनी केली॥४॥

८९०. सुनीळ जें ब्रह्म बिंब सत्रावीचें। विश्वरूप चैतन्य महाकारणीं॥१॥ ब्रह्मज्योतीचिये प्रकाशें करुनी। देखे त्रिभुवनीं एक वस्तु॥२॥ ज्ञानदेव म्हणे ज्यीतीची जे ज्योती। ब्रह्मरंध्री वस्ती परमात्मयाची॥३॥

८९१. महा तेजा आंत बिंदू कोणे परी। उष्ण तेजा माझारीं साक्ष पाहा॥१॥ कुंडलनी उर्ध्वमुखें अग्नी सोडी। तयाची हे जोडी संत जना॥२॥ ज्ञानेश्वर म्हणे आत्मयातें जाणे। सुनिळ अनुभवणें निवृत्ती पाहा॥३॥

८९२. ऐका हा शेवट अभंगमाळा झाली। तूर्या हेच आली प्रत्यया गा॥१॥ तूर्या तेचि उन्मनी क्षर तें अक्षर। निर्गुण साकार ऐसें देखा॥२॥ देह तें विदेह महाकारण ब्रह्म। हें निश्चयाचें वर्म ऐसें जाणा॥३॥ कनक तेंची नग समुद्र तरंगीं। देह हा सर्वांगीं ब्रह्म जाणा॥४॥ अभंगा शेवट जाणे निवृत्ति एक। त्यानें मज देख कृपा केली॥५॥ मूर्खासी हा बोध सांगों नये बापा। अभंग कृत्याचा लेश नसो हातीं॥६॥ ज्ञानदेव म्हणे हें कृत्य हातां नये। माय देऊं नये कोणासही॥७॥

८९३. होय सौरी आतां उघडा घाली माथा। परपुरुषीं रमल्या बाई त्याची पतिव्रता॥१॥ कर्मेवीण सौरी झाले आले संतापाशीं। ज्ञान डौर घेऊनि करीं लिंग देह नाशी॥२॥ रांडव राहूं नका बाई पाहुनि करा वर। तेचि तुम्ही सुखी व्हाल आह्मव मरण बर॥३॥ रांडावा ज्या ज्या मरती बाई त्यासी नाना योनी। स्वामी करूनि सुखी होई खुंटती येणीं जाणीं॥४॥ निवृत्तीप्रसादें ज्ञानदेव बोले। स्वामी करूनी सुखी होई निजानंदीं डोले॥५॥

८९४. कैसे बोटानें दाखवूं तुला। पाहे अनुभव गुरूच्या मुला। नको सोडूं देठीच्यां मुळा। सोडी अंजुळी आपुल्या कुलारे॥१॥ ज्या ठायीं चळना ढळ। विश्व जयाचे सत्तेनें खेळ। अणुरेणु व्यापक सकळ। तेथें चळ ना अचळरे॥२॥ जेथें डोळिया दृष्टि पुरेना। तेथें वृत्तीचें कांही चालेना। तेथें बुद्धीचा रीघ होईना। तेथें मनाची धांव पुरेना गा॥३॥ काय पहाशी तूं भोंवतें। येतां जातां जवळी असते॥ तुझ्या पायाखालीं तुडवतें। तुझ्या डोळ्यामध्यें दिसतें गा॥४॥ ही खुण त्वां ओळखुनी घ्यावी। गुरुपुत्रा जाउनी पुसावी। तो नेऊनी तुला दाखवी। सोय सांगितली ज्ञानदेवी गा॥५॥

८९५. जोहार माय बाप जोहार। मी कृष्णाजी घरंचा पाडेवार। त्याचे घरांतला सर्व कारभार। माझे शिरावर की जी माय बाप॥१॥ कामाजी बाजी हुद्देदार। तेणें रयतेचा केला मार। रयत फार नागविली की जी माय बाप॥२॥ क्रोधाजी बाबा शेखदार झाले। त्याजकडे हुजूरचें काम आलें। तेणें कामाजीचें छळण केलें की जी माय बाप॥३॥ मनाजी बाजीं यानें फितुर केला। तेणें करूनि मोठा बखेडा झाला। गांव सगळा नाशिला की जी मायबाप॥४॥ बुधाजी पाटील कायापूरचे। ममताईचे हाताखालचे। त्यांत जीवाजी भुलले की जी माय बाप॥५॥ या उभयतांचा विचार वागला। त्यामुळें आम्हांस राग आला। बुधाजी आवरी आपल्या पोराला की जी माय बाप॥६॥ सद्गुरूचा मी पाडेवार। निवृत्तीशीं असे माझा

जोहार। ज्ञानदेवा सफळ संसार झाला की जी माय बाप॥७॥

८९६. काय सांगू तूतें बाई। काय सांगू तूतें॥ध्रु०॥ जात होते यमुने पाणिया वातत भेतला सावला। दोईवल तोपी मयुल पुछाची खांद्यावरी कांबला॥१॥ तेणें माझी केली तवाली मग मी तिथुन पलाली। पलतां पलतां घसलून पलली। दोईची घागल फुतली॥२॥ माझे गुलघे फुतले मग मी ललत बथले। तिकुन आले शालंगपानी मला पोताशीं धलिलें॥३॥ मला पोताशीं धलिलें माझें समाधान केलें। निवृत्तीचे कृपें सुख हें ज्ञानदेवा लाधले॥४॥

८९७. मन हें धालें मन हें धालें पूर्ण विठ्ठलचि झालें। अंतरबाह्य रंगुनि गेलें विठ्ठलची॥१। विठ्ठल म्हणतां हरलें पाप पदरीं आलें पुण्य माप। धाला दिनाचा मायबाप विठ्ठलची॥२॥ विठ्ठल जळीं स्थळीं भरला ठाव कोठें नाहीं उरला। आज म्या दृष्टीनें पाहिला विठ्ठलची॥३॥ ऐसा भाव धरुनी मनीं विठ्ठल आणिला निजध्यानीं। अखंड वदो माझी वाणी विठ्ठलची॥४॥ तो हा चंद्रभागे तीरा पुंडलिकें दिधला थारा। बापरखुमादेवीवरा जडले पायीं विठ्ठलची॥५॥

८९८. हरिभक्त संत झाले हो अनेक। त्यामाजी निष्टंक कांही ऐक॥१॥ शुक वामदेव शौनक नारद। अजामेळ प्रह्लाद बिभीषण॥२॥ ध्रुव पराशर व्यास पुंडलिक। अर्जुन वाल्मिक अंबरीष॥३॥ रुक्मांगद भीष्म बगदालभ्यसूत। सिभ्री हनुमंत परिक्षिती॥४॥ कश्यपादि अत्री गौतम वशिष्ठ। भारद्वाज श्रेष्ठ मार्कंडेयो॥५॥ बळी कृपाचार्य इंद्र सूर्य चंद्र। ब्रह्माआदि रुद्र पूर्ण भक्त॥६॥ सर्वांचा एक आहे मी किंकर। म्हणे ज्ञानेश्वर वैष्णवांसी॥७॥

८९९. तूं विटेवरी सखये बाई हो करी कृपा। माझें मन लागो तुझ्या पायीं हो करी कृपा। तूं सावळे सुंदरी हो करी कृपा। लावण्य मनोहरी हो करी कृपा। निजभक्ता करुणा करी हो करी कृपा॥१॥ पंढरपुरीं राहिली। डोळा पाहिली। संतें देखिली। वरूनी विठाई वरूनी विठाई। सच्चिदानंद अंबाबाई हो करी कृपा। उजळकुळ दीपा। बोध करी सोपा। येउनी लवलाही येउनी लवलाही॥ध्रु०॥ तुझा देव्हारा मांडिला हो करी कृपा। चौक आसनीं कळस ठेविला हो करी कृपा। प्रेम चांदवा वर दिधला हो करी कृपा। ज्ञान गादी दिली बैसावया हो करी कृपा। वरी बैसविली आदी माया हो करी कृपा। काम क्रोध मदमत्सर दंभ अहंकार। त्याचे बळ फार। सर्व सुख देई सर्व सुख देई॥२॥ शुक सनकादिक गोंधळी हो करी कृपा। नाचताती प्रेम कल्लोळीहो करी कृपा। उदे उदे शब्द आरोळी हो करी कृपा। पुढें पुंडलिक दिवटा हो करी कृपा। त्याने मार्ग दाविला निटा हो करी कृपा। आई दाविली मूळपीठा हो करी कृपा। बापरखुमादेवीवरू। सुख सागरु। त्याला नमस्कारु। सर्व सुख देई सर्व सुख देई॥३॥

९००. भगवद्गीता हेचि थोर। येणें चुके जन्म वेरझार। वैकुंठवासी निरंतर। भवसागर उतरेल॥१॥ राम नाम सार धरी। तूंचि तारक सृष्टीवरी। त्याचेनि संगें निरंतर। भवसागर तरसील॥२॥ व्यर्थ प्रंपच टवाळ। येणें साधिली काळवेळ। नाम तुझें जन्म मूळ। हें केवळ परिसावें॥३॥ त्रिकाळ साधिलें नाम। दूर होतील विघ्न कर्म। साधितील धर्म नेम। हे पुरुषोत्तम बोलियले॥४॥ तंव अनुष्ठान सुगम। साधिले सर्व सिद्धि नेम। क्षेम असेल सर्व धर्म। सर्वकाळ फळले॥५॥ ज्ञानदेव कर्म अकर्ता। पावन झाला श्रीअनंता। सुखदुःखाचा हरी भोक्ता। सर्वकाळ आम्हा आला॥६॥

९०१. व्यर्थ प्रपंच टवाळ। सार एक निर्मळ कृपा करी हरि कृपाळ। दीन दयाळ हरी माझा॥१॥ क्षमा शांति दया रूपी। तोचि तरेल स्वरूपीं। नामें तरलें महापापी। ऐसा ब्रह्मा

बोलिला ॥ २ ॥ गीतेमाजी अर्जुनाशीं हरी सांगे साक्षी जैशी। जो रत होतसे हरिभक्तीशी। तो नेमेशी तरेल ॥ ३ ॥ ज्ञानदेव भाष्यें केले। गीता ज्ञान विस्तारलें। भक्ति भाग्यवंती घेतलें। भाष्येंकरूनी गीतेच्या ॥ ४ ॥

१०२. गुरु हा संतकुळीचा राजा। गुरु हा प्राणविसांवा माझा। गुरूवीण देव दुजा। पाहातां नाहीं त्रिलोकीं ॥ १ ॥ गुरु हा सुखाचा सागर। गुरु हा प्रेमाचा आगर। गुरु हा धैर्याचा डोंगर। कदाकाळी डळमळीना ॥ २ ॥ गुरु वैराग्याचें मूळ। गुरु हा परब्रह्म केवळ। गुरु सोडवी तात्काळ। गांठ लिंगदेहाची ॥ ३ ॥ गुरु हा साधकाशीं साह्य। गुरु हा भक्तालागी माय। गुरु हा कामधेनु गाय। भक्ताघरीं दुभतसे ॥ ४ ॥ गुरु घाली ज्ञानांजन। गुरु दाखवी निज धन। गुरु सौभाग्य देउन। साधुबोध नांदवी ॥ ५ ॥ गुरु मुक्तीचें मंडन। गुरु दुष्टाचें दंडन। गुरु पापाचें खंडन। नानापरी वारितसे ॥ ६ ॥ काया काशी गुरु उपदेशी। तारक मंत्र दिला आम्हाशीं। बापरखुमादेवीवराशी। ध्यान मानसी लागलें ॥ ७ ॥

१०३. कानोबा तुझी घोंगडी चांगली आम्हांसी कां दिली वांगली ॥ ध्रु० ॥ स्वगत सच्चिदानंदें मिळोनि शुद्धसत्व गुण विणलीरे। षड्गुण गोंडे रत्नजडित तुज श्याम सुंदरा शोभलीरे ॥ १ ॥ काम कर्म अविद्या त्रिगुण पंचभुतांनी विणलीरे। रक्त रेत दुर्गंधी जंतु नरक मुतानें भरलीरे ॥ २ ॥ षड्विकार षड्वैरी मिळोनि तापत्रयानें विणलीरे। नवाठायीं फाटुनी गेली ती त्वां आम्हांसि दिधलीरे ॥ ३ ॥ ऋषि मुनि ध्यातां मुखि नाम गातां संदेह वृत्ती विरलीरे। बापरखुमादेविवर विठ्ठले त्वत्पादी वृत्ति मुरलीरे ॥ ४ ॥

श्रीज्ञानेश्वरांची गाथा समाप्त

## ॥ पुंडलीक वरदे हरिविठ्ठल ॥

